उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

अक्तूबर-दिसम्बर, 2015 **निर्णय-सूची**

	पृष्ठ संख्या
अनिता देवी और अन्य बनाम शिशु पाल और अन्य	220
अमानी (श्रीमती) बनाम मदन लाल	197
अविनाश चौहान बनाम पी. सी. धीमान और अन्य	258
ओरियन्टल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम संदीप मलिक और 7 अन्य	175
चामुण्डा (श्रीमती) बनाम लक्ष्मी (श्रीमती)	180
चौबे राम बनाम चन्दर काला और अन्य	229
नर्बदा देवी (श्रीमती) बनाम श्रीमती कमला देवी	217
नेशनल इंश्योरेंस कम्पनी लिमिटेड और अन्य बनाम कान्ता देवी और अन्य	224
न्यू इंडिया एश्योरेंस कम्पनी लिमिटेड और अन्य बनाम त्रिपता देवी और अन्य	213
न्यू इंडिया एश्योरेंस कम्पनी लिमिटेड और अन्य बनाम मोहिन्दर सिंह और अन्य (देखिए – पृष्ठ संख्या 213)	
पुष्पा देवी बनाम ओम प्रकाश	314
रीमा (श्रीमती) बनाम श्री भूपेन्दर सिंह	271
विजय कांत मीणा बनाम राजस्थान राज्य और एक अन्य	206
सत्या देवी और एक अन्य बनाम करतार चन्द और अन्य	243
सुमन कुमार शर्मा और अन्य बनाम श्रीमती सलोचना और अन्य	300
संसद् के अधिनियम	
योजना और वास्तुकला विद्यालय अधिनियम, 2014	
का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	1–27

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

प्रधान संपादक

संपादक

मिथिलेश चन्द्र पांडेय

कमलाकान्त

महत्वपूर्ण निर्णय

न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 — धारा 6 — अनुकम्पा के आधार पर नियुक्ति — नियुक्ति करते समय आवेदक की कुटुम्ब आय में उसकी माता को मिलने वाली पेंशन को भी जोड़ा जाना — ऐसी संगणना करना विधिविरुद्ध होना — ऐसे आदेश का अनुपालन नहीं करना — अवमानना — यदि नियुक्ति प्राधिकारी द्वारा आवेदक के पक्ष में पारित आदेश का सम्यक् अनुपालन नहीं किया जाता है तो वह न्यायालय की अवमानना करता है और इसके लिए उसे दंडित करना सर्वथा युक्तियुक्त और विधिसम्मत होता है।

अविनाश चौहान बनाम पी. सी. धीमान और अन्य 258

संसद् के अधिनियम

योजना और वास्तुकला विद्यालय अधिनियम, **2014** का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ (1) – (27)

पृष्ट संख्या 175 – 327

(2015) 2 सि. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन विधायी विभाग विधि और न्याय मंत्रालय भारत सरकार उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका — अक्तूबर-दिसम्बर, 2015 (संयुक्तांक) (पृष्ठ संख्या 175 — 327)

संपादक-मंडल

डा. जी. नारायण राजू, सचिव, विधायी विभाग

डा. एन. आर. बट्टू, संयुक्त सचिव एवं विधायी परामर्शी, विधायी विभाग

डा. बी. एन. मिण, सेवानिवृत्त अपर विधि सलाहकार, विधि मंत्रालय

प्रो. डा. वैभव गोयल, सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ विधि विभाग

डा. सुरेन्द्र कुमार शर्मा, प्रिन्सिपल, विधि विभाग, डी आई आर डी, गुरु गोविंद सिंह इन्द्रप्रस्थ विश्वविद्यालय

डा. ऋषिपाल सिंह, सेवानिवृत्त संयुक्त सचिव एवं विधायी परामर्शी, राजभाषा खंड श्री लालजी प्रसाद, सेवानिवृत्त प्रधान संपादक, वि.सा.प्र.

श्री कृष्ण गोपाल अग्रवाल, सेवानिवृत्त संपादक, वि.सा.प्र.

श्री अनूप कुमार वार्ष्णेय, प्रधान संपादक

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय, संपादक

श्री विनोद कुमार आर्य, संपादक

श्री कमला कान्त, संपादक

सहायक संपादक : सर्वश्री अविनाश शुक्ला, असलम खान, पुण्डरीक

शर्मा और जगमाल सिंह

उप-संपादक : सर्वश्री महीपाल सिंह और जसवन्त सिंह

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 36

वार्षिक : ₹ 135

© 2015 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रकाशन और विक्रय प्रबंधक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय (विधायी विभाग), भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली–110001 द्वारा प्रकाशित तथा...... द्वारा मुद्रित ।

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं – उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका. उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिकाओं में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः चयनित सिविल और दांडिक निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । इन पत्रिकाओं को और अधिक आर्काक बनाने के लिए इनमें जनवरी, 2010 के अंक से महत्वपूर्ण केन्द्रीय अधिनियमों का प्राधिकृत हिन्दी पाठ पाठकों की सुविधा के लिए शृंखलाबद्ध रूप से प्रकाशित किया जा रहा है । तीनों निर्णय पत्रिकाओं की वार्षिक कीमत केवल ₹ 495/- है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 225/- है, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 135/- है और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 135/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें।

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

दूरभाा : 011-23387589, 23385259, 23382105

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रय के लिए उपलब्ध विधि पाठ्य पुस्तकों की सूची

	पुस्तक का नाम	लेखक	पृष्ट सं.	कीमत (₹)
1.	भारत का विधिक इतिहास	श्री सुरेन्द्र मधुकर	410	30.00
2.	माल विक्रय और परक्राम्य लिखत विधि	डा. एन. पी. परांजपे	371	40.00
3.	वाणिज्य विधि	डा. आर. एल. भट्ट	630	108.00
4.	अपकृत्य विधि के सिद्धान्त (तृतीय	श्री शर्मन लाल	357	40.00
	संस्करण)	अग्रवाल		
5.	अंतर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय	डा. एस. सी. खरे	273	115.00
	(द्वितीय संस्करण)			
6.	मानव अधिकार	डा. शिवदत्त शर्मा	340	120.00
7.	दण्ड प्रक्रिया संहिता	न्या. महावीर सिंह	840	200.00

पुस्तकों की सूची जिन पर छूट देने की स्वीकृति प्राप्त की गई है।

	पुस्तक का नाम	लेखक	पृष्ठ सं.	मूल दर	संशोधित
	3		2	້(₹)	दर (₹)
1.	संविदा विधि (द्वितीय संस्करण)	डा. रामगोपाल चतुर्वेदी	552	275.00	137.00
2.	श्रम विधि (तृतीय संस्करण)	श्री गोपी कृष्ण अरोड़ा	658	452.00	226.00
3.	चिकित्सा न्यायशास्त्र और विष विज्ञान (तृतीय संस्करण)	डा. सी. के. पारिख अनुवादक डा. एन. के. पटौरिया	969	293.00	146.00
4.	आधुनिक पारिवारिक विधि	श्री राम शरण माथुर	767	429.00	214.00
5.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय)	संकलन संपादन – ब्रह्मदेव चौबे	209	225.00	112.00
6.	हिन्दू विधि (द्वितीय संस्करण)	डा. रवीन्द्र नाथ	617	425.00	212.00
7.	भारतीय दंड संहिता	डा. रवीन्द्र नाथ	696	741.00	370.00
8.	भारतीय भागीदारी अधिनियम (द्वितीय संस्करण)	श्री माधव प्रसाद वशिष्ठ	272	165.00	82.00
9.	प्रशासनिक विधि (तृतीय संस्करण)	डा. कैलाश चन्द्र जोशी	635	200.00	100.00
10.	विधिक उपचार (द्वितीय संस्करण)	डा. एस. के. कपूर	414	311.00	155.00
11.	विधि शास्त्र	डा. शिवदत्त शर्मा	501	580.00	377.00

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग) विधि और न्याय मंत्रालय भारत सरकार भारतीय विधि संस्थान भवन, भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 (2005 का 43)

— धारा 2(च)3, 12 — द्वितीय पत्नी का भरण-पोषण — द्वितीय पत्नी का आधा जीवन असहाय रह जाना — जबिक वह अपने मृतक पित के साथ अंत समय तक रही, उसके मुसीबत में उसका साथ दिया और विवाह से बच्चे हुए तथा उसे समाज द्वारा पत्नी के रूप में मान्यता दी गई तब द्वितीय पत्नी को कानून द्वारा पत्नी के विधिसम्मत प्रास्थिति से वंचित किए जाने के विचार से वह निराश्रित नहीं हो जाएगी और वह अपने पक्ष में वितरित किए गए मृत्यु फायदों से अपने भविष्य के लिए भरण-पोषण को पाने की हकदार होगी।

चामुण्डा (श्रीमती) बनाम लक्ष्मी (श्रीमती) न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971

— धारा 6 — अनुकम्पा के आधार पर नियुक्ति — नियुक्ति करते समय आवेदक की कुटुम्ब आय में उसकी माता को मिलने वाली पेंशन को भी जोड़ा जाना — ऐसी संगणना करना विधिविरुद्ध होना — ऐसे आदेश का अनुपालन नहीं करना — अवमानना — यदि नियुक्ति प्राधिकारी द्वारा आवेदक के पक्ष में पारित आदेश का सम्यक् अनुपालन नहीं किया जाता है तो वह न्यायालय की अवमानना करता है और इसके लिए उसे दंडित करना सर्वथा युक्तियुक्त और विधिसम्मत होता है ।

अविनाश चौहान बनाम पी. सी. धीमान और अन्य मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59)

— धारा 173 — दुर्घटना — अपराध करने वाले यान के पास विधिमान्य फिटनेस प्रमाणपत्र नहीं होना — प्रतिकर के लिए दायित्व — बीमा कंपनी द्वारा अपने दायित्व से इनकार करना — 180

पृष्ठ संख्या

बीमा कंपनी, यान के स्वामी, बीमाकृत के किसी दोष के कारण प्रतिकर संदाय करने के अपने दायित्व से बच नहीं सकती है। तथापि, वह संदत्त प्रतिकर को बीमाकृत-यान के स्वामी से वसूल सकती है।	
न्यू इंडिया एश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड और अन्य बनाम त्रिपता देवी और अन्य	213
— धारा 173 — दुर्घटना — प्रतिकर के लिए दावा — बीमा कंपनी द्वारा अपने दायित्व से इनकार — बीमा कंपनी बीमाकृत के किसी दोष के कारण अपने दायित्व से भले ही इनकार करे, यदि वह प्रतिकर की धनराशि का संदाय करती है तो वह बीमा पालिसी की शर्तों के भंग के आधार पर बीमाकृत से ऐसी धनराशि वसूल सकती है।	
नर्बदा देवी (श्रीमती) बनाम श्रीमती कमला देवी	217
— धारा 166 तथा 173 — अपील — चालक के पास तत्समय वैध चालन अनुज्ञप्ति नहीं होना — यान दुर्घटना — प्रतिकर के लिए दावा — बीमा कंपनी द्वारा अपने दायित्व से इनकार करना — बीमा कंपनी बीमाकृत के किसी दोष के कारण प्रतिकर संदाय करने के अपने दायित्व से बच नहीं सकती तथापि, वह संदत्त प्रतिकर बीमा पालिसी की शर्तों के भंग के आधार पर बीमाकृत राशि वसूल सकती है ।	
नेशनल इंश्योरेंस कम्पनी लिमिटेड और अन्य बनाम कान्ता देवी और अन्य	224
— धारा 173 — दुर्घटना — अधिनिर्णीत प्रतिकारात्मक अपर्याप्त होना — चुनौती — जहां प्रतिकर की रकम, पीड़ित की प्रास्थिति, आश्रितों की संख्या, जीविकोपार्जन के साधन और उसकी मासिक आय को ध्यान में रखे बिना अधिनिर्णीत किया जाता है तो उसे समुचित और युक्तियुक्त नहीं कहा जा सकता है।	
अनिता देवी और अन्य बनाम शिशु पाल और अन्य	220

— धारा 173, 149 और 163-क — यान दुर्घटना — प्रतिकर के लिए दावा — अंशदायी उपेक्षा — चालक के पास विधिमान्य अनुज्ञप्ति न होना — विचारण न्यायालय द्वारा 4,72,000/- रुपए प्रतिकर अधिनिर्णीत किया जाना — जहां निचले न्यायालय ने अभिलेख पर उपस्थित अभिलेखों और मौजूदा सभी परिस्थितियों तथा तथ्यों के साथ ही विधि की अपेक्षाओं को ध्यान में रखते हुए, प्रतिकर अधिनिर्णीत किया है वहां अपील न्यायालय द्वारा ऐसे अधिनिर्णय में हस्तक्षेप करने की गुंजाइश नहीं रह जाती है जहां तक कि घोर अन्याय होना साबित नहीं किया जाता है।

ओरियन्टल इश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम संदीप मलिक और 7 अन्य

संविधान, 1950

— अनुच्छेद 226 — रिट — राजस्थान सरकार स्वास्थ्य विभाग में विभिन्न पदों के लिए विज्ञापन — रिक्तियों का विज्ञापन करते समय जनजातीय उप-योजना और गैर-जनजातीय उप-योजना क्षेत्रों में आरक्षित सीटों की संख्या का उल्लेख न किया जाना — नियमों के अनुसार गैर-जनजातीय उप-योजना क्षेत्र में मेधावी अभ्यर्थियों की नियुक्ति — जहां विज्ञापन में आरक्षित सीटों का पृथक् रूप से उल्लेख नहीं किया गया हो वहां यदि मेधावी उम्मीदवार को उसकी इच्छानुसार तैनाती की जाती है तो यह विधिमान्य और समुचित होगा।

विजय कांत मीणा बनाम राजस्थान राज्य और एक अन्य

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5)

धारा 100 [सपिठत सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम,
 1882 की धारा 122 तथा रिजस्ट्रीकरण अधिनियम,
 1908

175

की धारा 17] — द्वितीय अपील — स्थावर सम्पत्ति का दान रिजस्ट्रीकृत नहीं हो पाना — कपटपूर्ण तरीके से उसी सम्पत्ति का विक्रय विलेख रिजस्ट्री कराना — विक्रय विलेख रद्द किया जाना — यदि किसी युक्तियुक्त कारण से, स्थावर सम्पत्ति के दान विलेख की रिजस्ट्री नहीं हो पाती है और तत्काल पश्चात् ही कपटपूर्वक उसी सम्पत्ति का विक्रय विलेख की रिजस्ट्री करवा ली जाती है ऐसा विक्रय विलेख शून्य और अविधिमान्य होगा ।

सत्या देवी और एक अन्य बनाम करतार चन्द और अन्य

— धारा 100, 151 तथा आदेश 18 का नियम 2(4) और 17(क) — द्वितीय अपील — पक्षकारों के बीच समझौता — समझौते की अवहेलना करते हुए गलत शपथपत्र फाइल करना — शपथपत्र खारिज होना — यदि मूल स्वामी द्वारा एक समझौते के अधीन वाद भूमि किराए पर दी जाती है और किराएदार समझौते की अवहेलना करते हुए, उक्त भूमि का विक्रय कर देता है तो ऐसा विक्रय विलेख अकृत और शून्य होगा ।

चौबे राम बनाम चन्दर काला और अन्य

— धारा 115, 151, 152 और 153 — पुनरीक्षण — पारित डिक्री और निर्णय में संशोधन — आकस्मिक भूल या लिपिकीय त्रुटि — न्यायालय का आशय — यदि न्यायालय ऐसी कोई डिक्री और निर्णय पारित कर देता है जिसे पारित करने का उसका आशय नहीं था और जो आकस्मिक भूल या लिपिकीय त्रुटि के कारण हुआ है तो न्यायालय ऐसी आकस्मिक भूल या लिपिकीय त्रुटि में ऐसे संशोधन कर सकता है जो उसके वास्तविक आशय की अभिव्यक्ति को व्यक्त करता है।

सुमन कुमार शर्मा और अन्य बनाम श्रीमती सलोचना और अन्य

243

229

हिन्दू दत्तक और भरण-पोषण अधिनियम, 1956 (1956 का 78)

— धारा 16 — दत्तक ग्रहण का रद्दकरण — जहां दत्तक ग्रहण, ऐसे सुसंगत साक्षी जो विचारण न्यायालय के समक्ष उपस्थित हुए, की मौजूदगी में धार्मिक रीति-रिवाज के साथ किया गया और दत्तक ग्रहण के तथ्य को और ठोस बनाने के लिए सम्यक् रूप से रिजस्ट्रीकृत किया गया वहां अभिकथित दुर्व्यपदेशन या कपट के आधार पर दत्तक ग्रहण को अस्वीकार किए जाने का आवेदन आधारहीन और अन्यायसंगत है।

अमानी (श्रीमती) बनाम मदन लाल हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25)

— धारा 5(i) — द्वितीय विवाह — विधिमान्यता — प्रथम विवाह का द्वितीय विवाह के समय पर विद्यमान होने का अभिकथन किया जाना — यदि अभिलेख से यह दर्शित हुआ है कि पुत्री का जन्म मृतक-पित के द्वितीय विवाह से पूर्व प्रथम विवाह से हुआ था और मृतक द्वारा रिजस्ट्रीकृत विल अपने मृत्यु के एक मास पूर्व निष्पादित की गई है तो ऐसी विल स्वीकार नहीं की जाएगी जिसे साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 68 की अध्यपेक्षा के अनुसार साबित किया जाना था।

चामुण्डा (श्रीमती) बनाम लक्ष्मी (श्रीमती)

— धारा 5(i) — द्वितीय विवाह — जहां अभिलेख पर उपलब्ध पर्याप्त साक्ष्य से यह इंगित होता कि मृतक के साथ विवाहित दूसरी पत्नी अपने पति के साथ अंत समय तक रहती है तब भी द्वितीय विवाह विधिमान्य नहीं है।

चामुण्डा (श्रीमती) बनाम लक्ष्मी (श्रीमती)

— धारा 13(1)(i-क), 13(1)(i-ख) और 28 — क्रूरता, अभित्यजन — आशय — विवाह-विच्छेद — यदि अभिलेख पर यह साबित कर दिया जाता है कि पति-पत्नी

197

180

में से किसी एक का आचरण इतना क्रूर है कि दूसरे का उसके साथ रहना असम्भाव्य हो जाता है तभी पीड़ित पक्षकार को विवाह-विच्छेद की डिक्री मंजूर की जा सकती है अन्यथा नहीं ।

रीमा (श्रीमती) बनाम श्री भूपेन्दर सिंह

271

— धारा 13 — पत्नी द्वारा पित के साथ ही उसके कुटुम्ब सदस्यों को दांडिक मामले में फंसाने की धमकी देना, सास की प्रायः पिटाई करना तथा बिना किसी युक्तियुक्त कारण के पित का गृह छोड़ देना — क्रूरता — अभित्यजन — विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित होना — यदि अभिलेख पर यह साबित कर दिया जाता है कि पत्नी, पित के साथ ही उसके कुटुम्ब सदस्यों को दांडिक मामले में फंसाने की धमकी देती है, सास की प्रायः पिटाई करती है और बिना किसी युक्तियुक्त कारण के पित का गृह छोड़ देती है तो यदि इन परिस्थितियों में विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित की जाती है तो वह युक्तियुक्त और विधिमान्य होगी क्योंकि इसके लिए अभिलेख पर पर्याप्त कारण थे।

पुष्पा देवी बनाम ओम प्रकाश

ओरियन्टल इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड

बनाम

संदीप मलिक और 7 अन्य

तारीख 7 जुलाई, 2014 न्यायमुर्ति रितु राज अवस्थी

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) — धारा 173, 149 और 163-क — यान दुर्घटना — प्रतिकर के लिए दावा — अंशदायी उपेक्षा — चालक के पास विधिमान्य अनुज्ञप्ति न होना — विचारण न्यायालय द्वारा 4,72,000/-रुपए प्रतिकर अधिनिर्णीत किया जाना — जहां निचले न्यायालय ने अभिलेख पर उपस्थित अभिलेखों और मौजूदा सभी परिस्थितियों तथा तथ्यों के साथ ही विधि की अपेक्षाओं को ध्यान में रखते हुए, प्रतिकर अधिनिर्णीत किया है वहां अपील न्यायालय द्वारा ऐसे अधिनिर्णय में हस्तक्षेप करने की गुंजाइश नहीं रह जाती है जहां तक कि घोर अन्याय होना साबित नहीं किया जाता है।

वर्तमान मामले में, अपीलार्थी-बीमा कंपनी की ओर से उपरोक्त वर्णित सिविल विविध अपील एवं दावेदारों की ओर से उपरोक्त वर्णित प्रति-आक्षेप मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण, नीम का थाना, जिला सीकर द्वारा पारित निर्णय तारीख 1 फरवरी, 2011 के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है, जिसके द्वारा दावेदारों को 4,72,000/- रुपए क्षतिपूर्ति राशि दिलाए जाने का आदेश दिया गया था । अपील और प्रति-आक्षेप को खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित — चूंकि अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल की प्रथम दलील यह है कि विद्वान् अधिकरण ने मृतक की आय संगणित करने में समग्र रूप से गलती की है और संबंध नोशनल आय जोड़ने में गलती की है, विद्वान् अधिकरण ने विवाद्यक संख्या 6 को विनिश्चित करते हुए मृतक अर्थात् ब्रज पाल सिंह और उसकी कृषक आय को अनुज्ञेय पेंशन को विचार में लिया है जिसका 5,000/- रुपए प्रतिमास का दावा किया है।

विद्वान् काउंसेल ने यह निष्कर्ष निकाला है कि मृतक की कृषक आय 3,000/- रुपए प्रतिमास अर्थात 36,000/- रुपए थी जिसे 5,000/- रुपए प्रतिमास बताया गया है । विद्वान् अधिकरण ने मृतक की आय गुणक करते हुए प्रतिकर को मंजूर करने के प्रयोजन के लिए मृतक की विधवा की पेंशन की हानि के लिए 3,000/- रुपए प्रतिमास की कृषक आय मानते हुए सही प्रकार से जोड़ा है । यह प्रतीत होता है कि "नोशनल" शब्द 3,000/- रुपए प्रतिमास के रूप में मृतक की कृषक आय का निर्धारण करते हुए विद्वान अधिकरण द्वारा सही प्रकार से प्रयुक्त नहीं किया है वैसे ही मैंने इस संबंध में अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई दलील में कोई बल नहीं पाया है । जहां तक अपीलार्थी की ओर से विद्वान काउंसेल की दलील है कि इसमें दुर्घटना में शामिल वाहनों के चालकों ने दोनों भाग पर योगदायी उपेक्षा की थी । यह अभिलेख पर नहीं रखा गया है कि इसमें मोटरसाइकिल जिसका रजिस्ट्रेशन सं. युपी एफ/8254 को चलाने वाले मृतक के भाग पर कोई उपेक्षा थी, केवल, दावेदारों के पक्षकथन से यह स्पष्ट होता है जिसका पी. डब्ल्यू. 1/श्री संदीप मलिक के अभिकथन द्वारा समर्थन किया गया है कि मृतक उक्त मोटरसाइकिल को तावली गांव की ओर से आ रहा था उसे ट्रेक्टर जिसका रजिस्ट्रेशन संख्या यूपी 19/6644 ने टक्कर मारी जिसको उसके चालक द्वारा उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाया जा रहा था । उक्त दुर्घटना के कारण मृतक को गंभीर क्षतियां पहुंचीं और उसकी घटनास्थल पर ही मृत्यु हो गई, उसी प्रकार यहां इस संबंध में अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई दलीलों में कोई बल नहीं है । अब, मैं अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई अंतिम दलील पर आता हूं कि उक्त ट्रेक्टर का दुर्घटना घटित होने के समय वाणिज्यिक प्रयोजन के लिए प्रयोग किया जा रहा था और इसमें बीमा पालिसी के निबंधनों का उल्लंघन हुआ है और बीमा कंपनी को प्रतिकर का संदाय देने के लिए दायी नहीं ठहराया जा सकता है । इस मामले को स्वीकृत किया जाता है कि उक्त ट्रेक्टर दुर्घटना घटित होने के समय कृषक माल अर्थात गन्ने से भरा था । अपीलार्थी का विद्वान काउंसेल यह सिद्ध करने में असफल रहा है कि दुर्घटना घटित होने के समय ट्रेक्टर को वाणिज्यिक प्रयोजन के लिए प्रयोग में लाया जा रहा था । केवल यह दलील दी गई है कि डी. डब्ल्यू. 1/श्री संजय कुमार डींघरा के अभिकथन में यह आया है कि ट्रेक्टर वाणिज्यिक प्रयोजन के लिए प्रयोग में लाया जा रहा था । यह भी दलील दी है कि रजनीश नाम के चालक की पर्ची संख्या 10061 में उल्लेख था । श्री संजय कुमार डींघरा डी. डब्ल्यू. 1 का अभिकथन यह

दर्शाने के लिए दस्तावेजी साक्ष्य का समर्थन नहीं करता है कि यान दुर्घटना घटित होने के समय वाणिज्यिक प्रयोजन के लिए प्रयोग में लाया जा रहा था । चालक के नाम की पर्ची से मात्र पता लगाने से आरोप सिद्ध करने की कोई रीति नहीं है कि यान वाणिज्यिक प्रयोजन के लिए प्रयोग में लाया जा रहा था । मैं इस संबंध में विद्वान् अधिकरण के निष्कर्ष को उलटा करने हेतु कोई सिद्ध दोष नहीं पाता हूं । (पैरा 5, 6, 7 और 8)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2014 की प्रथम अपील आदेश संख्या 1907.

मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन अपीलें ।

अपीलार्थी की ओर से

श्री अनुपमा शुक्ला

प्रत्यर्थियों की ओर से

_

न्यायमूर्ति रितु राज अवस्थी – पक्षकारों को सुना गया ।

- 2. यह प्रथम अपील 2013 की मोटर दुर्घटना दावा याचिका संख्या 24 (संदीप मलिक और अन्य बनाम वीर सिंह और अन्य) में तारीख 13 मार्च, 2014 को पारित निर्णय और अधिनिर्णय के विरुद्ध मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन फाइल की गई है।
- 3. अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि विद्वान् अधिकरण ने प्रतिकर देने के प्रयोजन के लिए मृतक की संगणित आय को 3,000/- रुपए प्रतिमास के रूप में नोशनल आय निर्धारित करके जोड़ने में समग्र रूप से गलती की है। यह भी दलील दी है कि दावेदारों के स्वयं के पक्षकथन के अनुसार इन यानों में जिनके रिजस्ट्रेशन संख्या यूपी 19/6644 (ट्रेक्टर) और यूपी एफ/8254 (मोटरसाइकिल) के बीच सीधी टक्कर हुई थी। इसमें वाहनों के दोनों चालक, कथित दुर्घटना में उपेक्षा के भागीदार थे। विद्वान् काउंसेल ने ट्रेक्टर के चालक भाग पर उपेक्षा निर्धारित करने में गलती की है। यह भी दलील दी है कि दुर्घटना में शामिल ट्रेक्टर गन्ने से भरा था जिसे वाणिज्यिक प्रयोजन के लिए ले जाया जा रहा था और उसी प्रकार अपीलार्थी ट्रेक्टर बीमाकर्ता होने के नाते प्रतिकर का संदाय देने का दायी नहीं है।
- 4. मैंने अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई दलीलों पर विचार किया और अभिलेख का परिशीलन किया है।
 - 5. चूंकि अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल की प्रथम दलील यह है कि

विद्वान् अधिकरण ने मृतक की आय संगणित करने में समग्र रूप से गलती की है और संबंध नोशनल आय जोड़ने में गलती की है, विद्वान् अधिकरण ने विवाद्यक संख्या 6 को विनिश्चित करते हुए मृतक अर्थात् ब्रज पाल सिंह और उसकी कृषक आय को अनुज्ञेय पेंशन को विचार में लिया है जिसका 5,000/- रुपए प्रतिमास का दावा किया है । विद्वान् काउंसेल ने यह निष्कर्ष निकाला है कि मृतक की कृषक आय 3,000/- रुपए प्रतिमास अर्थात् 36,000/- रुपए थी जिसे 5,000/- रुपए प्रतिमास बताया गया है । विद्वान् अधिकरण ने मृतक की आय गुणक करते हुए प्रतिकर को मंजूर करने के प्रयोजन के लिए मृतक की विधवा की पेंशन की हानि के लिए 3,000/- रुपए प्रतिमास की कृषक आय मानते हुए सही प्रकार से जोड़ा है । यह प्रतीत होता है कि "नोशनल" शब्द 3,000/- रुपए प्रतिमास के रूप में मृतक की कृषक आय का निर्धारण करते हुए विद्वान् अधिकरण द्वारा सही प्रकार से प्रयुक्त नहीं किया है वैसे ही मैंने इस संबंध में अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई दलील में कोई बल नहीं पाया है ।

- 6. जहां तक अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल की दलील है कि इसमें दुर्घटना में शामिल वाहनों के चालकों ने दोनों भाग पर योगदायी उपेक्षा की थी । यह अभिलेख पर नहीं रखा गया है कि इसमें मोटरसाइकिल जिसका रजिस्ट्रेशन सं. यूपी एफ/8254 को चलाने वाले मृतक के भाग पर कोई उपेक्षा थी, केवल, दावेदारों के पक्षकथन से यह स्पष्ट होता है जिसका पी. डब्ल्यू. 1/श्री संदीप मिलक के अभिकथन द्वारा समर्थन किया गया है कि मृतक उक्त मोटरसाइकिल को तावली गांव की ओर से आ रहा था उसे ट्रेक्टर जिसका रजिस्ट्रेशन संख्या यूपी 19/6644 ने टक्कर मारी जिसको उसके चालक द्वारा उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाया जा रहा था । उक्त दुर्घटना के कारण मृतक को गंभीर क्षतियां पहुंचीं और उसकी घटनास्थल पर ही मृत्यु हो गई, उसी प्रकार यहां इस संबंध में अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई दलीलों में कोई बल नहीं है ।
- 7. अब, मैं अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई अंतिम दलील पर आता हूं कि उक्त ट्रेक्टर का दुर्घटना घटित होने के समय वाणिज्यिक प्रयोजन के लिए प्रयोग किया जा रहा था और इसमें बीमा पालिसी के निबंधनों का उल्लंघन हुआ है और बीमा कंपनी को प्रतिकर का संदाय देने के लिए दायी नहीं ठहराया जा सकता है । इस मामले को स्वीकृत किया जाता है कि उक्त ट्रेक्टर दुर्घटना घटित होने के समय कृषक माल अर्थात्

गन्ने से भरा था ।

- 8. अपीलार्थी का विद्वान् काउंसेल यह सिद्ध करने में असफल रहा है कि दुर्घटना घटित होने के समय ट्रेक्टर को वाणिज्यिक प्रयोजन के लिए प्रयोग में लाया जा रहा था। केवल यह दलील दी गई है कि डी. डब्ल्यू. 1/श्री संजय कुमार डींघरा के अभिकथन में यह आया है कि ट्रेक्टर वाणिज्यिक प्रयोजन के लिए प्रयोग में लाया जा रहा था। यह भी दलील दी है कि रजनीश नाम के चालक की पर्ची संख्या 10061 में उल्लेख था। श्री संजय कुमार डींघरा डी. डब्ल्यू. 1 का अभिकथन यह दर्शाने के लिए दस्तावेजी साक्ष्य का समर्थन नहीं करता है कि यान दुर्घटना घटित होने के समय वाणिज्यिक प्रयोजन के लिए प्रयोग में लाया जा रहा था। चालक के नाम की पर्ची से मात्र पता लगाने से आरोप सिद्ध करने की कोई रीति नहीं है कि यान वाणिज्यिक प्रयोजन के लिए प्रयोग में लाया जा रहा था। में इस संबंध में विद्वान् अधिकरण के निष्कर्ष को उलटा करने हेतु कोई सिद्ध दोष नहीं पाता हूं।
- 9. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा किसी अन्य बिन्दु पर कोई जोर नहीं दिया गया है ।
- 10. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई दलीलों पर विचार करते हुए मैंने यह नहीं पाया कि मामला ग्रहण करने के लिए उपयुक्त है । आदेश से प्रथम अपील ग्रहण के समय पर खारिज की जाती है । विद्वान् अधिकरण का निर्णय और अधिनिर्णय की इसके द्वारा पुष्टि की जाती है । अपीलार्थी विद्वान् अधिकरण द्वारा जारी किए गए निदेशों का पालन करेगा और तारीख 12 मार्च, 2014 के अधिनिर्णय के निबंधनों में दावेदारों को प्रतिकर का संदाय करेगा । अपील के फाइल करने के समय जमा की गई सांविधिक राशि उस प्रयोजन के लिए विद्वान् अधिकरण को वापिस भेजेगा ।

अपील और प्रति-आक्षेप खारिज की गई ।

मही./क.

चामुण्डा (श्रीमती)

बनाम

लक्ष्मी (श्रीमती)

तारीख 3 दिसंबर, 2014

न्यायमूर्ति एन. के. पाटिल और न्यायमूर्ति (श्रीमती) रथानेकाला

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) — धारा 5(i) — द्वितीय विवाह — विधिमान्यता — प्रथम विवाह का द्वितीय विवाह के समय पर विद्यमान होने का अभिकथन किया जाना — यदि अभिलेख से यह दर्शित हुआ है कि पुत्री का जन्म मृतक-पित के द्वितीय विवाह से पूर्व प्रथम विवाह से हुआ था और मृतक द्वारा रिजस्ट्रीकृत विल अपने मृत्यु के एक मास पूर्व निष्पादित की गई है तो ऐसी विल स्वीकार नहीं की जाएगी जिसे साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 68 की अध्यपेक्षा के अनुसार साबित किया जाना था।

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 — धारा 5(i) — द्वितीय विवाह — जहां अभिलेख पर उपलब्ध पर्याप्त साक्ष्य से यह इंगित होता कि मृतक के साथ विवाहित दूसरी पत्नी अपने पति के साथ अंत समय तक रहती है तब भी द्वितीय विवाह विधिमान्य नहीं है ।

घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 (2005 का 43) — धारा 2(च)3, 12 — द्वितीय पत्नी का भरण-पोषण — द्वितीय पत्नी का आधा जीवन असहाय रह जाना — जबिक वह अपने मृतक पित के साथ अंत समय तक रही, उसके मुसीबत में उसका साथ दिया और विवाह से बच्चे हुए तथा उसे समाज द्वारा पत्नी के रूप में मान्यता दी गई तब द्वितीय पत्नी को कानून द्वारा पत्नी के विधिसम्मत प्रास्थिति से वंचित किए जाने के विचार से वह निराश्रित नहीं हो जाएगी और वह अपने पक्ष में वितरित किए गए मृत्यु फायदों से अपने भविष्य के लिए भरण-पोषण को पाने की हकदार होगी।

संक्षेप में तथ्य इस प्रकार हैं कि वादियों ने यह घोषणा करने के लिए वाद फाइल किया है कि प्रथम वादी विधिक तौर पर वैवाहिक पत्नी है और वादी सं. 2 और 3 मृतक जवारा नायका के बच्चे हैं और जवारा नायका की मृत्यु से उद्भूत मृत्यु के फायदे तय करने के लिए प्रतिवादी सं. 4 और 5 के विरुद्ध निदेश देने की ईप्सा की गई जो (मृतक) पुलिस कांस्टेबल के पद पर तैनात था और के. एस. आर. पी. डार, मैसूर में काम करता था । उनका पक्षकथन यह था कि वे विधिक तौर पर विवाहित पत्नी हैं और जवारा नायका, जिसकी तारीख 7 सितंबर, 2008 को पुलिस कांस्टेबल के पद पर कार्य करते हुए मृत्यू हुई थी और जो टोकन सं. पी. सी. 139, जिला सशस्त्र रिजर्व, ज्योथिनानगर, मैसूर की पहचान से काम कर रहा था । तीसरा वादी अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति पाने का हकदार है कि प्रथम प्रतिवादी ने जवारा नायका की पत्नी होने का दावा किया और प्रतिवादी सं. 2 और 3 ने प्रथम प्रतिवादी और मृतक के बीच विवाह से पैदा हुई संतान होने का दावा किया और सभी फायदे प्राप्त करने का प्रयास किया तथा अनुकंपा आधार पर नियुक्ति पाने का भी प्रयास किया । अपने पति की मृत्यु के पश्चात् उसने प्रत्यर्थी सं. 4 और 5/विभाग को यह समावेदन किया कि पति की मृत्यु के पश्चात् मृत्यु के फायदे प्राप्त करने और कुटुंब पेंशन का संदाय पाने की हकदार है । परन्तू प्रतिवादी सं. 4 और 5 ने प्रतिवादी सं. 1 से 3 के पक्ष में आवेदन पर विचार किया है । प्रतिवादी सं. 1 से 3 ने वाद पर प्रतिवाद किया और उनका पक्षकथन यह था कि प्रथम प्रतिवादी मृतक जवारा नायका की विधिक वैवाहिक पत्नी है और उनका विवाह तारीख 17 जून, 1988 को रीति-रिवाजों के अनुसार सिंधविरा मंदिर, एच. डी. कोटे पर हुआ था और उसने प्रतिवादी सं. 2 और 3 को जन्म दिया था । वादियों ने एक मिथ्या दावा फाइल किया है । उसके पति ने उसे अपनी बीमा पालिसी में उसका नाम निर्दिष्ट किया है और उसने बीमा पालिसी की परिपक्वता मुल्य को प्राप्त किया । उसने तारीख 12 अगस्त, 2008 को रजिस्ट्रीकृत विल का निष्पादन किया है और अपनी सभी संपत्तियां उसको और उसके बच्चों को दी हैं । विल में स्वतः उसने यह अधिसूचित किया है कि द्वितीय प्रतिवादी उसकी मृत्यु की दशा में अनुकंपा आधार पर नियुक्ति प्राप्त करने का हकदार है । उसकी मृत्यु के पश्चात उसने विभाग से वित्तीय सहायता प्राप्त कर अंतिम संस्कार किया था । मृतक कभी भी किसी भी समय वादियों के साथ नहीं रहा था और प्रथम वादी उसकी पत्नी नहीं है । वादियों द्वारा उक्त निर्णय और डिक्री के विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील फाइल की गई । अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित — यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि विचारण न्यायाधीश का भ्रम की स्थिति में होना प्रतीत होता है कि कोई पत्नी विवाह के तत्काल पश्चात्

गर्भधारण करती है । द्वितीय वादी की आयु तारीख 12 सितंबर, 2008 को विचारण न्यायालय के समक्ष वाद फाइल करने की तारीख को वाद हेतुक शीर्षक में 22 वर्ष की आयु वर्णित की गई है । यदि ऐसा है तो उसकी जन्म की तारीख सितंबर, 1986 से पूर्व की होगी । स्थानांतरण प्रमाणपत्र में जन्मतिथि का कालम खाली पड़ा है । तथापि, केवल इस दस्तावेज से यह बात ध्यान में आई है कि अभ्यर्थी ने तारीख 10 अगस्त, 1999 को अन्तिम बार सातवीं की कक्षा में हाजिर हुई थी । यदि यह उपधारणा की जाती है कि उस समय वह तेरह वर्ष की थी और वह सातवीं कक्षा में पहुंची थी तब उसका जन्म 1986 में हुआ है और तृतीय वादी की जन्मतिथि पर अत्यधिक टिप्पणी नहीं की जा सकती जिसे एस. एस. एल. सी. और सातवीं कक्षा के कार्ड में चिह्नों के अनुसार तारीख 8 मई, 1991 दिखाया गया है । तब इससे यह प्रश्न उदभूत होता है कि द्वितीय वादी के साथ प्रथम वादी का मृतक की मृत्यु से पूर्व जन्म हुआ था जो वर्ष 1988 है । यह प्रतिरक्षा भी नहीं दी गई है कि प्रथम वादी का किसी अन्य व्यक्ति से विवाह हुआ है। प्रतिपरीक्षा संयुक्त रूप से की गई थी कि मृतक और प्रथम वादी का विवाह प्रथम प्रतिवादी के साथ मृतक के विवाह से पूर्व नहीं हुआ था । (पैरा 13)

प्रतिरक्षा पक्ष के पास महत्वपूर्ण दस्तावेज अर्थात् रिजस्ट्रीकृत विल, जिसे जवारा नायका द्वारा तारीख 12 अगस्त, 2008 को निष्पादित होना कहा गया है, अर्थात् अपनी मृत्यु से एक माह पूर्व तारीख 7 सितंबर, 2008 । इस दस्तावेज में किए गए प्रकथन का प्रभाव यह है कि निष्पादक जो अत्यधिक कमजोर और मृत्यु के कगार पर था, उसने यह उद्घोषणा की कि उसका प्रथम प्रतिवादी के साथ तारीख 16 जून, 1988 को रस्म रिवाजों के अनुसार विवाह हुआ था और उक्त विवाह से उसकी दो सन्तान थीं और उक्त पत्नी और बच्चों की उसके द्वारा देखभाल की जाती थी और वे उस पर निर्भर हैं । उसने अपनी सारी संपत्तियां और सेवा के फायदे उक्त पत्नी और बच्चों के पक्ष में किए हैं और यह अभिव्यक्त किया है कि उसकी मृत्यु के पश्चात् अनुकंपा आधार पर नियुक्ति सरकार द्वारा उसके पुत्र-द्वितीय प्रतिवादी को दिया जा सकता है । (पैरा 14)

यह उपधारणा की गई है कि मृतक-पित की सत्य विल है। हम ऐसा कोई कारण नहीं पाते हैं कि ऐसे विल को निष्पादित करने में जो भी आशय व्यक्त किया गया है उसकी ऋजुता पर कोई संदेह व्यक्त नहीं करते। यदि प्रतिवादी सं. 1 से 3 उसके केवल पत्नी और बच्चे हैं तब क्या

वसीयत करने वाले के लिए यह आवश्यक था कि वह अपने विवाह की तारीख और स्थान का वर्णन करता और उनके पक्ष में अपने सेवा फायदे लेने और अनुकंपा आधार पर नियुक्ति देने का क्या वर्णन करना चाहिए था ? आधारिक रूप से इस विल की वास्तविकता पक्षकारों के बीच कोई प्रश्न नहीं था । विल तब स्वीकार नहीं की जाती जब इसे साक्ष्य अधिनियम की धारा 68 की अध्यपेक्षा के अनुसार साबित किया जाना था, परन्तु ऐसा नहीं किया गया है और न किसी साक्षी की परीक्षा की गई । इसके अतिरिक्त मृतक द्वारा शासकीय अभिलेखों में की गई घोषणा और प्रथम प्रतिवादी को बीमा पालिसी आदि में नाम निर्दिष्ट करने, ये सभी बातें उसकी स्वयं के दिए गए कथनों के आधार पर हैं । कोई भी महिला अपने मृतक पति की संपदा में से भरण-पोषण के विधवा अधिकारों से वंचित नहीं हो सकती और बच्चे कुटुंब के पैतुक संपत्ति से वंचित नहीं हो सकते हैं और ये बातें वसीयत करने के अभिसाक्ष्य पर निर्भर होती हैं । साक्ष्य में यह संकेत देना पर्याप्त है कि प्रथम प्रतिवादी का मृतक से विवाह हुआ था और उक्त विवाह से प्रतिवादी सं. 2 और 3 हुए थे तथा मृतक के अंतिम सांस लेने तक उसके साथ रहते थे । परन्तु ये तथ्य मृतक के साथ उसके वैवाहिक संबंध को वैधता नहीं देते हैं क्योंकि 1986 के साक्ष्य से सरसरी तौर पर यह प्रकट है कि द्वितीय वादी प्रथम वादी और मृतक के बीच विवाह से पैदा हुआ था । मृतक के भाइयों के साक्ष्य में छोटे-मोटे विभेद प्रकट हैं । इससे संभावनाओं की प्रधानता प्रकट होती है कि प्रथम वादी और मृतक ने वर्ष 1983 में अपने समुदाय में प्रचलित रीति-रिवाजों के अनुसार विवाह किया था और वर्ष 1988 में मृतक और प्रथम प्रतिवादी के विवाह से पूर्व वर्ष 1986 में उसका प्रथम बच्चा/द्वितीय वादी का जन्म हुआ था । (पैरा 15)

विवाह का निमंत्रण कार्ड (प्रदर्श पी. 1) पर विचार करने पर विचारण न्यायाधीश ने इस दस्तावेज की वास्तविकता पर संदेह किया है क्योंकि मुहूर्त के समय यह उल्लेख नहीं किया गया है । हम इस विचार को प्रकट करने में समर्थ नहीं हैं । यदि वास्तविक वादियों ने निमंत्रण कार्ड को झूठा बनाया है तो उन्हें सुस्पष्ट वैवाहिक निमंत्रण कार्ड को झूठा गढ़ने से किसी तरह नहीं रोका गया, मानो आचरण के बारे में हम यह समझते हैं कि सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक पृष्टभूमि में ऐसा नैसर्गिक प्रक्रम पर होता है । पक्षकारों में प्रत्येक द्वारा अभिलेख पर रखे गए साक्ष्य की विषमता को ध्यान में रखते हुए, वादियों का साक्ष्य महत्वपूर्ण नहीं है और इससे हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि प्रथम वादी मृतक जवारा नायका की विधिक

रूप से विवाहित पत्नी है और वादी सं. 2 और 3 उक्त विवाह से उत्पन्न हुए बच्चे हैं । परिणामतः, इससे यह प्रकट होता है कि मृतक जवारा नायका के साथ प्रथम प्रतिवादी का विवाह अधिनियम की धारा 5(i) को ध्यान में रखते हुए विधिमान्य नहीं है । (पैरा 16)

घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम की धारा 2(च) में अन्य बातों में से "घरेलू नातेदारी" को परिभाषित किया गया है । दो व्यक्तियों के बीच नातेदारी जो विवाह की प्रकृति के संबंध में एक साथ रह रहे हैं या किसी समय रह रहे थे, घरेलू नातेदारी है । घरेलू हिंसा से व्यथित व्यक्ति संरक्षण आदेश, निवास आदेश और कमाने वाले सह-भागीदारी से धनीय अनुतोष प्राप्त करने का हकदार है । उक्त अधिनियम की धारा 3 में घरेलू हिंसा शब्दावली को परिभाषित किया गया है । तद्नुसार, कोई महिला, जो आर्थिक और वित्तीय रूप से वंचित है, घरेलू हिंसा के प्रवर्ग के अधीन आती है । वर्तमान मामले में घरेलू हिंसा के कार्य की अवधारणा का विस्तार पर हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि प्रथम प्रतिवादी इसमें एक पीड़िता है जिसने अपना आधा जीवन असहाय रूप से बिताया है । वह मृतक जवारा नायका की मृत्यु तक उसकी पत्नी के रूप में रही थी और उसकी मुसीबत में उसने उसकी देखभाल की और उससे बच्चे पैदा किए तथा समाज द्वारा उसे उसकी पत्नी के रूप में मान्यता दी गई थी । मामले को इस दुष्टि से देखते हुए वह कानून द्वारा पत्नी की विधिसम्मत प्रास्थिति से वंचित होने से बेसहारा नहीं होगी । इस पर हम शीघ्रता से यह अभिनिर्धारित करते हैं कि मृत्यु फायदे पहले ही प्रतिवादी सं. 4 और 5 और प्रतिवादी सं. 1 के पक्ष में वितरित कर दिए गए थे जिन्हें उसके द्वारा अपने भविष्य के भरण-पोषण के लिए मुहैया करवा लिए गए थे ; न तो वादी और न प्रतिवादी सं. 2 और 3 उस रकम पर दावा करेंगे । (पैरा 20)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2005] (2005) 2 एस. सी. सी. 33 = ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 422 : रमेश चन्द्रन डागा बनाम रामेश्वरी डागा । 19

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2011 की प्रकीर्ण प्रथम अपील सं. 3104 (एफ.सी.). वादियों ने यह अपील न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, मैसूर द्वारा पारित किए गए निर्णय और डिक्री के विरुद्ध फाइल की है।

अपीलार्थियों की ओर से श्रीमती हेमलता एम. के. (संगमेष

आर. बी. की ओर से)

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री वाई. डी. हर्ष, एम. नागेश

और पी. बी. पाटिल, एच. सी. जी.

पी.

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति (श्रीमती) रथानेकाला ने दिया ।

न्या. (श्रीमती) रथानेकाला — यह अपील 2008 के मूल वाद सं. 39 में न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, मैसूर द्वारा तारीख 23 फरवरी, 2011 को पारित किए गए निर्णय और डिक्री के विरुद्ध वादियों द्वारा व्यथित होकर फाइल की गई है।

- 2. सुविधा की दृष्टि से पक्षकारों को विचारण न्यायालय के समक्ष उनके मूल प्रास्थिति के अनुसार उल्लिखित किया जा रहा है।
- 3. संक्षेप में तथ्य इस प्रकार हैं कि वादियों ने यह घोषणा करने के लिए वाद फाइल किया है कि प्रथम वादी विधिक तौर पर वैवाहिक पत्नी है और वादी सं. 2 और 3 मृतक जवारा नायका के बच्चे हैं और जवारा नायका की मृत्यु से उद्भूत मृत्यु के फायदे तय करने के लिए प्रतिवादी सं. 4 और 5 के विरुद्ध निदेश देने की ईप्सा की गई जो (मृतक) पुलिस कांस्टेबल के पद पर तैनात था और के. एस. आर. पी. डार, मैसूर में काम करता था । उनका पक्षकथन यह था कि वे विधिक तौर पर विवाहित पत्नी हैं और जवारा नायका, जिसकी तारीख 7 सितंबर, 2008 को पुलिस कांस्टेबल के पद पर कार्य करते हुए मृत्यु हुई थी और जो टोकन सं. पी. सी. 139, जिला सशस्त्र रिजर्व, ज्योथिनानगर, मैसूर की पहचान से काम कर रहा था । तीसरा वादी अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति पाने का हकदार है कि प्रथम प्रतिवादी ने जवारा नायका की पत्नी होने का दावा किया और प्रतिवादी सं. 2 और 3 ने प्रथम प्रतिवादी और मृतक के बीच विवाह से पैदा हुई संतान होने का दावा किया और सभी फायदे प्राप्त करने का प्रयास किया तथा अनुकंपा आधार पर नियुक्ति पाने का भी प्रयास किया । अपने पति की मृत्यु के पश्चात उसने प्रत्यर्थी सं. 4 और 5/विभाग को यह समावेदन किया कि पति की मृत्यु के पश्चात मृत्यु के फायदे प्राप्त करने

और कुटुंब पेंशन का संदाय पाने की हकदार है । परन्तु प्रतिवादी सं. 4 और 5 ने प्रतिवादी सं. 1 से 3 के पक्ष में आवेदन पर विचार किया है ।

प्रतिवादी सं. 1 से 3 ने वाद पर प्रतिवाद किया और उनका पक्षकथन यह था कि प्रथम प्रतिवादी मृतक जवारा नायका की विधिक वैवाहिक पत्नी है और उनका विवाह तारीख 17 जून, 1988 को रीति-रिवाजों के अनुसार सिंधविरा मंदिर, एच. डी. कोटे पर हुआ था और उसने प्रतिवादी सं. 2 और 3 को जन्म दिया था । वादियों ने एक मिथ्या दावा फाइल किया है । उसके पति ने उसे अपनी बीमा पालिसी में उसका नाम निर्दिष्ट किया है और उसने बीमा पालिसी की परिपक्वता मूल्य को प्राप्त किया । उसने तारीख 12 अगस्त, 2008 को रिजस्ट्रीकृत विल का निष्पादन किया है और अपनी सभी संपत्तियां उसको और उसके बच्चों को दी हैं । विल में स्वतः उसने यह अधिसूचित किया है कि द्वितीय प्रतिवादी उसकी मृत्यु की दशा में अनुकंपा आधार पर नियुक्ति प्राप्त करने का हकदार है । उसकी मृत्यु के पश्चात् उसने विभाग से वित्तीय सहायता प्राप्त कर अंतिम संस्कार किया था । मृतक कभी भी किसी भी समय वादियों के साथ नहीं रहा था और प्रथम वादी उसकी पत्नी नहीं है ।

पांचवां प्रतिवादी/पुलिस अधीक्षक, जिला मैसूर ने अपने लिखित कथन में, जिसे अभिलेख पर लाया गया है, यह बात प्रकट की है कि मृतक ने प्रथम वादी को अपनी विधिक वैवाहिक पत्नी के रूप में घोषित नहीं किया है और वादी सं. 2 और 3 उसके सेवा अभिलेखों में उसकी संतान के रूप में दिखाया गया है । उसने श्रीमती लक्षम्मा को सेवा अभिलेख में अपनी पत्नी के रूप में दिखाया है और अपनी मृत्यु के पश्चात् कुटुंब पेंशन प्राप्त करने के लिए उसका नाम निर्दिष्ट किया गया है । उसने डी. सी. आर. जी. ग्रुप इंश्योरेंस के लिए उसका नाम निर्दिष्ट किया है और प्रतिवादी सं. 1 से 3 को विधिक वैवाहिक पत्नी और संतान के रूप में घोषित किया है ।

- 4. पूर्वोक्त अभिवचनों के आधार पर विचारण न्यायालय ने विवाद्यक विरचित किए हैं और साक्ष्य अभिलिखित करने के पश्चात् दोनों पक्षकारों को सुनवाई का मौका दिया है और वादियों के विरुद्ध तथा प्रतिवादी सं. 1 से 3 के पक्ष में विवाद्यकों का उत्तर दिया है।
 - 1. क्या वादियों ने यह साबित किया है कि प्रथम वादी विधिक वैवाहिक पत्नी है और दूसरा और तीसरा वादी स्व. जवारा नायका की संतान हैं ?..... नकारात्मक

- 2. क्या वादियों ने यह भी साबित किया है कि वे स्व. जवारा नायका के मृत्यु फायदे पाने के हकदार हैं क्योंकि वे विधिक वारिस हैं ?..... नकारात्मक
- 3. क्या प्रथम प्रतिवादी ने यह साबित किया है कि वह स्व. जवारा नायका की विधिक वैवाहिक पत्नी है और दूसरा और तीसरा प्रतिवादी उनके विवाह से पैदा हुए थे ?..... सकारात्मक
 - 4. पक्षकार कौन से अनुतोष पाने के हकदार हैं ?

विचारण के दौरान प्रथम वादी की अभि. सा. 1 के रूप में परीक्षा की गई और उसके देवरों की अभि. सा. 2 और 3 के रूप में परीक्षा की गई । उसने अपना क्रमशः वैवाहिक निमंत्रण कार्ड प्रदर्श पी. 1; मृतक के साथ दो फोटों प्रदर्श पी. 2 और 3; और अपने पुत्र का चिह्न कार्ड तथा अपनी पुत्री प्रदर्श पी. 4, पी. 5 और पी. 8 स्थानांतरण प्रमाणपत्र तथा जाति और आय प्रमाणपत्र, ग्रीन राशन कार्ड, वोटर आई. डी. कार्ड प्रदर्श पी. 7, प्रदर्श 9 और प्रदर्श 10 पेश किए थे । प्रथम प्रतिवादी ने प्रतिवादी साक्षी 1 के रूप में खण्डन साक्ष्य पेश किया था और दस्तावेज जिन्हें प्रदर्श डी. 1 से प्रदर्श डी. 16 चिह्नित किया गया है, पेश किए गए थे ।

5. विचारण न्यायालय के निर्णय का क्या महत्व है जिसमें वादियों के वाद को इस वजह से नकार दिया गया था कि अभिसाक्षियों के साक्ष्य में विभेद प्रकट हुए थे। प्रथम वादी ने जयपुरा ग्राम में मृतक जवारा नायका के मकान में उसके साथ रुकने के बारे में कोई दस्तावेजी सबूत पेश नहीं किया था। उसने कभी भी यह दावा नहीं किया है कि वह हमेशा ज्योतिनगर पुलिस क्वार्टर्स पर मृतक के साथ रहती थी। दूसरी ओर प्रतिस्क्षा पक्ष ने इस प्रभाव पर बल दिया था कि प्रतिवादी सं. 1 से 3 पुलिस क्वार्टर्स, ज्योतिनगर में मृतक के साथ रुका करते थे। प्रतिवादियों ने वादियों द्वारा पेश किए गए दस्तावेज के मुकाबले अन्य दस्तावेज पेश किए थे जिसमें लग्न-कुण्डली, जो प्रथम प्रतिवादी और मृतक के विवाह से संबंधित था और जिस पर तारीख 17 जून, 1988 लिखी हुई थी, राशन कार्ड जिसमें प्रथम प्रतिवादी को अपनी पत्नी के रूप में परिवार के मुखिया के रूप में मृतक का फोटो दिखाया गया है, मृतक के साथ कुटुंब के सदस्यों के फोटो भी थे। मृतक द्वारा आरोग्य भाग्य योजना प्रदर्श डी. 5 के अन्तर्गत यह घोषणा की गई थी कि प्रथम प्रतिवादी उसकी पत्नी के रूप में

थी, भारतीय जीवन बीमा निगम पालिसीज, भारतीय जीवन निगम प्रीमियम की संदत्त की गई रसीदें, जिनमें प्रथम प्रतिवादी को पत्नी के रूप में नाम निर्दिष्ट किया गया है, अभिलेख (प्रदर्श डी. 9) में मृतक और प्रथम प्रतिवादी के नामों को गणना में लिया गया है । इस तथ्य को भी ध्यान में लिया गया है कि वादी ने विवाह की तारीख के बारे में कोई अभिवाक नहीं किया था जिसके विरुद्ध प्रतिवादियों ने लिखित कथन फाइल करने के प्रक्रम पर स्वतः यह दलील दी है कि मृतक और प्रथम प्रतिवादी का विवाह तारीख 17 जून, 1988 को हुआ था और प्रतिवादियों के पक्ष में उन बातों का उल्लेख पाया गया था । मृतक द्वारा अपनी मृत्यु से एक मास पूर्व रिजस्ट्रीकृत विल (प्रदर्श डी. 10) का निष्पादन किया जाना कहा गया है जिसमें प्रतिवादी सं. 1 के पक्ष में अपने सभी सेवा फायदे लिया जाना है और अन्य बातों के बीच में जिससे विचारण न्यायाधीश प्रभावित हुआ है उसमें द्वितीय प्रतिवादी को अनुकंपा आधार पर नियुक्ति का प्रस्ताव भी दिया गया है।

6. अपीलार्थी/वादियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान काउंसेल ने यह निवेदन किया है कि प्रथम वादी और मृतक का विवाह प्रथम प्रतिवादी के साथ अभिकथित विवाह से काफी पूर्व वर्ष 1983 में होना कहा गया था । ग्रीन राशन कार्ड (प्रदर्श पी. 9) तथा वोटर आई. डी. कार्ड (प्रदर्श पी. 10) ने मृतक का नाम प्रथम वादी के पति के रूप में दिखाया गया है । तृतीय वादी के कार्डों में प्रदर्श पी. 4 और पी. 5 पर पिता के रूप में मृतक के नाम को दिखाया गया है । दूसरे वादी से संबंधित स्थानांतरण प्रमाणपत्र में पिता का नाम जवारा नायका के रूप में दिखाया गया है । विचारण न्यायालय ने द्वितीय वादी की आयु के बारे में विभेद का उल्लेख किया है परन्तु पक्षकारों के बीच प्रकट हुए विवाद में इस मामले पर कोई सुसंगतता नहीं है । उचित परिप्रेक्ष्य में साक्ष्य का मूल्यांकन किए बिना विचारण न्यायालय ने वाद को प्रारंभ में ही खारिज कर दिया जिससे वादियों के प्रति न्याय की अपहानि हुई है । इस न्यायालय के मध्यक्षेप किए जाने से यह अपेक्षा की गई है कि अनुतोष को मंजूर करे जैसा कि प्रथम वादी द्वारा मृतक के विधिक वैवाहिक पत्नी होने की घोषणा करते हुए अनुरोध किया है ।

7. उत्तर में, प्रत्यर्थी/प्रतिवादियों के विद्वान् काउंसेल ने यह निवेदन किया है कि वादियों ने उस तारीख का उल्लेख नहीं किया है जिसमें प्रथम वादी और मृतक के बीच व्यवस्थित विवाह की बात कही गई थी परन्तू इस घोषणा की ईप्सा की गई है कि प्रथम वादी मृतक की विधिक वैवाहिक पत्नी है और वादी सं. 2 और 3 मृतक जवारा नायका की संतान हैं और यह भी सरकार को अनुदेश देने की ईप्सा की गई है कि प्रथम वादी के पक्ष में मृत्यु के फायदे देने तय किए जाएं । मामले का गुणागुण सम्पूर्ण रूप से एकमात्र इस तथ्य पर मृतक के साथ प्रथम वादी की वैवाहिक स्थिति आधारित है । मृतक के सभी शासकीय अभिलेखों में उसने अपनी विधिक वैवाहिक पत्नी के रूप में प्रथम प्रतिवादी को घोषित किया है । दूसरी ओर, वादियों द्वारा खासतौर पर विशिष्ट रूप से पेश किए गए दस्तावेज प्रदर्श पी. 1 वैवाहिक कार्ड संदेहपूर्ण है और मामले के उद्देश्य को पूरा करने के लिए षड्यंत्रपूर्वक बनाया गया है । अभि. सा. 2 और 3, जो मृतक के भाई हैं, प्रतिवादियों से ईर्ष्या रखते हैं तथा चाहे कोई भी उनका प्रयोजन हो उसका अवलंब नहीं लिया जा सकता । निचले न्यायालय ने साक्ष्य का उचित मूल्यांकन करके यह निष्कर्ष निकाला है कि प्रथम प्रतिवादी के साथ मृतक का विवाह विधिमान्य और वैध है और इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप करके सही रूप से विवाद की डिक्री दी है और मामले की इन परिस्थितियों में इस पर हस्तक्षेप करना उचित नहीं है ।

8. दोनों विद्वान् काउंसेलों को सुनने के पश्चात् और मामले के अभिलेखों पर विचार करके हमारे विचार के लिए निम्नलिखित प्रश्न उद्भूत हुए हैं:—

"क्या प्रथम प्रतिवादी मृतक जवारा नायका की विधिक रूप से वैवाहिक पत्नी है और क्या वादी सं. 2 और 3 उनके विवाह से पैदा हुई संतान हैं ?"

9. प्रारंभतः, वादियों ने वादपत्र में यह अभिवाक् नहीं किया है कि वह तारीख कौन सी है जिस तारीख को प्रथम वादी और मृतक का विवाह हुआ था । ऐसा केवल तब प्रकट हुआ जब प्रतिवादियों ने अपने लिखित कथन फाइल किए थे और यह दावा किया था कि प्रथम प्रतिवादी मृतक की विधिक रूप से विवाहित पत्नी है और उनका विवाह तारीख 17 जून, 1988 को हुआ था जो समुदाय में प्रचलित रीति-रिवाजों के अनुसार हुआ था, वादी ने अपने साक्ष्य के प्रथम प्रक्रम पर अपने विवाह का निमंत्रण कार्ड प्रदर्श पी. 1 पेश किया जिसके अनुसार विवाह तारीख 29 मई, 1983 को होना तय हुआ था जिस पर हम इस दस्तावेज का मृतक के साथ प्रथम

वादी के विवाह के पूर्ण सबूत के रूप में अपने को सहज महसूस नहीं कर सकते । उस समय जो फोटो प्रदर्श पी. 4, पी. 5 और पी. 11 अविवादित समय में लिए गए थे । दो फोटों में प्रथम वादी और मृतक एक साथ दिखाए गए हैं और दूसरे के बारे में यह कहा गया है कि द्वितीय वादी की सगाई के समारोह के दौरान लिए गए थे । इन फोटों के अवलोकन से यह प्रकट होता है कि प्रदर्श पी. 11, प्रदर्श 2 की बड़ी प्रति है और दो फोटों उसी दिन स्टूडियों में खींचे गए थे । इन फोटों से मृतक के साथ वादी के कुटुंब के संबंध की संभावना प्रकट होती है । तृतीय वादी से संबंधित प्रदर्श पी. 4 और पी. 5 के चिह्नित कार्ड से परिलक्षित होता है कि जवारा नायका जे. उसका पिता है और द्वितीय प्रतिवादी से संबंधित स्थानांतरण प्रमाणपत्र प्रदर्श पी. 8 से यह भी दर्शित होता है कि जवारा नायका उसका पिता है । वोटर आई. डी. कार्ड प्रदर्श पी. 10 तारीख 12 सितंबर, 1995 को जारी किया गया था, ग्रीन कार्ड (प्रदर्श पी. 9) में प्रथम वादी के पति के रूप में जवारा नायका का नाम दर्शित है यद्यपि ग्रीन कार्ड में दामाद का फोटो दिखाया गया है जो क्टूंब का पुरुष सदस्य है । अभि. सा. 2 और 3 के समर्थित साक्ष्य के साथ सभी दस्तावेजों की अभि. सा. 1 के साक्ष्य से संपुष्टि हुई है और जिससे केवल एक ऐसा निष्कर्ष प्रकट होता है कि मृतक कोई दूसरा नहीं है बल्कि प्रथम वादी का पति है । उस समय प्रतिवादियों ने सफलतापूर्वक यह इंगित किया है कि प्रथम प्रतिवादी की तारीख 17 जून, 1988 को मृतक के साथ विवाह हुआ था और उक्त विवाह से दो सन्तानें हुईं थीं।

10. हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अधिनियम" कहा गया है) की धारा 5 में प्रश्नगत विवाह की विधिमान्यता का पता लगाते हैं जिसमें हिन्दू विवाह की शर्तों को प्रगणित किया गया है। उनके बीच में प्रथम शर्त हमारे लिए सुसंगत है:—

"हिन्दू विवाह की शर्तें — कोई विवाह दो हिन्दुओं के बीच अनुष्ठापित हो सकता है यदि निम्नलिखित शर्तों को पूरी करता हो, अर्थात् —

'(i) न	तो	पक्षकार	विवाह	के	समय	पर पति,	पत्नी	के	रूप
में रह रहे हों	ı								

(ii)	से	(v) _	 	 	 _	 _	 	 	_	 	_	_	 _	_	_	_	_	_	۱,,	
111	• • •	١ ٠.			 			 													

11. विधि की उपरोक्त स्थिति की पृष्ठभूमि में न्यायालय के समक्ष

यह प्रश्न उद्भूत हुआ है कि कौन सा विवाह समय पूर्व हुआ था । यदि इससे यह दर्शित हुआ है कि प्रथम वादी और मृतक के बीच विवाह प्रथम प्रतिवादी के विवाह से पूर्व हुआ था और तब वाद सफल होगा ।

12. वादी सं. 2 और 3 की आयु का तथ्य से विचारण न्यायाधीश को इस निष्कर्ष में पहुंचने के लिए बाधा उत्पन्न हुई थी । विचारण न्यायाधीश ने चर्चा करने के दौरान यह मत व्यक्त किया :—

"...... यदि प्रथम वादी ने वास्तव में वर्ष 1983 में जवारा नायका से विवाह किया तब उसके विवाह के शीघ्र प्रश्चात् सन्तान पैदा हुई होगी और उसकी दो सन्तान वादी सं. 2 और 3 की आयु जवारा नायका के साथ उसके विवाह की अधिकथित तारीख से मिलान नहीं होता है और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से यह प्रकट होता है कि वह मृतक की प्रथम प्रतिवादी से विवाह के पश्चात् मृतक के सम्पर्क में आई होगी । यद्यपि, प्रथम प्रतिवादी और मृतक जवारा नायका के बीच किसी विद्यमान संबंध पर विचार करें तो विधिमान्य वैवाहिक संबंध प्रतीत नहीं होते हैं और प्रथम वादी विधिक रूप से विवाहित पत्नी के रूप में विधिक प्रास्थिति प्राप्त नहीं कर सकती"

13. यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि विचारण न्यायाधीश का भ्रम की स्थित में होना प्रतीत होता है कि कोई पत्नी विवाह के तत्काल पश्चात् गर्भधारण करती है । द्वितीय वादी की आयु तारीख 12 सितंबर, 2008 को विचारण न्यायालय के समक्ष वाद फाइल करने की तारीख को वाद हेतुक शीर्षक में 22 वर्ष की आयु वर्णित की गई है । यदि ऐसा है तो उसकी जन्म की तारीख सितंबर, 1986 से पूर्व की होगी । स्थानांतरण प्रमाणपत्र में जन्मतिथि का कालम खाली पड़ा है । तथापि, केवल इस दस्तावेज से यह बात ध्यान में आई है कि अभ्यर्थी ने तारीख 10 अगस्त, 1999 को अन्तिम बार सातवीं की कक्षा में हाजिर हुई थी । यदि यह उपधारणा की जाती है कि उस समय वह तेरह वर्ष की थी और वह सातवीं कक्षा में पहुंची थी तब उसका जन्म 1986 में हुआ है और तृतीय वादी की जन्मतिथि पर अत्यधिक टिप्पणी नहीं की जा सकती जिसे एस. एस. एल. सी. और सातवीं कक्षा के कार्ड में चिह्नों के अनुसार तारीख 8 मई, 1991 दिखाया गया है । तब इससे यह प्रश्न उद्भूत होता है कि द्वितीय वादी के साथ प्रथम वादी का मृतक की मृत्यु से पूर्व जन्म हुआ था जो वर्ष 1988 है । यह प्रतिरक्षा भी

नहीं दी गई है कि प्रथम वादी का किसी अन्य व्यक्ति से विवाह हुआ है। प्रतिपरीक्षा संयुक्त रूप से की गई थी कि मृतक और प्रथम वादी का विवाह प्रथम प्रतिवादी के साथ मृतक के विवाह से पूर्व नहीं हुआ था।

14. प्रतिरक्षा पक्ष के पास महत्वपूर्ण दस्तावेज अर्थात् रिजस्ट्रीकृत विल, जिसे जवारा नायका द्वारा तारीख 12 अगस्त, 2008 को निष्पादित होना कहा गया है, अर्थात् अपनी मृत्यु से एक माह पूर्व तारीख 7 सितंबर, 2008 । इस दस्तावेज में किए गए प्रकथन का प्रभाव यह है कि निष्पादक जो अत्यधिक कमजोर और मृत्यु के कगार पर था, उसने यह उद्घोषणा की कि उसका प्रथम प्रतिवादी के साथ तारीख 16 जून, 1988 को रस्म रिवाजों के अनुसार विवाह हुआ था और उक्त विवाह से उसकी दो सन्तान थीं और उक्त पत्नी और बच्चों की उसके द्वारा देखभाल की जाती थी और व उस पर निर्भर हैं । उसने अपनी सारी संपत्तियां और सेवा के फायदे उक्त पत्नी और बच्चों के पक्ष में किए हैं और यह अभिव्यक्त किया है कि उसकी मृत्यु के पश्चात् अनुकंपा आधार पर नियुक्ति सरकार द्वारा उसके पुत्र-द्वितीय प्रतिवादी को दिया जा सकता है ।

15. यह उपधारणा की गई है कि मृतक-पति की सत्य विल है । हम ऐसा कोई कारण नहीं पाते हैं कि ऐसे विल को निष्पादित करने में जो भी आशय व्यक्त किया गया है उसकी ऋजुता पर कोई संदेह व्यक्त नहीं करते । यदि प्रतिवादी सं. 1 से 3 उसके केवल पत्नी और बच्चे हैं तब क्या वसीयत करने वाले के लिए यह आवश्यक था कि वह अपने विवाह की तारीख और स्थान का वर्णन करता और उनके पक्ष में अपने सेवा फायदे लेने और अनुकंपा आधार पर नियुक्ति देने का क्या वर्णन करना चाहिए था ? आधारिक रूप से इस विल की वास्तविकता पक्षकारों के बीच कोई प्रश्न नहीं था । विल तब स्वीकार नहीं की जाती जब इसे साक्ष्य अधिनियम की धारा 68 की अध्यपेक्षा के अनुसार साबित किया जाना था, परन्तु ऐसा नहीं किया गया है और न किसी साक्षी की परीक्षा की गई । इसके अतिरिक्त मृतक द्वारा शासकीय अभिलेखों में की गई घोषणा और प्रथम प्रतिवादी को बीमा पालिसी आदि में नामनिर्दिष्ट करने, ये सभी बातें उसकी स्वयं के दिए गए कथनों के आधार पर हैं । कोई भी महिला अपने मृतक-पति की संपदा में से भरण-पोषण के विधवा अधिकारों से वंचित नहीं हो सकती और बच्चे कुटुंब के पैतृक संपत्ति से वंचित नहीं हो सकते हैं और ये बातें वसीयत करने के अभिसाक्ष्य पर निर्भर होती हैं । साक्ष्य में यह संकेत देना पर्याप्त है कि प्रथम प्रतिवादी का मृतक से विवाह हुआ था और उक्त विवाह से प्रतिवादी सं. 2 और 3 हुए थे तथा मृतक के अंतिम सांस लेने तक उसके साथ रहते थे । परन्तु ये तथ्य मृतक के साथ उसके वैवाहिक संबंध को वैधता नहीं देते हैं क्योंकि 1986 के साक्ष्य से सरसरी तौर पर यह प्रकट है कि द्वितीय वादी प्रथम वादी और मृतक के बीच विवाह से पैदा हुआ था । मृतक के भाइयों के साक्ष्य में छोटे-मोटे विभेद प्रकट हैं । इससे संभावनाओं की प्रधानता प्रकट होती है कि प्रथम वादी और मृतक ने वर्ष 1983 में अपने समुदाय में प्रचलित रीति-रिवाजों के अनुसार विवाह किया था और वर्ष 1988 में मृतक और प्रथम प्रतिवादी के विवाह से पूर्व वर्ष 1986 में उसका प्रथम बच्चा/द्वितीय वादी का जन्म हुआ था ।

- 16. विवाह का निमंत्रण कार्ड (प्रदर्श पी. 1) पर विचार करने पर विचारण न्यायाधीश ने इस दस्तावेज की वास्तविकता पर संदेह किया है क्योंकि मुहूर्त के समय का उल्लेख नहीं किया गया है । हम इस विचार को प्रकट करने में समर्थ नहीं हैं । यदि वास्तविक वादियों ने निमंत्रण कार्ड को झूठा बनाया है तो उन्हें सुस्पष्ट वैवाहिक निमंत्रण कार्ड को झूठा गढ़ने से किसी तरह नहीं रोका गया, मानो आचरण के बारे में हम यह समझते हैं कि सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक पृष्टभूमि में ऐसा नैसर्गिक प्रक्रम पर होता है । पक्षकारों में प्रत्येक द्वारा अभिलेख पर रखे गए साक्ष्य की विषमता को ध्यान में रखते हुए, वादियों का साक्ष्य महत्वपूर्ण नहीं है और इससे हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि प्रथम वादी मृतक जवारा नायका की विधिक रूप से विवाहित पत्नी है और वादी सं. 2 और 3 उक्त विवाह से उत्पन्न हुए बच्चे हैं । परिणामतः, इससे यह प्रकट होता है कि मृतक जवारा नायका के साथ प्रथम प्रतिवादी का विवाह अधिनियम की धारा 5(i) को ध्यान में रखते हुए विधिमान्य नहीं है ।
- 17. अब हम इस प्रश्न पर विचार करते हैं कि वादी किस तरह का अनुतोष पाने का हकदार हैं। न्यायालय में यह निवेदन किया गया कि सभी मृत्यु फायदे प्रतिवादी सं. 1 से 3 के पक्ष में पहले ही वितरित कर दिए गए हैं क्योंकि मृतक ने प्रथम प्रतिवादी को अपनी विधिक रूप से विवाहित पत्नी घोषित किया था और प्रतिवादी सं. 2 और 3 उसके सेवा अभिलेखों में उसके बच्चे होना बताया गया है और प्रथम प्रतिवादी मृतक के बीमा पालिसी में उसके द्वारा नामनिर्दिष्ट की गई है और उसने बीमा रकम भी प्राप्त कर ली है।

18. पूर्वोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए हम इस प्रक्रम पर उचित और न्यायसंगत अनुतोष के निचोड़ पर पहुंचते हैं जो वास्तविक जीवन के आधार और विधि की आज्ञापक कसौटी को ध्यान में रखते हैं । प्रथम प्रतिवादी का विवाह प्रथम वादी के विवाह के बाद हुआ है जिससे अधिनियम की धारा 5(i) के अतिक्रमण में हुआ है और अधिनियम की धारा 11 के अधीन ऐसा विवाह शून्य है । प्रतिवादी सं. 2 और 3 यद्यपि शून्य विवाह से पैदा हुए हैं, अधिनियम की धारा 16 के फलस्वरूप उन्हें वैध दर्जा दिया जाता है और धारा 16 की उपधारा 3 के अधीन वे वादियों सहित अपने मृतक पिता की संपदा की विरासत पाने के हकदार हैं । परन्तु वैवाहिक बंधन में होने पर पत्नी के भाग्य के बारे में क्या होगा जिससे अधिनियम की धारा 5(i) का अतिक्रमण हुआ है न तो वैयक्तिक विधि में और न दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 में उपलब्ध भरण-पोषण का फायदे के बारे में उसके शरीर और उसकी आत्मा अविधिमान्य विवाह की विधवा का उद्धार नहीं करता है । इसके बावजूद ऐसी संविधियों से हतोत्साह की भावना प्रकट होती है, हम वैवाहिक संबंधों में अपने समाज में पति-पत्नी के संबंधों को विच्छेद करते हैं यद्यपि, विधि की दृष्टि में ऐसा विधिमान्य नहीं है फिर भी समाज द्वारा पित और पत्नी को मान्यता दी गई है ।

19. यदि ऐसे संबंधों में कई बार कई कारणों से अवरोध आता है तो यह मामला सहभागी जिसका जीवन बर्बाद हो जाता है और उसके पास अपने जीवन का निर्वाह करने के लिए कोई रास्ता नहीं रह जाता । रमेश चन्द्रन डागा बनाम रामेश्वरी डागा वाले मामले के निर्णय में कुछ सुसंगतता दी गई है । यद्यपि, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में कुछ सुसंगतता है और विधि का प्रश्न भिन्न-भिन्न गणना पर आधारित था जबकि हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 25 के संबंध में विधि की स्थिति का स्पष्टीकरण देते हुए उच्चतम न्यायालय ने हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 11 के अधीन डिक्री के समय पर द्वितीय पत्नी के पक्ष में भरण-पोषण की मंजूरी के आदेश की पुष्टि की है । चर्चा के मध्य में यह मत व्यक्त किया गया था जो इस प्रकार है :—

"कानूनी हिन्दू विधि की वर्तमान स्थिति पर विचार करते हुए द्विविवाह को अधिनियम के उपबंधों के उल्लंघन में अवैध घोषित किया जा सकता है परन्तु इसे इस बारे में अनैतिक होना नहीं कहा

¹ (2005) 2 एस. सी. सी. 33 = ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 422.

जा सकता है जिससे कि वित्तीय रूप से कमजोर पित-पत्नी के भरण-पोषण का अधिकार से इनकार किया जाए जो आर्थिक रूप से एक दूसरे पर निर्भर हो । धारा 25 न्यायालय को इस बात के लिए समर्थ बनाती है कि विवाह संबंध के विच्छेदित होने के परिणामस्वरूप किसी प्रकार की डिक्री को पारित करते समय भरण-पोषण का अधिनिर्णय करें......."

संसद्, भारत के संविधान के अधीन प्रत्याभूत अधिकारों को मुहैया कराने के लिए अध्यधिक बुद्धिमत्ता का परिचय देना चाहिए जिससे कि घरेलू हिंसा से पीड़ित कानून को प्रवर्तन में लाया जाए । "घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम, 2005" इस अधिनियम की स्कीम कुटुंब में घटित होने वाली सभी प्रकार की हिंसा के पीड़ित को उपचार देना है और उन मामलों के संबंध में भी जो उससे आकस्मिक रूप से संबंधित हो ।

20. घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम की धारा 2(च) में अन्य बातों में से "घरेलू नातेदारी" को परिभाषित किया गया है । दो व्यक्तियों के बीच नातेदारी जो विवाह की प्रकृति के संबंध में एक साथ रह रहे हैं या किसी समय रह रहे थे, घरेलू नातेदारी है । घरेलू हिंसा से व्यथित व्यक्ति संरक्षण आदेश, निवास आदेश और कमाने वाले सह-भागीदारी से धनीय अनुतोष प्राप्त करने का हकदार है । उक्त अधिनियम की धारा 3 में घरेलू हिंसा शब्दावली को परिभाषित किया गया है । तद्नुसार, कोई महिला, जो आर्थिक और वित्तीय रूप से वंचित है, घरेलू हिंसा के प्रवर्ग के अधीन आती है । वर्तमान मामले में घरेलू हिंसा के कार्य की अवधारणा का विस्तार पर हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि प्रथम प्रतिवादी इसमें एक पीड़ित है जिसने अपना आधा जीवन असहाय रूप से बिताया है । वह मृतक जवारा नायका की मृत्यु तक उसकी पत्नी के रूप में रही थी और उसकी मुसीबत में उसने उसकी देखभाल की और उससे बच्चे पैदा किए तथा समाज द्वारा उसे उसकी पत्नी के रूप में मान्यता दी गई थी । मामले को इस दृष्टि से देखते हुए वह कानून द्वारा पत्नी की विधिसम्मत प्रास्थिति से वंचित होने से बेसहारा नहीं होगी । इस पर हम शीघ्रता से यह अभिनिर्धारित करते हैं कि मृत्यू फायदे पहले ही प्रतिवादी सं. 4 और 5 और प्रतिवादी सं. 1 के पक्ष में वितरित कर दिए गए थे जिन्हें उसके द्वारा अपने भविष्य के भरण-पोषण के लिए मुहैया करवा लिए गए थे; न तो वादी और न प्रतिवादी सं. 2 और 3 उस रकम पर दावा करेंगे ।

21. आगे हमारी यह भी राय है कि कुटुंब पेंशन प्रथम वादी को दी

जाएगी क्योंकि वह अकेले मृतक जवारा नायका की विधिक रूप से विवाहित पत्नी है और अनुकंपा आधार पर नियुक्ति तीसरे वादी को दी जाएगी, जो न्याय के उद्देश्य की पूर्ति करेगा और विभाग द्वारा प्रतिवादी सं. 1 से 3 के पक्ष में वितरित की गई रकम के बारे में मुकदमेबाजी से दोनों कुटुंबों को छुटकारा दिलाएगी । स्व. जवारा नायका द्वारा छोड़ी गई अन्य अचल संपत्ति के बारे में उत्तराधिकार विधि के साथ पठित अधिनियम की धारा 16 का अनुसरण किया जाएगा ।

तद्नुसार, अपील मंजूर की जाती है।

न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, मैसूर की फाइल पर तारीख 23 फरवरी, 2011 का 2008 का मूल वाद सं. 39 में पारित किए गए निर्णय और डिक्री को अपास्त किया जाता है।

प्रथम अपीलार्थी/प्रथम वादी को मृतक जवारा नायका की विधिक रूप से विवाहित पत्नी घोषित किया जाता है और अपीलार्थी सं. 2 और 3/वादी सं. 2 और 3, जो प्रथम अपीलार्थी और मृतक जवारा नायका के बच्चे हैं।

अपीलार्थी और प्रत्यर्थी सं. 2 और 3/प्रतिवादी सं. 2 और 3 मृतक जवारा नायका की सभी संपदा को पाने के हकदार हैं क्योंकि उसके प्रथम श्रेणी के विधिक वारिस हैं तथा प्रत्यर्थी सं. 4 और 5 को उपलब्ध कोई भी धनीय अनुतोष भी पाने के हकदार हैं।

प्रथम अपीलार्थी कुटुंब पेंशन पाने के हकदार हैं और तीसरा अपीलार्थी अनुकंपा आधार पर नियुक्ति पाने का हकदार है ।

विभाग द्वारा प्रत्यर्थी सं. 1 से 3 के बारे में वितरित किए गए धनीय फायदे पर आगे कोई आदेश नहीं किया जाता है तथा प्रथम प्रत्यर्थी अपने भविष्य के भरण-पोषण के लिए उक्त रकम का उपयोग करने की हकदार है।

प्रत्यर्थी सं. 4 और 5 को यह निदेश दिया जाता है कि मृत्यु फायदे, जिनका अभी तक वितरण नहीं किया गया है, उनको तय करे, यदि ऐसे मृत्यु फायदे अपीलार्थी सं. 1 से 3 और प्रत्यर्थी सं. 2 से 3 के पक्ष में वितरित किए गए हैं।

पक्षकार अपने-अपने खर्चे स्वयं वहन करेंगे ।

अपील मंजूर की गई ।

आर्य

अमानी (श्रीमती)

बनाम

मदन लाल

तारीख 2 मार्च, 2015

न्यायमूर्ति डा. विनीत कोठारी

हिन्दू दत्तक और भरण-पोषण अधिनियम, 1956 (1956 का 78) — धारा 16 — दत्तक ग्रहण का रद्दकरण — जहां दत्तक ग्रहण, ऐसे सुसंगत साक्षी जो विचारण न्यायालय के समक्ष उपस्थित हुए, की मौजूदगी में धार्मिक रीति-रिवाज के साथ किया गया और दत्तक ग्रहण के तथ्य को और ठोस बनाने के लिए सम्यक् रूप से रिजस्ट्रीकृत किया गया वहां अभिकथित दुर्व्यपदेशन या कपट के आधार पर दत्तक ग्रहण को अस्वीकार किए जाने का आवेदन आधारहीन और अन्यायसंगत है।

वादी द्वारा फाइल की गई यह द्वितीय अपील सिविल अपील (डिक्री) सं. 16/2003 "श्रीमती अमानी बनाम मदन लाल" में विद्वान अपर जिला न्यायाधीश सं. २, जोधपुर द्वारा तारीख २१ अक्तूबर, २००५ को पारित निर्णय और डिक्री से उद्भूत हुई है, जिसमें वर्तमान अपीलार्थी-वादी श्रीमती अमानी द्वारा फाइल की गई अपील को खारिज कर दिया था और सिविल मूल वाद सं. 22/1997 "श्रीमती अमानी बनाम मदन लाल" में विद्वान सिविल न्यायाधीश (कनिष्ठ खंड) ने तारीख 17 जनवरी, 2003 को पारित निर्णय और डिक्री की पृष्टि कर दी, जिसके द्वारा विद्वान् सिविल न्यायाधीश (कनिष्ठ खंड) ने प्रतिवादी-मदन लाल के पक्ष में वादी श्रीमती अमानी द्वारा तारीख 18 मई, 1990 को निष्पादित दत्तक विलेख रजिस्ट्री के रददकरण की ईप्सा हेत् वादी श्रीमती अमानी द्वारा फाइल किए गए वाद को खारिज कर दिया । वर्तमान द्वितीय अपील अपीलार्थियों द्वारा फाइल की गई है, जो प्रतिवादी-मदन लाल के पक्ष में स्वयं द्वारा तारीख 10 मई, 1990 को निष्पादित दत्तक विलेख के रद्दकरण के संबंध में अपने दावे में समवर्ती खारिज के विरुद्ध विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष वादी था । जो मूलतः भगवान राम का पुत्र है जो वादी श्रीमती अमानी के पति राम दयाल का छोटा भाई था । उच्च न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – वादी-श्रीमती अमानी ने दत्तक विलेख और रिजस्ट्रीकृत दस्तावेज के रद्दकरण के लिए पूर्वोक्त वाद फाइल किया था । वादी को

दत्तक विलेख की विषय-वस्त् को नासाबित करने के लिए मुख्य स्संगत साक्ष्य द्वारा अवसर मिला था जिसकी वर्ष 1990 में रजिस्ट्री हुई थी । यह ध्यान में आया है कि प्रतिवादी-मदन लाल का दत्तक स्संगत साक्षियों की उपस्थिति में धार्मिक विधि के अनुसार औपचारिक रूप से हुआ था जो विचारण न्यायालय के समक्ष पेश भी हुए थे । प्रतिवादी-मदन लाल के दत्तक का तथ्य साबित हो गया और इसमें रजिस्ट्रीकृत दस्तावेज विधिवत् रूप में होने से इसके निष्पादन की उपधारणा मजबूत हो जाती है और इसलिए, वादी-श्रीमती अमानी के दत्तक के बारे में निष्कर्ष तथ्यों के आधार पर निष्कर्ष हैं । वादी-श्रीमती अमानी द्वारा अधिकथित मिथ्या निरूपण या कपट के बारे में निष्कर्षों को दोनों निचले न्यायालयों ने वादी-अमानी के विरुद्ध दिए हैं जो अभिलेख पर तथ्यों और सामग्री के आधार पर ही दिए हैं, विशेष रूप से रजिस्ट्रीकृत दत्तक विलेख को अन्य साक्ष्यों से अलग नहीं किया जा सकता है और इस न्यायालय द्वारा निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित किए गए निर्णयों में कोई विकृति नहीं देखी जा सकती है इसमें विकृति को ध्यान में रखते हुए तथ्यों के निष्कर्षों को देखने के लिए वाद के अभिलेख पर कोई प्रतिकूल सामग्री उपलब्ध नहीं है । (पैरा 11)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2011]	2011 (2) आर. आर. टी. 1035 : मोहन लाल और अन्य बनाम श्रीमती रहीसा बेगम और अन्य ;	7
[2008]	ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 1056 : बृजेन्द्र सिंह बनाम मध्य प्रदेश राज्य और अन्य ;	9
[2006]	2006 (1) सिविल न्यायालय मामला 563 (एस. सी.) : पेंटाकोटा सत्यनारायण और अन्य बनाम पेंटाकोटा सीता रतनाम और अन्य ;	7
[2002]	2002 (3) सिविल न्यायालय मामला 334 (उड़ीसा) : श्याम सुन्दर मिश्रा बनाम श्रीबचा मिश्रा ;	7
[1996]	1996 (2) आर. एल. डब्ल्यू. 213 : कृष्ण लाल और अन्य बनाम राजाराम और अन्य ;	9

[1980] ए. आई. आर. 1980 एस. सी. 1754 : मदन लाल बनाम श्रीमती गोपी और अन्य ।

7

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2011 की द्वितीय सिविल अपील सं. 318.

विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश सं. 2, जोधपुर के तारीख 21 अक्तूबर, 2005 के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से

श्री सी. आर. जाखड़

प्रत्यर्थी की ओर से

श्री यशवंत मेहता

न्यायमूर्ति डा. विनीत कोठारी — वादी द्वारा फाइल की गई यह द्वितीय अपील सिविल अपील (डिक्री) सं. 16/2003 "श्रीमती अमानी बनाम मदन लाल" में विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश सं. 2, जोधपुर द्वारा तारीख 21 अक्तूबर, 2005 को पारित निर्णय और डिक्री से उद्भूत हुई है, जिसमें वर्तमान अपीलार्थी-वादी श्रीमती अमानी द्वारा फाइल की गई अपील को खारिज कर दिया था और सिविल मूल वाद सं. 22/1997 "श्रीमती अमानी बनाम मदन लाल" में विद्वान् सिविल न्यायाधीश (किनष्ठ खंड) ने तारीख 17 जनवरी, 2003 को पारित निर्णय और डिक्री की पुष्टि कर दी, जिसके द्वारा विद्वान् सिविल न्यायाधीश (किनष्ठ खंड) ने प्रतिवादी-मदन लाल के पक्ष में वादी श्रीमती अमानी द्वारा तारीख 18 मई, 1990 को निष्पादित दत्तक विलेख रिजस्ट्री के रद्दकरण की ईप्सा हेतु वादी श्रीमती अमानी द्वारा फाइल किए गए वाद को खारिज कर दिया।

- 2. वर्तमान द्वितीय अपील अपीलार्थियों द्वारा फाइल की गई है, जो प्रतिवादी-मदन लाल के पक्ष में स्वयं द्वारा तारीख 10 मई, 1990 को निष्पादित दत्तक विलेख के रद्दकरण के संबंध में अपने दावे में समवर्ती खारिजी के विरुद्ध विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष वादी था । जो मूलतः भगवान राम का पुत्र है जो वादी श्रीमती अमानी के पित राम दयाल का छोटा भाई था ।
- 3. अपीलार्थी-वादी श्रीमती अमानी की 15 मार्च, 2014 को वर्तमान द्वितीय अपील के लंबित रहने के दौरान मृत्यु हो गई है और उसकी प्रश्नगत कृषक भूमि के खरीदारों ने अर्थात् कन्हैया राम पुत्र रेवत राम माली, चुन्नी लाल पुत्र सुखा राम माली और घासी राम पुत्र रेवत राम माली के उस स्थान पर अपीलार्थी के रूप में प्रतिस्थापित किया था।
- 4. श्रीमती अमानी ने तारीख 18 मई, 1990 के दत्तक विलेख को सिविल वाद सं. 22/1997 "श्रीमती अमानी पत्नी राम दयाल माली बनाम

मदन लाल" फाइल करके चुनौती दी थी जो विधिवत् रूप से रिजस्ट्रीकृत थी और जिसके अधीन राम दयाल की विधवा वादी-श्रीमती अमानी को प्रतिवादी-मदन लाल पुत्र भगवान राम माली को दत्तक होना कहा गया है । जो वादी के पित के छोटे भाई भगवान राम का पुत्र था क्योंकि वादी श्रीमती अमानी के पास कोई संतान नहीं थी । प्रश्नगत कृषक भूमि की बिक्री के बाद वर्तमान अपीलार्थियों अर्थात् कन्हैया राम पुत्र रेवत राम माली, चुन्नी लाल पुत्र सुखाराम माली और घासी राम पुत्र रेवत राम माली के पक्ष में वर्ष 1994-95 में दत्तक विलेख के रद्दकरण के लिए वर्तमान वाद वादी-श्रीमती अमानी द्वारा फाइल किया गया था । तथापि, विद्वान् विचारण न्यायालय ने तारीख 17 जनवरी, 2003 को विरचित विवाद्यक सं. 1 पर निम्नलिखित निष्कर्ष के साथ खारिज कर दिया :—

"*8. उभयपक्षों के विरोधाभासी तर्कों के पश्चात मेरी विनम्र राय में वादीनी ने अपने दावे व बयानों में जाहिर किया कि उसने अपनी जमीन बेची है जिसके विरुद्ध प्रतिवादी ने अलग-अलग जगहों पर दावे व अपीलें कर रखी हैं । वादीनी ने अपने बयानों में कहा कि वह गोदनामा खारिज करवाना चाहती है क्योंकि उसने जमीन राजीखुशी बेच दी है और अब वह इस गोदनामे को निरस्त करवाना चाहती है व इस बात को सही स्वीकार किया है कि ओसियां में लिखा-पढी करवाई थी । तहसीलदार ने गोदनामे के दस्तावेज का अंकन प्रस्तुतकर्ता श्री मुसम्मात अमानी बेवा राम दयाल माली निवासी बींजवाडिया द्वारा मदन लाल पुत्र भगवान राम जाति माली निवासी बींजवाडिया के हक में गोदनामा दस्तावेज पेश किया और यह बात मेरे को सुनवाई और अंगुठा करवाया था और यह भी स्वीकार किया कि जमीन बेची उसके पहले कोई लड़ाई-झगड़ा नहीं था । वादीनी के गवाहान पी. डब्ल्यू.-2 नारायणलाल, पी. डब्ल्यू.-3 बाबूराम, पी. डब्ल्यू.-4 मदन लाल व पी. डब्ल्यू.-5 चुन्नीलाल सिर्फ यहां जाहिर करते हैं कि उनके सामने गोदनामे की रस्म नहीं हुई थी । गवाह बाबूराम पी. डब्ल्यू.-3 ने जिरह में कहा है कि यह सही है कि अमानी ने पहले गोद की रजिस्ट्री करवाई उसे खारिज करने हेतु यह दावा किया । प्रतिवादी के गवाह किशनदत्त एडवोकेट ने अमानी द्वारा स्वेच्छा से दस्तावेज लिखाना व रजिस्ट्री करवाना व सारी कार्रवाई विधिवत करवाना बताया है ।

^{*} यह पाठ मूल निर्णय से हू-ब-हू लिया गया है ।

9. उपरोक्त समस्त विवेचन के आधार पर मेरी विनम्र राय में वादीनी ने प्रतिवादी मदन लाल को गोद लिया था व स्वेच्छा से गोदनामा रिजस्टर्ड करवाया था बाद में जब वादीनी ने अपनी जमीन बेची तो उसके गोद पुत्र मदन लाल ने एतराज किया व वाद व अपीलें पेश कीं जिससे क्षुब्ध होकर वादीनी ने यह वाद गोदनामा निरस्त करने के लिए पेश किया । अतः यह तनकी वादीनी के विरुद्ध निर्णीत की जाती है ।

आदेश

13. अतः वादीनी का वाद विरुद्ध प्रतिवादी बाबत निरस्त करने गोदनामा अस्वीकार कर सव्यय खारिज किया जाता है । नियमानुसार डिक्री पर्चा मुर्तिब किया जावे ।

हस्ताक्षर

(अजीज खान मेहर) सिविल न्यायाधीश (क-ख) एवं न्यायिक मजिस्ट्रेट, ओसियां ।"

5. विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा तारीख 17 जनवरी, 2003 को पारित निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर, वादी-श्रीमती अमानी ने विद्वान् प्रथम अपीली न्यायालय, अपर जिला न्यायाधीश सं. 2 जोधपुर अर्थात् अपील (डिक्री) सं. 16/2003 के समक्ष प्रथम अपील फाइल की थी जिसे तारीख 21 अक्तूबर, 2005 को खारिज कर दिया, निम्नलिखित रीति में विद्वान् विचारण न्यायालय के समवर्ती निष्कर्षों को परिपुष्ट करते हुए :—

"*7. तनकी संख्या एक :

तनकी संख्या एक के निर्धारण में अधीनस्थ न्यायालय के गवाहान की मौखिक साक्ष्य का विवेचन किया है । पी. ङ 1 अमानी ने मुख्य परीक्षा में गोदनामा धोखे से करवाना बताया व न्यात में गोद की रस्म नहीं होना बताया । प्रतिपरीक्षा में तहसीलदार ने गोद राजी-खुशी लिखवाने की बात पूछी हो तो याद नहीं होना, गोदनामा के समय मंगला व तुलसाराम का साथ होने की बात सही होना, सब रिजस्ट्रार के यहां गोदनामा का दस्तावेज पेश किया तब गोदनाम की बात सुनकर अंगूठा करवाने की बात पी. ङ 1 स्वीकार करती है । जमीन बेची उसके पहले कोई लड़ाई-झगड़ा नहीं होना तथा भगवान

[ं] यह पाठ मूल निर्णय से हू-ब-हू लिया गया है ।

राम व मदन लाल का राजी-खुशी रहना पी. ङ 1 बताती है । अतः यह स्थिति स्पष्ट होती है कि मदन लाल वादिया के पास खेती की जमीन थी तब ही उसका दत्तक पुत्र बना था । वादिया ने उस जमीन का सन 1994 में बैचयान किया व दत्तक पुत्र के नाते प्रतिवादी ने राजस्व न्यायालय में कार्यवाही कर दी तब वादीनी ने गोदनामा निरस्तीकरण का वाद पेश किया है । वादीया को विधि अनुसार पंजीबद्ध गोदनामा पढ़कर सुनाया गया व गोदनामा वादीया ने राजी-खुशी निष्पादित किया यह स्थिति पी. ङ 1 के कथनों से पुष्ट होती है । अधीनस्थ न्यायालय ने भी तनकी संख्या 1 के विवेचन में वादीया के कथनों पर बल देते हुए यह माना है कि गोदनाम वादीया ने राजी-खुशी निष्पादित करवाया इस प्रकरण में गोद की वैधानिकता को कोई चुनौती वादी पक्ष ने नहीं दी है केवल गोदनामा धोखे से निष्पादित करवाया गया यही विवाद उत्पन्न था । अतः गवाहान को मौखिक साक्ष्य गोदनामा की रस्म हुई या नहीं इस बाबत वादी व प्रतिवादी के गवाह विरोधाभासी मौखिक कथन देते हैं जो मौखिक साक्ष्य रजिस्टर्ड गोदनामा की तुलना में किसी महत्व की नहीं है । वादीनी के गवाह मदन लाल को कभी गोद नहीं लिया जाने कहते व गोद की रस्म नहीं होना कहते हैं । जब कि प्रतिवादी के सभी गवाह गोद की रस्म विधिवत होना बताते हैं । रजिस्टर्ड गोदनामा के चार वर्ष बाद ही दोनों पक्षों में विवाद हो गया । अतः अधीनस्थ न्यायालय द्वारा तनकी संख्या 1 पर गवाहान की मौखिक साक्ष्य व रजिस्टर्ड गोदनामे के आधार पर जो निर्धारण तनकी संख्या 1 पर किया है वह निर्धारण पूर्णतया विधिसम्मत है । वादीनी ने स्वेच्छा से गोदनामा पंजीबद्ध करवाया यह स्थिति वादीनी के कथनों से ही पुष्ट होती है अतः इस तनकी पर अधीनस्थ न्यायालय का निर्धारण यथावत पुष्ट किया जाता है।

आदेश

अपीलार्थी की यह अपील अस्वीकार की जाकर अधीनस्थ न्यायालय का निर्णय व डिक्री पर्चा दिनांक 17.1.2003 का पुष्ट किया जाता है । निर्णय अनुसार डिक्री पर्चा तैयार किया जावे एवं खर्चा अपील पक्षकार स्वयं वहन करेंगे ।

हस्ताक्षर

(यशपाल सिंह चौधरी) अपर जिला न्यायाधीश संख्या-2 जोधपुर ।"

- 6. दोनों निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित किए गए समवर्ती निष्कर्षों और निर्णयों व डिक्रियों के विरुद्ध व्यथित होकर, वादी-श्रीमती अमानी ने तारीख 2 जनवरी, 2006 को इस न्यायालय में वर्तमान द्वितीय अपील फाइल की थी जो पर्याप्त अविध के लिए त्रुटि पक्ष पर शेष है और जिसे तारीख 27 मई, 2011 को ही न्यायालय द्वारा विचार करने के लिए लिया जाना था तथा अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा अनुमित के लिए भी तर्क देने के तत्पश्चात् चार वर्ष लिए गए हैं।
- 7. अपीलार्थी-वादी, श्रीमती अमानी की ओर से पेश हुए विद्वान काउंसेल श्री सी. आर. जाखड़ ने यह निवेदन किया है कि विद्वान निचले न्यायालयों ने पक्षकारों की ओर से अवलंब साक्ष्य का मृल्यांकन न करने में भारी गलती की है और दत्तक विलेख रजिस्ट्रीकृत दस्तावेजी साक्ष्य की प्रक्रिया की है। विद्वान काउंसेल ने यह निवेदन किया है कि दत्तक विलेख की रजिस्ट्री एक विधिमान्य दत्तक नहीं बन जाती है और चुंकि दत्तक का तथ्य प्रतिवादी-मदन लाल द्वारा साबित नहीं किया गया था, जिसके ऊपर इस झुठे विवाद्यक को साबित करने का भार था । इसलिए वादी-श्रीमती अमानी ने यह अभिकथित किया है कि दत्तक विलेख पर अंग्ठे का निशान उस पर कपट करके लिया गया था और उसे उक्त दस्तावेज पर अंगूठे का निशान उसको गुमराह करके लिया था जो सक्षम प्राधिकारी के समक्ष कृषक भूमि पर बिजली कनेक्शन लेने के लिए आवेदन को उसके समक्ष रखते हुए प्रस्तुत किया था । विद्वान काउंसेल ने यह भी निवेदन किया है कि मामले की परिस्थितियों में और श्रीमती अमानी के अभिकथन को ध्यान में रखते हुए कि उसने उसके ऊपर कपट करके निष्पादन प्राप्त किया था । दत्तक विलेख इसकी रजिस्ट्री के आधार पर मात्र विधिमान्य किए जाने के लिए अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है और जो अभिखंडित और रदद किए जाने योग्य है किंतु विद्वान निचले न्यायालयों ने वादी के वाद को विधिमान्य और खारिज किए जाने के लिए दत्तक विलेख को अभिनिर्धारित करने में गलती की है । विद्वान काउंसेल ने अनेकों दलीलों के समर्थन में निम्नलिखित निर्णय को अर्थात, मदन लाल बनाम श्रीमती गोपी और अन्य¹, श्याम सुन्दर मिश्रा बनाम श्रीबचा मिश्रा², पेंटाकोटा सत्यनारायण और अन्य बनाम पेंटाकोटा सीता रतनाम और अन्य³ और मोहन लाल और

¹ ए. आई. आर. 1980 एस. सी. 1754.

² 2002 (3) सिविल न्यायालय मामला 334 (उड़ीसा).

³ 2006 (1) सिविल न्यायालय मामला 563 (एस. सी.).

अन्य बनाम श्रीमती रहीसा बेगम और अन्य¹ वाले मामलों का अवलंब लिया है ।

- 8. विद्वान् काउंसेल श्री सी. आर. जाखड़ ने यह भी निवेदन किया है कि प्रथम अपीली न्यायालय पक्षकारों द्वारा विचारण न्यायालय के समक्ष लिए गए अवलंब साक्ष्य का पुनः मूल्यांकन करने में असफल रहा हो तो यह न्यायालय सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन फाइल की गई इस द्वितीय अपील के विस्तार में और श्रीमती अमानी और अन्य साक्षियों के अभिकथनों को परिशीलन करने में ऐसा कर सकता हो । विद्वान् काउंसेल श्री सी. आर. जाखड़ ने यह तर्क किया हो कि निचले न्यायालयों के निष्कर्ष की विकृति को वर्तमान द्वितीय अपील में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित किए जाने वाले विधि के सारवान् प्रश्न को उद्भूत कर देता है।
- 9. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी-प्रतिवादी-मदन लाल की ओर से उपस्थित हुए विद्वान् काउंसेल श्री यशवंत मेहता ने माननीय उच्चतम न्यायालय के बुजेन्द्र सिंह बनाम मध्य प्रदेश राज्य और अन्य² वाले मामले और इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ के कृष्ण लाल और अन्य बनाम राजाराम **और अन्य**³ वाले मामले का अवलंब लिया है तथा यह निवेदन किया है कि हिन्दु दत्तक और भरण-पोषण अधिनियम, 1956 की धारा 16 सक्षम प्राधिकारी द्वारा दस्तावेजों के रजिस्ट्रीकरण के आधार पर ऐसे दत्तक के पक्ष में एक प्रबल उपधारणा प्रस्तृत करती है जिसे वादी-श्रीमती अमानी द्वारा अप्रमाणित किया जाना था किन्तु वादी दोनों निचले न्यायालयों के समक्ष दस्तावेज, दत्तक विलेख रजिस्ट्रीकरण को नासाबित करने के लिए पूर्णरूप से असफल रहा है और इस प्रकार, वाद दोनों निचले न्यायालयों ने खारिज कर दिया तथा वे इस न्यायालय द्वारा किए जाने वाले विधि के सारवान प्रश्न के योग्य नहीं हो जाते हैं । इस न्यायालय के समक्ष विद्वान काउंसेल ने यह तर्क दिया हो कि प्रश्नगत दत्तक विलेख जिसको उप-रजिस्ट्रार आसियन से विधिवत रूप से रजिस्ट्रीकृत कराया था और यह तर्क दिया कि इस दस्तावेज को साबित करने का भार प्रतिवादी के ऊपर नहीं डाला जा सकता है क्योंकि दत्तक विलेख के रद्दकरण की ईप्सा के लिए वर्तमान वाद को वर्ष 1997 में भूमि के ऐसे क्रय के बाद कृषक भूमि के खरीदारों के आग्रह पर वादी-श्रीमती अमानी ने फाइल किया

¹ 2011 (2) आर. आर. टी. 1035.

² ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 1056.

³ 1996 (2) आर. एल. डब्ल्यू. 213.

था । विद्वान् काउंसेल ने यह भी निवेदन किया है कि वर्तमान अपीलार्थियों के पक्ष में विक्रय की गई भूमि के संबंध में राजस्व वाद और अपीलें उनके पक्ष में रूपांतरित थीं जो और संबंधित राजस्व प्राधिकारियों के समक्ष लंबित हैं।

- 10. पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुनते हुए और आक्षेपित निर्णयों तथा निचले न्यायालयों के अभिलेख को डिक्री के रूप में और सािक्षयों के अभिकथनों के कुछ बाद में उद्धृत निर्णयों का परिशीलन करते हुए जो इस न्यायालय के समक्ष पढ़े गए थे और रिजस्ट्रीकृत दस्तावेज, दत्तक विलेख इस न्यायालय के समक्ष परिशीलन के लिए रखे गए थे । इस न्यायालय का समाधान हो गया है कि अपीलार्थी-वादी-श्रीमती अमानी द्वारा फाइल की गई वर्तमान द्वितीय अपील में इस न्यायालय द्वारा विचारण के लिए विधि का सारवान् प्रश्न उद्भूत नहीं होता है।
- 11. वादी-श्रीमती अमानी ने दत्तक विलेख और रजिस्ट्रीकृत दस्तावेज के रद्दकरण के लिए पूर्वोक्त वाद फाइल किया था । वादी को दत्तक विलेख की विषय-वस्तू को नासाबित करने के लिए मुख्य सुसंगत साक्ष्य द्वारा अवसर मिला था जिसकी वर्ष 1990 में रजिस्ट्री हुई थी । यह ध्यान में आया है कि प्रतिवादी-मदन लाल का दत्तक, सुसंगत साक्षियों की उपस्थिति में धार्मिक विधि के अनुसार औपचारिक रूप से हुआ था जो विचारण न्यायालय के समक्ष पेश भी हुए थे । प्रतिवादी-मदन लाल के दत्तक का तथ्य साबित हो गया और इसमें रजिस्ट्रीकृत दस्तावेज विधिवत रूप में होने से इसके निष्पादन की उपधारणा मजबत हो जाती है और इसलिए, वादी-श्रीमती अमानी के दत्तक के बारे में निष्कर्ष तथ्यों के आधार पर निष्कर्ष हैं । वादी-श्रीमती अमानी द्वारा अधिकथित मिथ्या निरूपण या कपट के बारे में निष्कर्षों को दोनों निचले न्यायालयों ने वादी-अमानी के विरुद्ध दिए हैं जो अभिलेख पर तथ्यों और सामग्री के आधार पर ही दिए हैं, विशेष रूप से रजिस्ट्रीकृत दत्तक विलेख को अन्य साक्ष्यों से अलग नहीं किया जा सकता है और इस न्यायालय द्वारा निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित किए गए निर्णयों में कोई विकृति नहीं देखी जा सकती है इसमें विकृति को ध्यान में रखते हुए तथ्यों के निष्कर्षों को देखने के लिए वाद के अभिलेख पर कोई प्रतिकूल सामग्री उपलब्ध नहीं है । इसलिए इस न्यायालय का यह मत है कि वादी-श्रीमती अमानी की ओर से फाइल की गई वर्तमान द्वितीय अपील किसी गुणागुण रहित होने और खारिज किए जाने योग्य है।

12. तद्नुसार और पूर्वोल्लिखित चर्चाओं को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय अपीलार्थी-वादी श्रीमती अमानी द्वारा फाइल की गई द्वितीय अपील को खारिज करता है । खर्चों के लिए कोई आदेश नहीं किया जाता है । इस आदेश की प्रति दोनों निचले न्यायालयों और संबंधित पक्षकारों को तुरन्त भेजी जाए ।

अपील खारिज की गई ।

मही./पा.

(2015) 2 सि. नि. प. 206

राजस्थान

विजय कांत मीणा

बनाम

राजस्थान राज्य और एक अन्य

तारीख 29 सितम्बर, 2015

न्यायमूर्ति संदीप मेहता

संविधान, 1950 — अनुच्छेद 226 — रिट — राजस्थान सरकार स्वास्थ्य विभाग में विभिन्न पदों के लिए विज्ञापन — रिक्तियों का विज्ञापन करते समय जनजातीय उप-योजना और गैर-जनजातीय उप-योजना क्षेत्रों में आरिक्षत सीटों की संख्या का उल्लेख न किया जाना — नियमों के अनुसार गैर-जनजातीय उप-योजना क्षेत्र में मेधावी अभ्यर्थियों की नियुक्ति — जहां विज्ञापन में आरिक्षत सीटों का पृथक् रूप से उल्लेख नहीं किया गया हो वहां यदि मेधावी उम्मीदवार को उसकी इच्छानुसार तैनाती की जाती है तो यह विधिमान्य और समृचित होगा।

वर्तमान मामले में, याची जनजातीय उप-योजना क्षेत्रों से आने वाले अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के मेधावी उम्मीदवार हैं और जिन्होंने नर्स ग्रेड-2 के 15773 पदों, लोक स्वास्थ्य नर्स के 200 पदों और महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता के 12278 पदों के विरुद्ध आवेदन करके प्रत्यर्थी प्राधिकारियों द्वारा जारी किए गए तारीख 26 फरवरी, 2013 के विज्ञापन के अनुसरण में नर्स ग्रेड-2 के रूप में नियुक्ति के लिए निवेदन किया था।

प्रत्यर्थियों ने रिक्तियों का विज्ञापन करते हुए, उपर्युक्त अधिसूचना के अनुरूप में जनजातीय उप-योजना और गैर-जनजातीय उप-योजना क्षेत्रों के लिए सीटों की संख्या के अनुपात को विशेष रूप से उल्लेख नहीं किया था । तथापि, विज्ञापन के पैरा संख्या 4(12) में यह उल्लिखित किया था कि जनजातीय उप-योजना क्षेत्र के लिए आरक्षण तारीख 12 सितम्बर, 2007 की सरकारी अधिसूचना के अनुसार उपलब्ध होगा । इस प्रकार, एक विकल्प चिन्हित करने के लिए अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति अभ्यर्थियों को जनजातीय उप-योजना क्षेत्र के लिए कोई विकल्प उपलब्ध नहीं था कि क्या वे जनजातीय उप-योजना क्षेत्र आरक्षित रिक्तियों के विरुद्ध या सीटों के गैर-जनजातीय उप-योजना क्षेत्र आरक्षित कोटे के विरुद्ध नियुक्ति चाहने वाले की प्रतिस्पर्धा के इच्छुक थे । अस्थायी मेरिट सूची जारी करते हुए, प्रत्यर्थियों ने भिन्न-भिन्न श्रेणियों के लिए पृथक् कट ऑफ मार्क प्रकाशित की । इससे व्यथित होकर याचियों ने यह याचिका फाइल की । न्यायालय द्वारा रिट याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – वर्तमान मामले में, याचियों ने इन रिट याचिकाओं में यह शिकायत उद्भूत की है कि आरक्षण मापदण्ड के अनुचित आवेदन के परिणाम से घोर विसंगति हुई है । याचियों के अनुसार, तारीख 12 सितम्बर, 2007 की अधिसूचना के माध्यम से जनजातीय उप-योजना क्षेत्रीय आरक्षण शुरू करने का प्रयोजन जनजातीय क्षेत्रों के रहने वाले अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के व्यक्तियों से था जिसका उन्हें अतिरिक्त लाभ दिया जाना चाहिए और उन्हें सरकारी नौकरियां हासिल करने के लिए कम प्रतिस्पर्धा का सामना करना चाहिए ताकि उनके उत्थान को सुनिश्चित किया जा सके । विद्वान काउंसेल ने यह दलीलें दी हैं कि आरक्षण मापदण्ड के त्रृटिपूर्ण आवेदन के कारण, जनजातीय उप-योजना क्षेत्रीय आरक्षण का संपूर्ण प्रयोजन को विफल कर दिया गया है, यहां तक कि जनजातीय उप-योजना क्षेत्रों से आने वाले जनजातियों के लिए कट ऑफ गैर-जनजातीय उप-योजना क्षेत्र में इन श्रेणियों के लिए कट ऑफ की अपेक्षा बह्त उच्चतर स्तर पर नियत किया गया है, जिसके द्वारा जनजातीय उप-योजना क्षेत्र आरक्षण के लिए प्रदान करने वाली अधिसूचना का प्रयोजन ही पूर्ण रूप से नियम विरुद्ध अनुचित प्रतिकूल परिस्थिति पैदा करता है । याचियों के अनुसार, समुचित तरीका सामान्य मेरिट सूची तैयार करके संपूर्ण राज्य के अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के

उम्मीदवारों की अभ्यर्थिता पर पहले विचार किया जाना चाहिए था । जिसके द्वारा, जनजातीय उप-योजना क्षेत्रों में रहने वाले इन श्रेणियों में अधिक मेधावी व्यक्ति अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजातियों के अभ्यर्थियों के लिए राज्यवार आरक्षित सीटों के विरुद्ध अपना दावा करने में समर्थ होते । तत्पश्चात, उनकी योग्यता के आधार पर राज्यवार अनुसूचित जाति/ अनुसूचित जनजाति श्रेणी में उन चयनित नामों को छोड़कर, एक पृथक मेरिट सूची जनजातीय उप-योजना क्षेत्रीय अभ्यर्थियों में से तैयार की जानी चाहिए थी । याचियों ने दावे के साथ यह कहा है कि जनजातीय उप-योजना क्षेत्रीय आरक्षण का सम्चित और सार्थक लाभ इस प्रक्रिया का अनुसरण करते हुए ही जनजातीय क्षेत्र के अभ्यर्थियों के लिए बढ़ाया जा सकता है । यह तर्क इस आधार पर निर्मित है कि आवेदन फार्म आमंत्रित करते हुए, महत्वाकांक्षी अभ्यर्थियों से किसी भी विकल्प का प्रयोग करने के लिए नहीं पूछा था कि क्या वे जनजातीय उप-योजना क्षेत्र के लिए आरक्षित सीटों के विरुद्ध ही विचार किए जाने के इच्छुक थे या सीटों के राज्यवार आरक्षित कोटे में लागू कराने का आशय था । श्री के. एल. ठाकुर, विद्वान सहायक महाधिवक्ता ने स्पष्ट रूप से और निष्पक्ष रूप से यह माना है कि सीटों का विभाजन और जनजातीय उप-योजना क्षेत्र के लिए पृथक मेरिट सूची की घोषणा तथा गैर-जनजातीय उप-योजना क्षेत्र आरक्षित कोटा अन्चित स्थिति के कारण हुआ है क्योंकि अनुसूचित जनजातीय क्षेत्र में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लिए कट ऑफ गैर-जनजातीय क्षेत्र आरक्षित श्रेणी सीटों (एस.सी./एस.टी.) के लिए कट ऑफ की तुलना में बहुत अधिक निर्धारित किया गया है । इस प्रकार उसने यह प्रस्ताव दिया है कि इसमें विसंगति दूर करने के अभ्यास का संचालन करना राज्य के लिए सम्चित होगा । उसने यह सुझाव दिया है कि अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति श्रेणी के उन जनजातीय उप-योजना क्षेत्र के अभ्यर्थियों को जिन्होंने गैर-जनजातीय उप-योजना क्षेत्रों के लिए घोषित कट ऑफ की अपेक्षा अधिक अंक प्राप्त किए हैं उनको गैर-जनजातीय उप-योजना क्षेत्र मेरिट सूची में स्थानांतरण कर देना चाहिए जिसके द्वारा जनजातीय उप-योजना क्षेत्र आरक्षित सीटों को छोड़ने से होने वाली रिक्ति को उन क्षेत्रों से आने वाले कम मेधावी अभ्यर्थियों द्वारा भरा जाना चाहिए । उसने यह निवेदन किया है कि ऐसा करने से, विसंगति दूर हो जाएगी और जनजातीय उप-योजना क्षेत्र आरक्षण का उचित और सार्थक लाभ जनजातीय क्षेत्र के अभ्यर्थियों को मिलेगा । श्री ठाकुर ने यह निवेदन किया है कि इस समय, केवल अस्थायी मेरिट सूची तैयार की गई है और अंतिम मेरिट सूची तैयार करने का कार्य अभी तक लंबित है । पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल द्वारा दिए गए पूर्ववर्ती निवेदनों और श्री ठाकुर, विद्वान् सहायक महाधिवक्ता द्वारा दी गई निष्पक्ष रियायत को ध्यान में रखते हुए, रिट याचिकाएं मंजूर की जाती हैं । तद्द्वारा यह निदेश दिया जाता है कि अंतिम मेरिट सूची तैयार करते हुए, जनजातीय उप-योजना क्षेत्रों से आने वाले अधिक मेधावी अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजातियों के अभ्यर्थियों को गैर-जनजातीय उप-योजना क्षेत्रों में इन श्रेणियों के लिए सीटें आरक्षित करके स्थानांतरित करना होगा और जिसके द्वारा जनजातीय उप-योजना क्षेत्रों में से आने वाले कम मेधावी अभ्यर्थियों को सीटों के जनजातीय उप-योजना आरक्षित कोटे के विरुद्ध नियुक्ति प्राप्त करने का एक अवसर मिल जाएगा । (पैरा 4, 5 और 6)

आरंभिक (सिविल) रिट अधिकारिता : 2015 की एस. बी. सिविल रिट याचिका सं. 3249.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन सिविल रिट याचिका ।

याचियों की ओर से

श्री आर. आर. मेहता

प्रत्यर्थियों की ओर से

सर्वश्री के. एल. ठाकुर और के. एल. विश्नोई

न्यायमूर्ति संदीप मेहता — इसमें याची जनजातीय उप-योजना क्षेत्रों से आने वाले अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के मेधावी उम्मीदवार हैं और जिन्होंने नर्स ग्रेड-2 के 15773 पदों, लोक स्वास्थ्य नर्स के 200 पदों और महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता के 12278 पदों के विरुद्ध आवेदन करके प्रत्यर्थी प्राधिकारियों द्वारा जारी किए गए तारीख 26 फरवरी, 2013 के विज्ञापन के अनुसरण में नर्स ग्रेड-2 के रूप में नियुक्ति के लिए निवेदन किया था।

2. याचियों ने आवेदन फार्म भरते हुए प्रथम श्रेणी अर्थात् नर्स ग्रेड-II के विरुद्ध आवेदन किया था । चूंकि याची जनजातीय उप-योजना क्षेत्रों से आते हैं इसलिए, उन्होंने जनजातीय उप-योजना अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के रूप में, जैसी भी स्थिति हो, अपनी श्रेणी भरी थी ।

- 3. भारत के संविधान के अनुच्छेद 244(1) के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए, राजस्थान के राज्यपाल द्वारा जारी किए गए तारीख 12 सितम्बर, 2007 की अधिसूचना के अधीन, जनजातीय उप-योजना क्षेत्र में सीटों में से 50 प्रतिशत इन क्षेत्रों के अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति श्रेणी के स्थायी निवासियों के लिए आरक्षित किए जाने के निदेश दिए गए थे।
- 4. प्रत्यर्थियों ने रिक्तियों का विज्ञापन करते हुए, उपर्युक्त अधिसूचना के अनुरूप में जनजातीय उप-योजना और गैर-जनजातीय उप-योजना क्षेत्रों के लिए सीटों की संख्या के अनुपात को विशेष रूप से उल्लेख नहीं किया था । तथापि, विज्ञापन के पैरा संख्या 4(12) में यह उल्लिखित किया था कि जनजातीय उप-योजना क्षेत्र के लिए आरक्षण तारीख 12 सितम्बर, 2007 की सरकारी अधिसूचना के अनुसार उपलब्ध होगा । इस प्रकार, एक विकल्प चिन्हित करने के लिए अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति अभ्यर्थियों को जनजातीय उप-योजना क्षेत्र के लिए कोई विकल्प उपलब्ध नहीं था कि क्या वे जनजातीय उप-योजना क्षेत्र आरक्षित रिक्तियों के विरुद्ध या सीटों के गैर-जनजातीय उप-योजना आरक्षित कोटे के विरुद्ध नियुक्त चाहने वाले की प्रतिस्पर्धा के इच्छ्क थे । अस्थायी मेरिट सूची जारी करते हुए, प्रत्यर्थियों ने भिन्न-भिन्न श्रेणियों के लिए पृथक कट ऑफ मार्क प्रकाशित की । गैर-जनजातीय उप-योजना क्षेत्र में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति श्रेणियों के लिए कट ऑफ मार्क 58.7756 नियत किया गया है जो जनजातीय उप-योजना क्षेत्र में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति श्रेणियों के लिए कट ऑफ की अपेक्षा काफी कम है, जो 62.3057 पर नियत किया गया है । याचियों ने इन रिट याचिकाओं में यह शिकायत उदभूत की है कि आरक्षण मापदण्ड के अनुचित आवेदन के परिणाम से घोर विसंगति हुई है । याचियों के अनुसार, तारीख 12 सितम्बर, 2007 की अधिसुचना के माध्यम से जनजातीय उप-योजना क्षेत्रीय आरक्षण शुरू करने का प्रयोजन जनजातीय क्षेत्रों के रहने वाले अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के व्यक्तियों से था जिसका उन्हें अतिरिक्त लाभ दिया जाना चाहिए और उन्हें सरकारी नौकरियां हासिल करने के लिए कम प्रतिस्पर्धा का सामना करना चाहिए ताकि उनके उत्थान को सुनिश्चित किया जा सके । विद्वान् काउंसेल ने यह दलीलें दी हैं कि आरक्षण मापदण्ड के त्रुटिपूर्ण आवेदन के कारण, जनजातीय उप-

योजना क्षेत्रीय आरक्षण का संपूर्ण प्रयोजन को विफल कर दिया गया है, यहां तक कि जनजातीय उप-योजना क्षेत्रों से आने वाले जनजातियों के लिए कट ऑफ गैर-जनजातीय उप-योजना क्षेत्र में इन श्रेणियों के लिए कट आफ की अपेक्षा बहुत उच्चतर स्तर पर नियत किया गया है, जिसके द्वारा जनजातीय उप-योजना क्षेत्र आरक्षण के लिए प्रदान करने वाली अधिसूचना का प्रयोजन ही पूर्ण रूप से नियमविरुद्ध अनुचित प्रतिकूल परिस्थिति पैदा करता है । याचियों के अनुसार, समुचित तरीका सामान्य मेरिट सूची तैयार करके संपूर्ण राज्य के अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के उम्मीदवारों की अभ्यर्थिता पर पहले विचार किया जाना चाहिए था । जिसके द्वारा, जनजातीय उप-योजना क्षेत्रों में रहने वाले इन श्रेणियों में अधिक मेधावी व्यक्ति अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजातियों के अभ्यर्थियों के लिए राज्यवार आरक्षित सीटों के विरुद्ध अपना दावा करने में समर्थ होते । तत्पश्चात्, उनकी योग्यता के आधार पर राज्यवार अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति श्रेणी में उन चयनित नामों को छोड़कर, एक पृथक मेरिट सूची जनजातीय उप-योजना क्षेत्रीय अभ्यर्थियों में से तैयार की जानी चाहिए थी । याचियों ने दावे के साथ यह कहा है कि जनजातीय उप-योजना क्षेत्रीय आरक्षण का समुचित और सार्थक लाभ इस प्रक्रिया का अन्सरण करते हुए ही जनजातीय क्षेत्र के अभ्यर्थियों के लिए बढ़ाया जा सकता है । यह तर्क इस आधार पर निर्मित है कि आवेदन फार्म आमंत्रित करते हुए, महत्वाकांक्षी अभ्यर्थियों से किसी भी विकल्प का प्रयोग करने के लिए नहीं पूछा था कि क्या वे जनजातीय उप-योजना क्षेत्र के लिए आरक्षित सीटों के विरुद्ध ही विचार किए जाने के इच्छ्क थे या सीटों के राज्यवार आरक्षित कोटे में लागू कराने का आशय था ।

5. श्री के. एल. ठाकुर, विद्वान् सहायक महाधिवक्ता ने स्पष्ट रूप से और निष्पक्ष रूप से यह माना है कि सीटों का विभाजन और जनजातीय उप-योजना क्षेत्र के लिए पृथक् मेरिट सूची की घोषणा तथा गैर-जनजातीय उप-योजना क्षेत्र आरक्षित कोटा अनुचित स्थिति के कारण हुआ है क्योंकि अनुसूचित जनजातीय क्षेत्र में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लिए कट ऑफ गैर-जनजातीय क्षेत्र आरक्षित श्रेणी (एस.सी./एस.टी.) के सीटों के लिए कट ऑफ की तुलना में बहुत अधिक निर्धारित किया गया है । इस प्रकार उसने यह प्रस्ताव दिया है कि इसमें विसंगति दूर करने के अभ्यास का संचालन करना राज्य के लिए समुचित होगा । उसने यह

सुझाव दिया है कि अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति श्रेणी के उन जनजातीय उप-योजना क्षेत्र के अभ्यर्थियों को जिन्होंने गैर-जनजातीय उप-योजना क्षेत्रों के लिए घोषित कट ऑफ की अपेक्षा अधिक अंक प्राप्त किए हैं उनको गैर-जनजातीय उप-योजना क्षेत्र मेरिट सूची में स्थानांतरण कर देना चाहिए जिसके द्वारा जनजातीय उप-योजना क्षेत्र आरक्षित सीटों को छोड़ने से होने वाली रिक्ति को उन क्षेत्रों से आने वाले कम मेधावी अभ्यर्थियों द्वारा भरा जाना चाहिए । उसने यह निवेदन किया है कि ऐसा करने से, विसंगति दूर हो जाएगी और जनजातीय उप-योजना क्षेत्र आरक्षण का उचित और सार्थक लाभ जनजातीय क्षेत्र के अभ्यर्थियों को मिलेगा । श्री ठाकुर ने यह निवेदन किया है कि इस समय, केवल अस्थायी मेरिट सूची तैयार की गई है और अंतिम मेरिट सूची तैयार करने का कार्य अभी तक लंबित है ।

- 6. पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल द्वारा दिए गए पूर्ववर्ती निवेदनों और श्री ठाकुर, विद्वान् सहायक महाधिवक्ता द्वारा दी गई निष्पक्ष रियायत को ध्यान में रखते हुए, रिट याचिकाएं मंजूर की जाती हैं । तद्द्वारा, यह निदेश दिया जाता है कि अंतिम मेरिट सूची तैयार करते हुए, जनजातीय उपयोजना क्षेत्रों से आने वाले अधिक मेधावी अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजातियों के अभ्यर्थियों को गैर-जनजातीय उप-योजना क्षेत्रों में इन श्रेणियों के लिए सीटें आरक्षित करके स्थानांतरित करना होगा और जिसके द्वारा जनजातीय उप-योजना क्षेत्रों में से आने वाले कम मेधावी अभ्यर्थियों को सीटों के जनजातीय उप-योजना आरक्षित कोटे के विरुद्ध नियुक्ति प्राप्त करने का एक अवसर मिल जाएगा । उपर्युक्त निदेशों और संशोधनों को अंतिम मेरिट सूची तैयार करते हुए लागू करना होगा जिसे आज से चार सप्ताह की अवधि के भीतर तैयार करना होगा ।
 - 7. खर्चों के लिए कोई आदेश नहीं किया जाता है।
 - 8. इस आदेश की एक प्रति प्रत्येक फाइल में रखी जाए ।

रिट याचिका मंजूर की गई।

मही./क.

न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड और अन्य

बनाम

त्रिपता देवी और अन्य

तथा

न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड और अन्य

बनाम

मोहिन्दर सिंह और अन्य

तारीख 1 अगस्त, 2014

मुख्य न्यायमूर्ति मंसूर अहमद मीर

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) — धारा 173 — दुर्घटना — अपराध करने वाले यान के पास विधिमान्य फिटनेस प्रमाणपत्र नहीं होना — प्रतिकर के लिए दायित्व — बीमा कंपनी द्वारा अपने दायित्व से इनकार करना — बीमा कंपनी, यान के स्वामी, बीमाकृत के किसी दोष के कारण प्रतिकर संदाय करने के अपने दायित्व से बच नहीं सकती है । तथापि, वह संदत्त प्रतिकर को बीमाकृत-यान के स्वामी से वसूल सकती है ।

वर्तमान मामले में, तारीख 13 दिसम्बर, 2009 को किशोर कुमार, चालक द्वारा बस जिसका रजिस्ट्रेशन संख्या एचपी-72-0187 को उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाते हुए, कालिया पेट्रोल पम्प, ऊना के सामने लगभग 4.00 बजे सायं को घटित हुई थी । जैसा अधिकथित किया गया है कि अपराध करने वाले बस ने मृतक जरनैल सिंह द्वारा चलाई जा रही स्कूटर और जिसकी पिछली सीट पर सवारी के रूप में बक्शो देवी यात्रा कर रही थी, को टक्कर मार दी, जिसके कारण जरनैल सिंह और बक्शो देवी वोनों को गंभीर क्षतियां पहुंचीं और बाद में उनकी मृत्यु हो गई । जरनैल सिंह और बक्शो देवी के दावेदारों ने दावा याचिका में दिए गए वर्णन के अनुसार क्रमशः 20 लाख रुपए और 10 लाख रुपए के लिए प्रतिकर का दावा करते हुए दावा याचिकाएं फाइल की थीं । प्रत्युत्तर फाइल करते हुए बीमाकर्ता-अपीलार्थी स्वामी और चालक ने दावा याचिका का विरोध किया । पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर, निचले अधिकरणों द्वारा विवाद्यक विरचित किए गए थे और पक्षकारों ने अपने-अपने साक्ष्य

प्रस्तुत किए थे । निचले अधिकरणों ने अभिलेख पर रखे गए साक्ष्यों की संवीक्षा करने के पश्चात् 2010 की दावा याचिका सं. 2 में दावेदार त्रिपता देवी और अन्य के पक्ष में 9 प्रतिशत ब्याज के साथ 3,77,000/- रुपए की राशि का प्रतिकर अधिनिर्णीत किया और क्रमशः 2011 की एफ. ए. ओ. संख्या 170 और 2011 की एफ. ए. ओ. संख्या 172 के मामले के आधार पर 2009 की दावा याचिका संख्या 5 में दावेदार मोहिन्दर सिंह और अन्य के पक्ष में 8 प्रतिशत की दर से ब्याज सिहत 3,56,000/- रुपए का अधिनिर्णय किया । इससे व्यथित होकर बीमाकर्ता ने दोनों अपीलें फाइल कीं । न्यायालय द्वारा दोनों अपीलें खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित — न तो दावेदारों ने और न ही चालक/स्वामी ने किसी भी आधार पर आक्षेपित अधिनिर्णय को प्रश्नगत किया । केवल बीमाकर्ता ने दोनों अधिनिर्णयों को इस आधार पर प्रश्नगत किया कि अपराध करने वाले यान के फिटनेस प्रमाणपत्र दुर्घटना की तारीख को विधिमान्य नहीं थे । बीमाकर्ता ने अधिकरण के समक्ष इस आधार को नहीं लिया है और न ही उस प्रभाव का कोई साक्ष्य प्रस्तुत किया यद्यपि, विवाद्यक संख्या 4, 5, 7 और 8 विरचित किए गए थे और उक्त विवाद्यकों की साबित करने की जिम्मेदारी बीमाकर्ता की थी जिसमें वह असफल रहा है । न्यायालय ने आक्षेपित अधिनिर्णयों का परिशीलन किया है, जो सकारण है और कायम रखे जाने योग्य हैं । उपरोक्त चर्चाओं को ध्यान में रखते हुए, इन दोनों अपीलों में कोई बल नहीं है और यह खारिज की जाती हैं । रिजस्ट्री आक्षेपित अधिनिर्णयों के निबंधनों में सख्ती से, दावेदारों के पक्ष में प्रतिकर की राशि जारी करने का निदेश देती है । इस निर्णय की एक प्रति 2011 की एफ. ए. ओ. संख्या 172 के अभिलेख पर रखी जाती है । (पैरा 6 और 7)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2011 की एफ. ए. ओ. संख्या 170 और 2011 की एफ. ए. ओ. संख्या 172.

मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से श्री प्रनीत गुप्ता

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री अजय शर्मा (2011 की एफ. ए.

ओ. सं. 170 में प्रत्यर्थी सं. 1 से 4

के लिए)

श्री नील कमल सूद (2011 की एफ.

ए. ओ. सं. 170 में प्रत्यर्थी सं. 6 के लिए)

श्री अजय शर्मा (2011 की एफ. ए. ओ. सं. 172 में प्रत्यर्थी सं. 1 से 5 के लिए)

श्री नील कमल सूद (2011 की एफ. ए. ओ. सं. 172 में प्रत्यर्थी सं. 7 के लिए)

मुख्य न्यायमूर्ति मंसूर अहमद मीर — इन दोनों अपीलों को बीमा कंपनी द्वारा फाइल किया गया है और इनका निपटारा एक साथ किया जा रहा है क्योंकि यह दोनों अपीलें एक ही यानीय दुर्घटना से उद्भूत हुई हैं । 2011 की एफ. ए. ओ. सं. 170 में, मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण-II, ऊना द्वारा तारीख 18 जनवरी, 2011 को पारित अधिनिर्णय को चुनौती दी गई है, जिसकी दावा याचिका संख्या 2/2010 में शीर्षक त्रिपता देवी और अन्य बनाम किशोर कुमार और अन्य हैं, तथा 2011 की एफ. ए. ओ. संख्या 172 में, बीमा कंपनी ने मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण, ऊना द्वारा पारित तारीख 31 जनवरी, 2011 के अधिनिर्णय को चुनौती दी है जो 2009 की दावा याचिका संख्या 5 में शीर्षक के रूप में मोहिन्दर सिंह और अन्य बनाम किशोर कुमार और अन्य हैं जिसमें और जिसके अधीन ये दोनों दावा याचिकाएं मंजूर की गई हैं (जिसे इसमें इसके पश्चात् "आक्षेपित आदेश" कहा गया हैं) ।

संक्षिप्त तथ्य

2. दोनों याचिकाएं एक ही यानीय दुर्घटना के कारण फाइल की गई हैं जो तारीख 13 दिसम्बर, 2009 को किशोर कुमार, चालक द्वारा बस जिसका रिजस्ट्रेशन संख्या एचपी-72-0187 को उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाते हुए, कालिया पेट्रोल पम्प, ऊना के सामने लगभग 4.00 बजे सायं को घटित हुई थी । जैसा अधिकथित किया गया है कि अपराध करने वाले बस ने मृतक जरनेल सिंह द्वारा चलाई जा रही स्कूटर और जिसकी पिछली सीट पर सवारी के रूप में बक्शो देवी यात्रा कर रही थी, को टक्कर मार दी, जिसके कारण जरनेल सिंह और बक्शो देवी दोनों को गंभीर क्षतियां पहुंचीं और बाद में उनकी मृत्यु हो गई । जरनेल सिंह और बक्शो देवी के दावेदारों ने दावा याचिका में दिए गए वर्णन के अनुसार

क्रमशः 20 लाख रुपए और 10 लाख रुपए के लिए प्रतिकर का दावा करते हुए दावा याचिकाएं फाइल की थीं ।

- 3. प्रत्युत्तर फाइल करते हुए बीमाकर्ता-अपीलार्थी स्वामी और चालक ने दावा याचिका का विरोध किया ।
- 4. पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर, निचले अधिकरणों द्वारा विवाद्यक विरचित किए गए थे और पक्षकारों ने अपने-अपने साक्ष्य प्रस्तुत किए थे।
- 5. निचले अधिकरणों ने अभिलेख पर रखे गए साक्ष्यों की संवीक्षा करने के पश्चात् 2010 की दावा याचिका सं. 2 में दावेदार त्रिपता देवी और अन्य के पक्ष में 9 प्रतिशत ब्याज के साथ 3,77,000/- रुपए की राशि का प्रतिकर अधिनिर्णीत किया और क्रमशः 2011 की एफ. ए. ओ. संख्या 170 और 2011 की एफ. ए. ओ. संख्या 172 के मामले के आधार पर 2009 की दावा याचिका संख्या 5 में दावेदार मोहिन्दर सिंह और अन्य के पक्ष में 8 प्रतिशत की दर से ब्याज सहित 3,56,000/- रुपए का अधिनिर्णय किया ।
- 6. न तो दावेदारों ने और न ही चालक/स्वामी ने किसी भी आधार पर आक्षेपित अधिनिर्णय को प्रश्नगत किया । केवल बीमाकर्ता ने दोनों अधिनिर्णयों को इस आधार पर प्रश्नगत किया कि अपराध करने वाले यान के फिटनेस प्रमाणपत्र दुर्घटना की तारीख को विधिमान्य नहीं थे । बीमाकर्ता ने अधिकरण के समक्ष इस आधार को नहीं लिया है और न ही उस प्रभाव का कोई साक्ष्य प्रस्तुत किया यद्यपि, विवाद्यक संख्या 4, 5, 7 और 8 विरचित किए गए थे और उक्त विवाद्यकों को साबित करने की जिम्मेदारी बीमाकर्ता की थी जिसमें वह असफल रहा है । मैंने आक्षेपित अधिनिर्णयों का परिशीलन किया है, जो सकारण है और कायम रखे जाने योग्य हैं ।
- 7. उपरोक्त चर्चाओं को ध्यान में रखते हुए, इन दोनों अपीलों में कोई बल नहीं है और यह खारिज की जाती हैं । रिजस्ट्री आक्षेपित अधिनिर्णयों के निबंधनों में सख्ती से, दावेदारों के पक्ष में प्रतिकर की राशि जारी करने का निदेश देती है । इस निर्णय की एक प्रति 2011 की एफ. ए. ओ. संख्या 172 के अभिलेख पर रखी जाती है ।

अपीलें खारिज की गईं।

मही./क.

नर्बदा देवी (श्रीमती)

बनाम

श्रीमती कमला देवी

तारीख 12 सितंबर, 2014

मुख्य न्यायमूर्ति मंसूर अहमद मीर

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) — धारा 173 — दुर्घटना — प्रतिकर के लिए दावा — बीमा कंपनी द्वारा अपने दायित्व से इनकार — बीमा कंपनी बीमाकृत के किसी दोष के कारण अपने दायित्व से भले ही इनकार करे, यदि वह प्रतिकर की धनराशि का संदाय करती है तो वह बीमा पालिसी की शर्तों के भंग के आधार पर बीमाकृत से ऐसी धनराशि वसूल सकती है ।

वर्तमान मामले में, 2005/2004 की मोटर दुर्घटना दावा याचिका सं. 77-एस/2 श्रीमती नर्बदा देवी बनाम श्रीमती कमला देवी और अन्य, शीर्षक में प्रतिकर पर्याप्तता के आधार पर मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण (फास्ट ट्रेक) शिमला, हिमाचल प्रदेश द्वारा तारीख 2 जनवरी, 2007 को पारित अधिनिर्णय के विरुद्ध यह अपील फाइल की गई । न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित — न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि अधिकरण ने मृतक की आय और आय की हानि का निर्धारण करने में गलती की है । इसे सुरक्षित रूप से अभिनिर्धारित किया जा सकता है कि मृतक की आय उसको मजदूर के रूप में मानते हुए 3,000/- रुपए प्रतिमास थी । उसने 50 प्रतिशत वैयक्तिक खर्चे कम करके 50 प्रतिशत की निर्भरता के स्रोत को खोया है इसलिए, यह अभिनिर्धारित किया है कि दावेदार ने 1,500/- रुपए प्रतिमास की राशि का निर्भरता के स्रोत को खोया है । स्वीकृततः मृतक की आयु दुर्घटना के समय 21 वर्ष थी और अधिकरण ने यह सही अभिनिर्धारित किया है कि मृतक की आयु 21 वर्ष थी किंतु समुचित गुणक लागू करने में गलती की है । सरला वर्मा वाले निर्णय के साथ पठित मोटर यान अधिनियम, 1988 में संलग्न अनुसूची के अनुसार "15" का गुणक लागू होता है । इस प्रकार, न्यायालय यह अभिनिर्धारित करता है कि इस मामले में "15" का गुणक लागू होगा । दी गई परिस्थितियों में, तद्द्वार, यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि दावेदार 1500×12×15 की धनराशि

के लिए प्रतिकर का हकदार है जिसकी सम्पूर्ण धनराशि अधिकरण के अधिनिर्णय द्वारा दावा याचिका फाइल करने की तारीख से वसूली होने तक 6 प्रतिशत वार्षिक ब्याज की दर से 2,70,000/- रुपए होती है । अन्य विवाद्यक, विवादित नहीं है । इस प्रकार, उक्त विवाद्यक अंतिमता प्राप्त कर लिए हैं और कायम रखे जाते हैं । तद्नुसार, प्रतिकर बढ़ाया जाता है और आक्षेपित अधिनिर्णय संशोधित किया जाता है जैसा कि उपर्युक्त उपदर्शित किया गया है । प्रत्यर्थी सं. 2 को इस न्यायालय के रजिस्ट्री में आठ सप्ताह के भीतर बढ़ाई गई राशि जमा करने का निदेश दिया जाता है । दावेदार के पक्ष में जारी की जाने वाली राशि को अदाता के खाते में चैक के माध्यम से जमा किया जाए । (पैरा 5, 6, 7, 8 और 9)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

4

[2013] 2013 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 3120 : रेशमा कुमारी और अन्य बनाम मदन मोहन और एक अन्य ;

[2009] ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 3104 :

सरला वर्मा बनाम दिल्ली सडक परिवहन निगम | 4

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2007 की एफ. ए. ओ. (एम. बी. ए.) सं. 75.

मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन अपील ।

अपीलार्थियों की ओर सेश्री बी. एस. चौहानप्रत्यर्थियों की ओर सेश्री दीपक भसीन

मुख्य न्यायमूर्ति मंसूर अहमद मीर — यह अपील 2005/2004 की मोटर दुर्घटना दावा याचिका सं. 77-एस/2, श्रीमती नर्बदा देवी बनाम श्रीमती कमला देवी और अन्य शीर्षक के प्रतिकर पर्याप्तता के आधार पर मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण (फास्ट ट्रेक) शिमला, हिमाचल प्रदेश द्वारा तारीख 2 जनवरी, 2007 को पारित अधिनिर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है, (जिसे इसमें इसके पश्चात् "आक्षेपित अधिनिर्णय" कहा गया है।)

2. चालक, स्वामी और बीमाकर्ता ने किसी भी आधार पर आक्षेपित अधिनिर्णय को प्रश्नगत नहीं किया है, इस प्रकार, जहां तक उनसे संबंधित है, अधिनिर्णय अंतिम हो गया है।

- 3. दावेदार ने प्रतिकर की पर्याप्तता के आधार पर आक्षेपित अधिनिर्णय को प्रश्नगत किया है ।
- 4. अधिकरण ने विवाद्यक सं. 5 को निर्धारित करते हुए यह अभिनिर्धारित किया है कि मृतक दुर्घटना के समय अविवाहित होने पर 2,400/- रुपए प्रतिमास कमाता था और कटौती करने के बाद यह अभिनिर्धारित किया है कि दावेदार ने 200/- रुपए प्रतिमास की राशि अर्थात् मृतक की मासिक आय का एक तिहाई निर्भरता का स्रोत खो दिया है । प्रथमदृष्ट्या, अधिकरण द्वारा किया गया निर्धारण विधि की दृष्टि से दोषपूर्ण है और जो रेशमा कुमारी और अन्य बनाम मदन मोहन और एक अन्य¹ वाले मामले में परिपृष्ट किए गए सरला वर्मा बनाम दिल्ली सड़क परिवहन निगम² वाले मामले में दिए गए आदेश के अनुसार नहीं है ।
- 5. अतः उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए मैं, यह अभिनिर्धारित करता हूं कि अधिकरण ने मृतक की आय और आय की हानि का निर्धारण करने में गलती की है । इसे सुरक्षित रूप से अभिनिर्धारित किया जा सकता है कि मृतक की आय उसको मजदूर के रूप में मानते हुए 3,000/- रुपए प्रतिमास थी । उसने 50 प्रतिशत वैयक्तिक खर्चे कम करके 50 प्रतिशत की निर्भरता के स्रोत को खोया है इसलिए, यह अभिनिर्धारित किया है कि दावेदार ने 1,500/- रुपए प्रतिमास की राशि का निर्भरता के स्रोत को खोया है।
- 6. स्वीकृतत: मृतक की आयु दुर्घटना के समय 21 वर्ष थी और अधिकरण ने यह सही अभिनिर्धारित किया है कि मृतक की आयु 21 वर्ष थी किंतु समुचित गुणक लागू करने में गलती की है । उपर्युक्त सरला वर्मा निर्णय के साथ पठित मोटर यान अधिनियम, 1988 में संलग्न अनुसूची के अनुसार "15" का गुणक लागू होता है । इस प्रकार मैं, यह अभिनिर्धारित करता हूं कि इस मामले में "15" का गुणक लागू होगा ।
- 7. दी गई परिस्थितियों में तद्द्वारा, यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि दावेदार 1500×12×15 की धनराशि के लिए प्रतिकर का हकदार है जिसकी सम्पूर्ण धनराशि अधिकरण के अधिनिर्णय द्वारा दावा याचिका फाइल करने की तारीख से वसूली होने तक 6 प्रतिशत वार्षिक ब्याज की दर से 2,70,000/- रुपए होती है।
 - 8. अन्य विवाद्यक विवादित नहीं है । इस प्रकार, उक्त विवाद्यक

¹ 2013 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 3120.

² ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 3104.

अंतिमता प्राप्त कर लिए हैं और कायम रखे जाते हैं।

- 9. तद्नुसार, प्रतिकर बढ़ाया जाता है और आक्षेपित अधिनिर्णय संशोधित किया जाता है जैसा कि उपर्युक्त उपदर्शित किया गया है । प्रत्यर्थी सं. 2 को इस न्यायालय के रिजस्ट्री में आठ सप्ताह के भीतर बढ़ाई गई राशि जमा करने का निदेश दिया जाता है । दावेदार के पक्ष में जारी की जाने वाली राशि को अदाता के खाते में चैक के माध्यम से जमा किया जाए ।
- 10. तद्नुसार, अपील निपटाई जाती है । अभिलेखों को तुरन्त नीचे भेजा जाए ।

अपील मंजूर की गई ।

मही./क.

(2015) 2 सि. नि. प. 220

हिमाचल प्रदेश

अनिता देवी और अन्य

बनाम

शिशु पाल और अन्य

तारीख 17 अक्तूबर, 2014

मुख्य न्यायमूर्ति मंसूर अहमद मीर

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) — धारा 173 — दुर्घटना — अधिनिर्णीत प्रतिकारात्मक अपर्याप्त होना — चुनौती — जहां प्रतिकर की रकम, पीड़ित की प्रास्थिति, आश्रितों की संख्या, जीविकोपार्जन के साधन और उसकी मासिक आय को ध्यान में रखे बिना अधिनिर्णीत किया जाता है तो उसे समुचित और युक्तियुक्त नहीं कहा जा सकता है।

वर्तमान अपील, अनिता देवी और अन्य बनाम शिशु पाल और अन्य वाले शीर्षक दावा याचिका 2006/05 के सं. 45-एस/2 में मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण (III), शिमला, हिमाचल प्रदेश द्वारा पारित तारीख 8 अगस्त, 2008 के अधिनिर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है जिसके द्वारा दावा याचिका के फाइल करने की तारीख से उसकी वसूली तक प्रतिवर्ष 7.5 प्रतिशत की दर से ब्याज सहित 4 लाख रुपए की राशि का प्रतिकर दावेदारों के पक्ष में अधिनिर्णय किया गया था और बीमाकर्ता को स्वामी तथा चालक से वसूली करने के साथ उसे संतुष्ट करने का निदेश दिया गया था । न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – दावेदारों ने दावा याचिका में, विशिष्ट रूप से यह प्रकथन किया है कि मृतक अर्थात् श्रीकान्त एकमात्र जीविका अर्जक था और राजिमस्त्री का कार्य करता था तथा वह 7,000/- रुपए प्रतिमास कमाता था और उसकी दुर्घटना के समय आयु 24 वर्ष थी । यह निवेदन किया है कि अधिकरण ने मृतक की आय 3,000/- रुपए प्रतिमास निर्धारित करने में गलती की है और यह अभिनिर्धारित किया है कि दावेदारों ने व्यक्तिगत खर्चों के लिए 1/3 की कमी करने के बाद 2,000/- रुपए की प्रतिमास की निर्भरता का स्रोत खो दिया है । आजकल, मजदूरी 300/- रुपए प्रतिदिन है और वर्ष 2004 में जिस स्थान पर दुर्घटना घटी थी वहां मजदूरी 150/-रुपए से कम नहीं हो सकती । दावेदारों ने साक्ष्य का अवलंब लिया और साबित किया है कि मृतक राजिमस्त्री का कार्य करता था, जो तथ्य विवाद में नहीं है । तथापि, कार्य के अनुमान से मैंने यह अभिनिर्धारित किया है कि मृतक 4,000/- रुपए प्रतिमास कमाया करता होगा यदि उसे मजदूर के रूप में लिया जाए । इस प्रकार, यह सावधानी से अभिनिर्धारित किया जा सकता है कि मृतक दुर्घटना के समय 4,500/- रुपए प्रतिमास कमाता था । (पैरा 3 और 4)

निर्दिष्ट निर्णय

| 2013 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 3120 : रेशमा कुमारी और अन्य बनाम मदन मोहन और एक अन्य ; 5 | (2009) 6 एस. सी. सी. 121 : सरला वर्मा (श्रीमती) और अन्य बनाम दिल्ली परिवहन निगम और एक अन्य | 5 | राष्ट्री (रिक्टिन) राष्ट्रिक्टी स्वराहत के राष्ट्र के रांक्स 500

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2008 की एफ. ए. ओ. संख्या 588.

मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से श्रीमती शीखा चौहान प्रत्यर्थी सं. 1 की ओर से श्री लक्ष्य ठाकुर प्रत्यर्थी सं. 2 की ओर से श्री बी. एम. चौहान मुख्य न्यायमूर्ति मंसूर अहमद मीर — यह अपील अनिता देवी और अन्य बनाम शिशुपाल और अन्य वाले शीर्षक दावा याचिका 2006/05 के सं. 45-एस/2 में मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण (III), शिमला, हिमाचल प्रदेश (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अधिकरण" कहा गया है) द्वारा पारित तारीख 8 अगस्त, 2008 के अधिनिर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है जिसके द्वारा दावा याचिका के फाइल करने की तारीख से उसकी वसूली तक प्रतिवर्ष 7.5 प्रतिशत की दर से ब्याज सहित 4 लाख रुपए की राशि का प्रतिकर दावेदारों (इसमें अपीलार्थी) के पक्ष में अधिनिर्णय किया था और बीमाकर्ता को स्वामी और चालक से वसूली करने के साथ उसे संतुष्ट करने का निदेश दिया था (संक्षिप्त में आक्षेपित अधिनिर्णय)।

- 2. दावेदारों ने इस आधार पर यह वर्तमान अपील फाइल की है कि अधिकरण द्वारा अधिनिर्णीत किया गया प्रतिकर अपर्याप्त है और अधिकरण ने मृतक की आय और दावेदारों की निर्भरता की हानि का निर्धारण करने में गलती की है।
- 3. दावेदारों ने दावा याचिका में, विशिष्ट रूप से यह प्रकथन किया है कि मृतक अर्थात् श्रीकान्त एकमात्र जीविका अर्जक था और राजिमस्त्री का कार्य करता था तथा वह 7,000/- रुपए प्रतिमास कमाता था और उसकी दुर्घटना के समय आयु 24 वर्ष थी । यह निवेदन किया है कि अधिकरण ने मृतक की आय 3,000/- रुपए प्रतिमास निर्धारित करने में गलती की है और यह अभिनिर्धारित किया है कि दावेदारों ने व्यक्तिगत खर्चों के लिए 1/3 की कमी करने के बाद 2,000/- रुपए की प्रतिमास की निर्भरता का स्रोत खो दिया है।
- 4. आजकल, मजदूरी 300/- रुपए प्रतिदिन है और वर्ष 2004 में जिस स्थान पर दुर्घटना घटी थी वहां मजदूरी 150/- रुपए से कम नहीं हो सकती । दावेदारों ने साक्ष्य का अवलंब लिया और साबित किया है कि मृतक राजिमस्त्री का कार्य करता था, जो तथ्य विवाद में नहीं है । तथापि, कार्य के अनुमान से मैंने यह अभिनिर्धारित किया है कि मृतक 4,500/- रुपए प्रतिमास कमाया करता होगा यदि उसे मजदूर के रूप में लिया जाए । इस प्रकार, यह सावधानी से अभिनिर्धारित किया जा सकता है कि मृतक दुर्घटना के समय 4,500/- रुपए प्रतिमास कमाता था ।
- 5. **सरला वर्मा (श्रीमती) और अन्य** बनाम **दिल्ली परिवहन निगम और** एक अन्य¹ वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय के निबंधनों के

¹ (2009) 6 एस. सी. सी. 121.

अनुसार, जिसका निर्णय रेशमा कुमारी और अन्य बनाम मदन मोहन और एक अन्य वाले उच्चतम न्यायालय की वृहत न्यायपीठ द्वारा भी रोक लगाई गई थी और एक चौथाई उसके व्यक्तिगत खर्चे के लिए मृतक की आय से एक तिहाई कम करके गलती की है। तद्नुसार, एक चौथाई आय कम की जाती है और यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि दावेदारों ने कम से कम 3,000/- रुपए प्रतिमास की धनराशि की निर्भरता का स्रोत खोया है।

- 6. मृतक की आयु को ध्यान में रखते हुए, अधिकरण ने 15 के गुणक को सही प्रकार से लागू किया है । तद्नुसार, दावेदारों को 5,40,000 ($3000 \times 12 \times 15$) रुपए की धनराशि के प्रतिकर के लिए हकदार बनाए जाते हैं ।
- 7. अधिकरण ने उस आधार पर वसूली के अधिकार के साथ दायित्व बीमाकर्ता पर लगाया है कि स्वामी ने नियमों का उल्लंघन किया है । स्वामी ने आक्षेपित अधिनिर्णय पर प्रश्न उठाया था कि 2008 की एफ. ए. ओ. सं. 627 के निबंधनानुसार तारीख 7 मई, 2001 के आदेश द्वारा खारिज किया ।
- 8. तद्नुसार, प्रतिकर की राशि बढ़ाई जाती है । बढ़ाई गई राशि केवल अवयस्कों अर्थात् मास्टर सन्नी और मास्टर मन्नी को समान अंशों में विभाजित की जाएगी । बीमाकर्ता को संपूर्ण राशि जमा करने का निदेश दिया जाता है, यदि राशि पहले ही जमा नहीं की गई । अधिकरण द्वारा दिए गए निर्णय से आज की तारीख से छह सप्ताह की अवधि के भीतर उसे वसूल करने का अधिकार होगा । जमा की गई राशि को आक्षेपित अधिनिर्णय के निबंधनों में सख्ती से वितरित की जाए ।
- 9. उपर्युक्त सीमा तक अपील मंजूर की जाती है और तद्नुसार इसे निपटाया जाता है ।

अपील मंजूर की गई ।

मही./क.

¹ 2013 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 3120.

नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड और अन्य

बनाम

कान्ता देवी और अन्य

तारीख 17 अक्तूबर, 2014

मुख्य न्यायमूर्ति मंसूर अहमद मीर

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) — धारा 166 तथा 173 — अपील — चालक के पास तत्समय वैध चालन अनुज्ञप्ति नहीं होना — यान दुर्घटना — प्रतिकर के लिए दावा — बीमा कंपनी द्वारा अपने दायित्व से इनकार करना — बीमा कंपनी बीमाकृत के किसी दोष के कारण प्रतिकर संदाय करने के अपने दायित्व से बच नहीं सकती तथापि, वह संदत्त प्रतिकर बीमा पालिसी की शर्तों के भंग के आधार पर बीमाकृत राशि वसूल सकती है।

वर्तमान अपील, दावेदारों ने मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 166 के निबंधनों में दावा याचिका के माध्यम से अधिकरण के समक्ष एक दावा याचिका फाइल की है, इस आधार पर कि दावा याचिका में दिए गए विवरणों के अनुसार 12 लाख रुपए की राशा का प्रतिकर मंजूर किया गया क्योंकि मृतक केवल कृष्ण एक यानीय दुर्घटना का पीड़ित है जो चालक-सह-स्वामी अर्थात् अर्जन सिंह द्वारा राष्ट्रीय राजमार्ग, दशमेश होटल, जिला भीलवाड़ा (राजस्थान) में संधोइया के निकट लगभग 6.00 बजे सायं तारीख 18 फरवरी, 2004 को ट्रक जिसका रिजस्ट्रेशन संख्या एचआर-46-ए-6606 को उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाने के कारण हुई थी । मृतक को गंभीर क्षतियां पहुंचीं और उसकी मृत्यु हो गई । मृतक 7 माइल स्टोन भाटिया काम्पलेक्स ज्ञानी बोर्डर गाजियाबाद (यू.पी.) का कर्मचारी था और वह 6,000/- रुपए प्रतिमास कमाता था और उसका रोजाना का खर्च 100/- रुपए था । दावेदारों ने उस आधार पर प्रतिकर मांगा है कि वे मृतक पर निर्भर थे और उन्होंने अपनी निर्भरता खो दी है जिससे व्यथित होकर अपील फाइल की गई । न्यायालय द्वारा भागतः अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित — अधिकरण ने अभिवचनों और मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य की जांच कराने के बाद यह अभिनिर्धारित किया है कि दावेदारों ने सभी विवाद्यकों को साबित किया है और बीमाकर्ता साबित करने में असफल रहा है कि स्वामी ने जानबूझकर उल्लंघन किया है और दायित्व बीमाकर्ता पर

लगाया है। दावेदारों और स्वामी ने किसी भी प्रकार से आक्षेपित अधिनिर्णय पर प्रश्न नहीं किया है और इसे अंतिम रूप दिया गया है जहां तक उनसे संबंधित है । बीमाकर्ता ने उस आधार पर आक्षेपित अधिनिर्णय पर प्रश्न किया है कि स्वामी-सह-चालक के पास दुर्घटना के समय अपराध करने वाले यान के चालक के पास विधिमान्य और प्रभावी अनुज्ञप्ति नहीं थी । उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, विवाद्यक संख्या 1, 3, 5 और 6 में कोई विवाद नहीं है और इन विवाद्यकों पर निकाले गए निष्कर्ष को बरकरार रखा जाता है । विवाद्यक संख्या 4 के संबंध में केवल विवाद है और इस आशय के लिए विवाद्यक संख्या 2 क्या प्रतिकर की राशि बीमाकर्ता से वसूल की जानी है । चालक-सह-स्वामी ने दावा याचिका का विरोध नहीं किया है । अधिकरण के समक्ष रखा गया साक्ष्य केवल आर. डब्ल्यू. 1 योगराज का अभिकथन था जिसमें उसने विशिष्ट रूप से अभिकथन किया है कि प्रशिक्षण संस्थान चालन अनुज्ञप्ति जारी करने की शक्ति और प्राधिकारी नहीं था और उक्त संस्थान द्वारा अनुज्ञप्ति जारी नहीं की गई थी । तथापि, यह अभिकथन किया गया है कि प्रमाणपत्र (प्रदर्श आर. डब्ल्यू. 1/ए) एक सीमा तक सही है कि चालक तारीख 22 फरवरी, 1999 से 24 फरवरी, 1999 तक उक्त संस्थान में प्रशिक्षण के अधीन था । फाइल पर चालन अनुज्ञप्ति नहीं रखी गई थी । फाइल पर केवल दस्तावेज के रूप में प्रमाणपत्र (प्रदर्श आर. डब्ल्यू. 1/ए) की फोटोप्रति है, जो उक्त संस्थान द्वारा जारी किया गया प्रतीत होता है । यह कहते हुए कि चालक के पास चालन अनुज्ञप्ति नहीं थी और स्वामी ने जानबूझकर उल्लंघन किया है। दावेदार तृतीय पक्षकार होने के नाते, पीड़ित नहीं किया जा सकता है । इस प्रकार बीमाकर्ता को वसूली के अधिकार के साथ तृतीय पक्षकार के दावे की संतुष्टि करना है । तद्नुसार, आक्षेपित अधिनिर्णय को संशोधित किया जाता है और बीमाकर्ता को वसूली के अधिकार के साथ संपूर्ण अधिनिर्णय से संतुष्ट करने के दायित्व का बोझ डाला जाता है और प्रभावित वसूली के लिए अधिकरण के समक्ष एक प्रस्ताव रखने की स्वतंत्रता है । रजिस्ट्री दावेदारों के पक्ष में निबंधनानुसार सख्ती से, आक्षेपित आदेश में निहित शर्तों और समृचित पहचान के बाद अदाता खाता चैक के माध्यम से अधिनिर्णीत राशि जारी करने का निदेश देती है । जैसा ऊपर निदेशित किया गया है, आक्षेपित अधिनिर्णय संशोधित किया जाता है और अपील का सभी लंबित आवेदनों के साथ निपटान किया जाता है । (पैरा 6, 7, 8, 9, 10, 11, 12, 13, 14, 15 और 16)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2007 की एफ. ए. ओ. संख्या 129.

मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन अपील । अपीलार्थियों की ओर से श्री अश्वनी के. शर्मा

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री जे. आर. ठाकूर (प्रत्यर्थी सं. 1 से 4 के लिए)

मुख्य न्यायमूर्ति मंसूर अहमद मीर — यह अपील मोटर दुर्घटना याचिका संख्या 2004 की 54/आर. बी. टी. 26/05 शीर्षक कान्ता देवी और अन्य बनाम पुनीत शर्मा और अन्य में मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण-II, फास्ट ट्रेक न्यायालय, हमीरपुर (जिसे संक्षिप्त में "अधिकरण" कहा गया है) द्वारा तारीख 31 जनवरी, 2007 को पारित अधिनिर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है जिसके द्वारा दावेदारों के पक्ष में 6 प्रतिशत वार्षिक ब्याज की दर से ब्याज के साथ 6,08,900/- रुपए की राशि का प्रतिकर अधिनिर्णीत किया गया है और

2. संक्षिप्त तथ्य

दावेदारों ने मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 166 (संक्षिप्त में "मो.या.अधिनियम") के निबंधनों में दावा याचिका के माध्यम से अधिकरण के समक्ष एक दावा याचिका फाइल की है, इस आधार पर कि दावा याचिका में दिए गए विवरणों के अनुसार 12 लाख रुपए की राशि का प्रतिकर मंजूर किया जाए क्योंकि मृतक केवल कृष्ण एक यानीय दुर्घटना का पीड़ित है जो चालक-सह-स्वामी अर्थात् अर्जन सिंह द्वारा राष्ट्रीय राजमार्ग, दशमेश होटल, जिला भीलवाड़ा (राजस्थान) में संधोइया के निकट लगभग 6.00 बजे सायं तारीख 18 फरवरी, 2004 को ट्रक जिसका रिजस्ट्रेशन संख्या एचआर-46-ए-6606 को उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाने के कारण हुई थी । मृतक को गंभीर क्षतियां पहुंचीं और उसकी मृत्यु हो गई । मृतक 7 माइल स्टोन भाटिया काम्पलेक्स ज्ञानी बोर्डर गाजियाबाद (यू.पी.) का कर्मचारी था और वह 6,000/- रुपए प्रतिमास कमाता था और उसका प्रतिदिन का खर्च 100/- रुपए था । दावेदारों ने उस आधार पर प्रतिकर मांगा है कि वे मृतक पर निर्भर थे और उन्होंने अपनी निर्भरता खो दी है ।

- 3. स्वामी अधिकरण के समक्ष उपस्थित नहीं हुआ और एक पक्षीय कर दिया । बीमाकर्ता-अपीलार्थी ने आपत्तियां फाइल करके दावा याचिका का विरोध किया था ।
- 4. तारीख 8 अगस्त, 2005 को दावा याचिका में निम्नलिखित विवाद्यक विरचित किए गए :—

- "1. क्या केवल कृष्ण की मृत्यु यान संख्या एचआर-46-ए-6606 के प्रत्यर्थी सं. 1 के उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाने के कारण हुई थी ? ओ. पी. पी.
- 2. यदि विवाद्यक सं. 1 से यह साबित हो जाता है कि प्रतिकर राशि किसके लिए और याची किसके हकदार हैं ? ओ. पी. पी.
- 3. क्या याचिका प्रत्यर्थियों के विरुद्ध बनाए रखने योग्य नहीं है ? ओ. पी. आर. 2
- 4. क्या प्रत्यर्थी सं. 1 के पास दुर्घटना के समय विधिमान्य और प्रभावी अनुज्ञप्ति नहीं थी ? ओ. पी. आर. 2
- 5. क्या याचियों को उनके कृत्य और आचरण द्वारा याचिका फाइल करने से विबंधन किया है ? ओ. पी. आर. 2
- 6. क्या दावा याचिका आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन और कुसंयोजन के लिए दूषित थी ? ओ. पी. आर. 2

7. अनुतोष ।"

- 5. दावेदारों ने साक्षियों की परीक्षा कराई और दावा याचिका में अन्तर्विलत प्रकथनों को साबित किया । बीमाकर्ता ने आर. डब्ल्यू. 1 योग राज, लिपिक, जनरल मैनेजर के कार्यालय में काम करने वाला, चालक प्रशिक्षण संस्थान, मुख्यल, जिला सोनीपत (हरियाणा) की परीक्षा कराई है ।
- 6. अधिकरण ने अभिवचनों और मौखिक तथा दस्तावेजी साक्ष्यों की संवीक्षा करने के पश्चात्, यह अभिनिर्धारित किया है कि दावेदारों ने सभी विवाद्यकों को साबित किया है और बीमाकर्ता यह साबित करने में असफल रहा है कि स्वामी ने जानबूझकर उल्लंघन किया है और दायित्व का भार बीमाकर्ता पर डाला है।
- 7. दावेदारों और स्वामी ने किसी भी प्रकार से आक्षेपित अधिनिर्णय का प्रश्न नहीं किया है और इसने अंतिमता प्राप्त कर ली है जहां तक यह उनसे संबंधित है।
- 8. बीमाकर्ता ने उस आधार पर आक्षेपित अधिनिर्णय पर प्रश्न किया है कि स्वामी-सह-चालक के पास दुर्घटना के समय अपराध करने वाले यान के चालक के पास विधिमान्य और प्रभावी अनुज्ञप्ति नहीं थी ।
- 9. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, विवाद्यक संख्या 1, 3, 5 और 6 में कोई विवाद नहीं है और इन विवाद्यकों पर निकाले गए निष्कर्ष को

बरकरार खा जाता है ।

- 10. विवाद्यक संख्या 4 के संबंध में केवल विवाद है और इस आशय के लिए विवाद्यक संख्या 2 क्या प्रतिकर की राशि बीमाकर्ता से वसूल की जानी है । चालक-सह-स्वामी ने दावा याचिका का विरोध नहीं किया है । अधिकरण के समक्ष रखा गया साक्ष्य केवल आर. डब्ल्यू. 1 योगराज का अभिकथन था जिसमें उसने विशिष्ट रूप से अभिकथन किया है कि प्रशिक्षण संस्थान को चालन अनुज्ञप्ति जारी करने की शक्ति और प्राधिकार नहीं था और उक्त संस्थान द्वारा अनुज्ञप्ति जारी नहीं की गई थी । तथापि, यह अभिकथन किया गया है कि प्रमाणपत्र (प्रदर्श आर. डब्ल्यू. 1/ए) एक सीमा तक सही है कि चालक तारीख 22 फरवरी, 1999 से 24 फरवरी, 1999 तक उक्त संस्थान में प्रशिक्षण के अधीन था ।
- 11. फाइल पर चालन अनुज्ञप्ति नहीं रखी गई थी । फाइल पर केवल दस्तावेज के रूप में प्रमाणपत्र (प्रदर्श आर. डब्ल्यू. 1/ए) की फोटोप्रति है, जो उक्त संस्थान द्वारा जारी किया गया प्रतीत होता है ।
- 12. यह कहते हुए कि चालक के पास चालन अनुज्ञप्ति नहीं थी और स्वामी ने जानबूझकर उल्लंघन किया है ।
- 13. दावेदार तृतीय पक्षकार होने के नाते, पीड़ित नहीं कहा जा सकता है । इस प्रकार बीमाकर्ता को वसूली के अधिकार के साथ तृतीय पक्षकार के दावे की संतुष्टि करना है ।
- 14. तद्नुसार, आक्षेपित अधिनिर्णय को संशोधित किया जाता है और बीमाकर्ता को वसूली के अधिकार के साथ संपूर्ण अधिनिर्णय से संतुष्ट करने के दायित्व का बोझ डाला जाता है और प्रभावित व्यक्ति को वसूली के लिए अधिकरण के समक्ष एक प्रस्ताव रखने की स्वतंत्रता है।
- 15. रजिस्ट्री दावेदारों के पक्ष में निबंधनानुसार सख्ती से, आक्षेपित आदेश में निहित शर्तों और समुचित पहचान के बाद अदाता खाता चैक के माध्यम से अधिनिर्णीत राशि जारी करने का निदेश देती है।
- 16. जैसा ऊपर निदेशित किया गया है, आक्षेपित अधिनिर्णय संशोधित किया जाता है और अपील का सभी लंबित आवेदनों के साथ निपटान किया जाता है।

भागतः अपील मंजूर की गई ।

मही./क.

चौबे राम

बनाम

चन्दर काला और अन्य

तारीख 6 मई, 2015 न्यायमूर्ति राजीव शर्मा

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) — धारा 100, 151 तथा आदेश 18 का नियम 2(4) और 17(क) — द्वितीय अपील — पक्षकारों के बीच समझौता — समझौते की अवहेलना करते हुए गलत शपथपत्र फाइल करना — शपथपत्र खारिज होना — यदि मूल स्वामी द्वारा एक समझौते के अधीन वाद भूमि किराए पर दी जाती है और किराएदार समझौते की अवहेलना करते हुए उक्त भूमि का विक्रय कर देता है तो ऐसा विक्रय विलेख अकृत और शून्य होगा ।

वर्तमान मामले में, वादियों के पूर्व-हिताधिकारी अर्थात् श्री पोषू राम ने वादपत्र से संबद्ध स्थल नक्शा में दर्शित गृह का कब्जा पाने के लिए और वाद में दर्शित गृह का प्रयोग और अधिभोग करने के लिए अंतःकालीन लाभ के रूप में 500/- रुपए प्रतिमाह की वसूली करने के लिए और स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश के लिए भी एक वाद फाइल किया था । वादियों के अनुसार, फित मोहल, कोठी खोखन, तहसील और जिला कुल्लू में स्थित खाता खतौनी सं. 428 मीन/503 मीन, खाता सं. 555 में समाविष्ट 9 बिस्वा भूमि के रूप में अभिलिखित है जो वादी द्वारा धारित और उसके कब्जे में है, जैसा कि वर्ष 1993-94 के लिए जमाबन्दी की प्रति में दर्शित है और इस भूमि के एक भाग पर माप 27×14 हाथ में एक गृह भी स्थित है और वह उक्त भूमि से जुड़ा हुआ है तथा वादी का गृह खसरा सं. 551 और 552 से सटा हुआ है जिसे भी वादी द्वारा धारित और कब्जे में है जिसके ऊपर वादी का फलों का बगीचा भी स्थित है। वादी और प्रतिवादी सं. 1 के बीच 50,000/- रुपए और 40,000/- रुपए के प्रतिफल जो प्रतिवादी सं. 1 द्वारा वादी को तारीख 10 जुलाई, 1997 को या उससे पूर्व देय था, के एवज में वर्ष 1997 से वर्ष 2001 के फलों के मौसम में खसरा सं. 551 और 552 में समाविष्ट फलों के बगीचों के विक्रय का करार हुआ था । प्रतिवादी ने करार भंग कर दिया । प्रतिवादी सं. 1 ने वादी से वाद गृह में कुछ वारदाना रखने और अपने चौकीदार के रूप में अर्थात् श्री परखू को रखने की इजाजत मांगी । वादी ने दो माह अर्थात तारीख 10 अप्रैल, 1997 से तारीख 9 जून, 1997 तक के लिए प्रतिवादी सं. 1 को गृह का उपयोग और अधिभोग रखने के लिए अनुज्ञप्ति और अनुज्ञा प्रदान कर दी । वह अंतःकालीन लाभों के बारे में 500/- रुपए वसूली का भी हकदार है । प्रतिवादियों द्वारा वाद का विरोध किया गया । उनके अनुसार, मूल वादी न तो वाद संपत्ति का स्वामी था न ही उसके कब्जे में था और स्थल नक्शा भी सही नहीं है । गृह, खसरा सं. 555 में समाविष्ट आबादी पर स्थित नहीं है । इस बात से भी इनकार किया गया कि प्रतिवादी सं. 1 के निवेदन पर मूल वादी ने दो माह के लिए अनुज्ञप्ति के रूप में गृह का उपयोग और अधिभोग करने की इजाजत दी थी । यह भी दलील दी गई कि मूल वादी का वाद भिम में कोई अधिकार, हक या हित नहीं है न ही वह वाद संपत्ति का कब्जे सहित स्वामी है । वस्तुतः, वादी, फित मोहल में नहीं रहता था अथवा न ही उसका सही धारक था । वह फित बाल्ह का निवासी था । प्रतिवादी सं. 1 अनिश्चितकाल से फित मोहल में रहता है और सही धारक है । प्रतिवादी सं. 1 के पिता ने खसरा सं. 555 में समाविष्ट वाद भूमि के आबादी के एक भाग पर 22 वर्ष पूर्व गृह का निर्माण किया था । वादी द्वारा प्रत्युत्तर फाइल किया गया । विद्वान ज्येष्ठ उप-न्यायाधीश, कुल्लू, हिमाचल प्रदेश ने तारीख 17 जनवरी, 1998 को विवाद्यक विरचित किया । विद्वान ज्येष्ठ उप-न्यायाधीश, कुल्लू, हिमाचल प्रदेश ने तारीख 19 दिसम्बर, 2001 को वाद खारिज कर दिया । इससे व्यथित होकर, चौबे राम ने विद्वान जिला न्यायाधीश, कुल्लू के समक्ष एक अपील फाइल की । विद्वान जिला न्यायाधीश, कुल्लू ने तारीख 6 जून, 2003 को इसे भागतः मंजूर कर लिया । अतएव, यह नियमित द्वितीय अपील फाइल की गई । न्यायालय द्वारा द्वितीय अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित — अभि. सा. 1 श्री पोषू राम ने यह परिसाक्ष्य दिया है कि वह वाद भूमि का स्वामी है जिस पर 28 वर्ष पुराने 1-1/2 मंजिला स्लेट पाश गृह और सेब के पेड़ हैं । उसने वाद भूमि में लगभग 14 वर्ष पूर्व गृह का निर्माण किया था । उसके पास वाद भूमि से सटे 14/15 बीघा का बगीचा है । उसने 14/15 बीघा अपनी भूमि में से 4-1/2 हिस्सा किराएदारों को दिया था और किराएदारों ने उस भूमि को वर्ष 1993 में चौबे राम को विक्रय कर दिया । उसने वर्ष 1956 में अपनी माता से वाद भूमि उत्तराधिकार में प्राप्त की थी और तभी से वह उसके कब्जे में है । उसने

न्यायालय में एक वाद फाइल किया था वाद में पक्षकारों के बीच समझौता हो गया था । प्रतिवादी सं. 1 ने एक शपथपत्र फाइल किया था जिसे कार्यपालक मजिस्ट्रेट द्वारा अनुप्रमाणक किया गया जिसमें प्रतिवादी खसरा सं. 553 से खसरा सं. 551, 552 और 555 में जाने के लिए 2 करम भूमि रास्ते के लिए देने को सहमत हुआ था और उसके किराएदारों से भूमि क्रय करने के पश्चात ब्रेस्तू और अन्य चौबे राम ने उसे पुनः क्रय किया और कालोनी का निर्माण किया । प्रतिवादी सं. 1 ने उससे यह निवेदन किया कि वाद गृह में अपना वारदाना रखने के लिए उसे दो माह के लिए किराए पर दे दें, उसके इस निवेदन को उसने स्वीकार कर लिया था और दो माह के पश्चात जब उसने चौबे राम से अपने गृह का कब्जा वापस मांगा तो प्रतिवादी ने इसके ऊपर कब्जा रखते हुए अपने फित आबादी होने का प्रत्याख्यान किया । प्रतिवादी ने 6 सेब के पेड़ों को काट दिया । पुलिस घटनास्थल पर आई थी । चौबे राम ने इस पर विद्युत मीटर लगा लिया था और इसे परख़ राम को किराए पर दे दिया था । उसने एल. सी. की नियुक्ति के लिए एक आवेदन प्रस्तुत किया था । निधि सिंह द्वारा गृह का स्थल नक्शा तैयार किया गया था । उसने शजरा नसब प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/एफ साबित किया । उसने फूलनू देवी के फित आबादी का शजरा नसब प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/जी को साबित किया । उसने शजरा नसब प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/एच और आबादी प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/आई की प्रति को साबित किया । उसने जमाबन्दी प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/एन और प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ओ की प्रतियों के साथ प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/के से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/एम की नामांतरण प्रति, मुसबी प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/जे की प्रति को भी साबित किया । अभि. सा. 2 मदन लाल ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि पोषू राम के पास एक बगीचा और 1-1/2 मंजिला गृह था । गृह का निर्माण वर्ष 1975 में हुआ था । अभि. सा. 3 बेली राम ने यह परिसाक्ष्य दिया कि वाद भूमि, पोषू राम द्वारा धारित थी । इस पर एक सेब का बगीचा और एक 1-1/2 मंजिला गृह था । यह वर्ष 1997 तक चौबे राम के कब्जे में था । चौबे राम ने भी सेब के पेड़ों को काट दिया था । अभि. सा. 4 प्रेम दास भाटिया ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि पोषू राम, वाद भूमि का स्वामी था जिस पर 1-1/2 मंजिला गृह और बगीचा स्थित था । फूलमा देवी, वार्ड पंच और देव राज के गृह वाद भूमि से सटे हुए थे । चौबे राम ने संविदा पर पोषु के बगीचे को लिया था और उसके बाद उस पर कब्जा कर लिया था । चौबे राम ने वाद गृह की सफेदी करवा ली थी और विद्युत मीटर लगवा लिया था और अवरोधक

दीवार भी खड़ी कर ली थी । चौबे राम की वाद भूमि से सटी कोई भूमि नहीं थी । चौबे राम के पिता के पास दो बीघा पांच बिस्वा भूमि थी और एक गृह भी था जिसे गिरा दिया गया था । अभि. सा. 5 श्री नरेन्दर शर्मा के अनुसार, चौबे राम का तारीख 17 मई, 1995 का शपथपत्र उसके रजिस्टर में क्रम सं. 303 पर प्रविष्ट हुआ था । वह मूल शपथपत्र की प्रतिलिपि नहीं लाया है क्योंकि इसे नियमों के अनुसार नष्ट कर दिया गया है । अभि. सा. 6 निधि सिंह ने स्थल नक्शा प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ए को साबित किया है । अभि. सा. ७ चुन्नी लाल शर्मा, अधिवक्ता, कुल्लू ने यह कथन किया है कि वह चौबे राम को जानता है । शपथपत्र प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/ए में उसने चौबे राम की शनाख्त की है किन्त् उसका शपथपत्र उसकी उपस्थिति में कार्यपालक मजिस्ट्रेट द्वारा अनुप्रमाणित नहीं हुआ था न ही किसी व्यक्ति ने उसकी उपस्थिति में हस्ताक्षर किए थे। प्रतिवादी के हस्ताक्षर पहले से ही शपथपत्र पर थे । उसने न्यायालय परिसर में चौबे राम की शनाख्त की । वह कार्यपालक मजिस्ट्रेट के पास कभी नहीं गया और प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/ए, चौबे राम द्वारा उसे दिया गया था । अभि. सा. 8 डा. आर. शर्मा, प्रश्नगत दस्तावेजों का सहायक सरकारी परीक्षक, ने यह परिसाक्ष्य दिया कि उसने विभिन्न दस्तावेजों की परीक्षा की और उन पर अपनी राय व्यक्त की । उसने क्यू-1 से क्यू-3, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/ए और स्वीकृत हस्ताक्षर ए-1 से ए-3, जो वकालतनामा और लिखित कथन हैं, के साथ तारीख 21 दिसम्बर 2000 के पत्र सं. 2237 द्वारा ज्येष्ठ उप-न्यायाधीश, कुल्लू के न्यायालय से दस्तावेज प्राप्त किए थे और इन दस्तावेजों की परीक्षा करने के पश्चात उसने यह निष्कर्ष निकाला था कि क्यू-1 से क्यू-3 और ए-1 से ए-3 एक ही व्यक्ति द्वारा लिखे गए थे । उसने अपनी रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 8/ए और प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 8/बी को साबित किया है । श्री चौबे राम, प्रतिवादी साक्षी 1 के रूप में उपस्थित हुआ । उसने यह परिसाक्ष्य दिया कि वह वाद गृह का कब्जे सहित स्वामी है जिसे उसने अपने पूर्व पिता के समय पर आबादी भूमि पर बनाया था जो 23 फीट x 23 फीट है । उसने एक शेड का भी निर्माण किया है । वह इस गृह के लिए गृहकर संदाय करता है और इसकी प्राप्तियों प्रदर्श डी-1 से डी-5 को साबित किया है। उसने विद्युत मीटर भी लगाया है जिसकी प्राप्तियों के साथ बिलों को साबित किया है जो प्रदर्श डी-6 से प्रदर्श डी-8 हैं । न्यायालय के अनुसार, वादी फित बाल्ह का निवासी है, कोठी माजरा का फित मोहल में कोई गृह नहीं है । परखू, प्रतिवादी सं. 2 उसका

किराएदार था और वादी ने उसे परेशान करने के लिए ही वाद फाइल किया है । प्रतिवादी साक्षी 2 हिर चन्द ने प्रतिवादी साक्षी 1 चौबे राम के बयान का समर्थन किया है । (पैरा 8, 9, 10, 11, 12, 13, 14, 15, 16 और 17)

सुस्पष्टतः, वादी का पक्षकथन यह है कि चौबे राम ने कार्यपालक मजिस्ट्रेट, कुल्लु के समक्ष सशपथ एक शपथपत्र प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/ए फाइल किया है जिसके द्वारा वह पोषु राम को खाता सं, 551, 552 और 555 में जाने के लिए खाता सं. 553 के माध्यम से रास्ते के लिए 2 करम भूमि देने को सहमत हुआ था । प्रदर्श पी. डब्ल्यू. ७/ए, तारीख 17 मई, 1995 का है और समझौता, तारीख 16 मई, 1995 का है। यदि मामले में पहले ही तारीख 16 मई, 1995 को समझौता हो गया था तो चौबे राम द्वारा तारीख 17 मई, 1995 को सशपथ एक शपथपत्र देने का कोई अवसर नहीं था । अभि. सा. ७ चुन्नी लाल शर्मा, अधिवक्ता, जैसा कि उपर्युक्त उल्लिखित है, ने यह स्वीकार किया है कि उसने चौबे राम की शनाख्त की है किन्तु इस शपथपत्र को उसकी उपस्थिति में कार्यपालक मजिस्ट्रेट द्वारा अनुप्रमाणित नहीं किया गया था, न ही उसकी उपस्थिति में किसी व्यक्ति ने इस पर हस्ताक्षर किए थे । प्रतिवादी के हस्ताक्षर पहले से ही शपथपत्र पर थे । उसने न्यायालय परिसर में चौबे की शनाख्त की । वह कभी भी कार्यपालक मजिस्ट्रेट के पास नहीं गया और प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/ए को चौबे राम द्वारा उसके पास लाया गया था । वादी ने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 18, नियम 17(क) और आदेश 18, नियम 2(4) के साथ पठित धारा 151 के अधीन एक आवेदन फाइल किया । इसे तारीख 12 नवम्बर, 1998 को मंजूर कर लिया गया था । इसके पश्चात, वादी ने पुनः सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 18, नियम 17 और आदेश 18, नियम 2(4) के साथ पठित धारा 151 के अधीन एक आवेदन फाइल किया । आवेदन में अन्तर्विष्ट प्रकथनों के अनुसार, अभि. सा. 7 श्री चून्नी लाल, अधिवक्ता की परीक्षा के समय पर वह वादी को विनिर्दिष्ट सुझाव नहीं दे सका था । विद्वान् ज्येष्ठ उप-न्यायाधीश, कुल्लू ने आवेदन को तारीख 25 जून, 1999 को विनिश्चित करते समय यह सही ही निष्कर्ष निकाला है कि यह वादी ही था जिसे उक्त अभि. सा. 7 श्री चुन्नी लाल के सभी सुझावों पर सभी प्रकार से ध्यान और सावधानी बरतनी चाहिए थी जब वह साक्षी कठघरे में उपस्थित हुआ था । बल्कि, अभि. सा. 7 चुन्नी लाल ने वादी के पक्षकथन का समर्थन नहीं किया । इस प्रकार, चून्नी लाल, अभि. सा. 7

को उसे आगे सुझाव देने के लिए पुनः नहीं बुलाया जा सकता है । वादी को ही तारीख 17 मई, 1997 के शपथपत्र प्रदर्श पी. डब्ल्य्. 7/ए को साबित करना था । इस प्रकार, विद्वान ज्येष्ठ उप-न्यायाधीश, कुल्लू ने तारीख 25 जून, 1999 को उसके आवेदन को नामंजूर कर दिया था । वादी ने शपथपत्र पर प्रतिवादी के हस्ताक्षरों का मिलान करने के लिए पुनः सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 18, नियम 17(क) और आदेश 18, नियम 2(4) के साथ पठित धारा 151 के अधीन एक आवेदन फाइल किया और श्री एन. सी. सूद, उप-सरकारी परीक्षक, प्रश्नगत दस्तावेजों का सरकारी परीक्षक कार्यालय, गृह मंत्रालय को तारीख 16 मई, 2001 के आदेश द्वारा तारीख 11 जुलाई, 2001 के लिए समन करने का आदेश दिया गया । फिर भी, वादी ने ज्येष्ठ उप-न्यायाधीश, कुल्लू द्वारा सिविल वाद सं. 87/94 में पारित तारीख 17 मई. 1995 के आदेश की प्रतिलिपि अभिलेख पर रखने के लिए, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 18. नियम 17(क) और आदेश 18, नियम 2(4) के अधीन एक अन्य आवेदन फाइल किया और पूर्वस्थिगत के लिए तथा उस तारीख को मामले की सुनवाई के लिए और 1994 की सिविल वाद सं. 87 में तारीख 16 मई, 1995 के समझौते की प्रमाणित प्रति को साबित करने के लिए भी आवेदन फाइल किया । आवेदन को विद्वान् ज्येष्ठ उप-न्यायाधीश, कुल्लू द्वारा तारीख 20 अगस्त, 2001 को खारिज कर दिया गया । विद्वान विचारण न्यायालय ने यह नोटिस किया कि वादी तारीख 17 मई, 1995 और 16 मई, 1995 को दस्तावेजों को अभिलेख पर रखना चाहता था किन्तु इसका कोई कारण नहीं दिया गया कि वादी को इतने लम्बे समय तक ऐसा करने से क्यों रोका गया और वादी का पक्षकथन यह नहीं था कि सम्यक परिश्रम करने के पश्चात भी वह उसे समय पर प्रस्तुत नहीं कर सका जब वह अपने साक्ष्य को दे रहा था । आवेदन को तारीख 20 अगस्त, 2001 को नामंजूर कर दिया गया था । श्री जगन नाथ, अधिवक्ता ने न्यायालय में वादपत्र फाइल किया । जिसमें प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/ए के बारे में कोई प्रकथन नहीं है । इसे ध्यान में रखते हुए, वादी को वादपत्र में विनिर्दिष्ट प्रकथन करने चाहिए थे और उसके बाद शपथपत्र को साबित करने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत करने चाहिए थे । वादी ने उस कार्यपालक मजिस्ट्रेट की परीक्षा नहीं की जिसने तारीख 17 मई, 1995 को शपथपत्र अनुप्रमाणित किया था । न्यायालय में जैसा कि उपर्युक्त उल्लिखित है, समझौता तारीख 16 मई, 1995 का है और शपथपत्र तारीख 17 मई, 1995 का है । चौबे राम के पास तारीख 16 मई, 1995 को पहले ही समझौता हो जाने के

पश्चात् शपथपत्र फाइल करने का कोई अवसर नहीं था । अभि. सा. 7 चुन्नी लाल, अधिवक्ता द्वारा किए गए चालबाजी भरे कथनों के अनुक्रम में शपथपत्र प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/ए को साबित करने के लिए, वादी द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 18, नियम 17 और आदेश 18, नियम 2(4) के साथ पठित धारा 151 के अधीन बार-बार आवेदन फाइल करने को विद्वान प्रथम अपील न्यायालय, विचार में लेने में असफल रहा है । विचारण न्यायालय ने मौखिक के साथ ही दस्तावेजी साक्ष्यों विशिष्टतया प्रदर्श पी. डब्ल्य. 7/ए का वादी के मामले को खारिज करते समय सही ही मूल्यांकन किया है किन्तु प्रथम अपील न्यायालय ने प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/ए का अवलंब लेते हुए विधि में त्रुटि कारित की है क्योंकि उसे विधि के अनुसरण में साबित नहीं किया गया है । वादपत्र में यह अभिवाचित नहीं किया गया है कि प्रतिवादी सं. 1 ने तारीख 17 मई, 1995 को एक शपथपत्र में शपथ लिया है । प्रतिवादी सं. 1 ने प्रदर्श डी-1 से डी-5 के माध्यम से उसके द्वारा देय गृह किराया की प्रतियों और विद्युत बिलों को भी अभिलेख पर साबित किया है । प्रथम अपील न्यायालय ने गलत तौर पर प्रतिवादी चौबे राम की ओर से ग्राह्य के रूप में शपथपत्र को माना है, यह निष्कर्ष निकालने में कि वादी खसरा सं. 555 में समाविष्ट भूमि का स्वामी है । (पैरा 18, 19, 20, 21 और 22)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2003 की नियमित द्वितीय अपील सं. 347.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन द्वितीय अपील ।

अपीलार्थी की ओर से

सर्वश्री जगन नाथ, अधिवक्ता के
साथ आनन्द शर्मा, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी सं. 1(घ) की ओर से श्री टी. एस. चौहान, अधिवक्ता प्रत्यर्थी सं. 1(क) से 1(ग) और कोई नहीं प्रत्यर्थी सं. 2 की ओर से

न्यायमूर्ति राजीव शर्मा — यह नियमित द्वितीय अपील, विद्वान् जिला न्यायाधीश, कुल्लू, हिमाचल प्रदेश द्वारा 2002 की सिविल अपील सं. 09 में पारित तारीख 6 जून, 2003 के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध निदेशित है।

2. इस नियमित द्वितीय अपील का न्यायनिर्णयन करने के लिए आवश्यक मुख्य तथ्य यह हैं कि वादियों के पूर्व-हिताधिकारी अर्थात् श्री पोष् राम ने वादपत्र से संबद्ध स्थल नक्शा में दर्शित गृह का कब्जा पाने के लिए और वाद में दर्शित गृह का प्रयोग और अधिभोग करने के लिए अंतःकालीन लाभ के रूप में 500/- रुपए प्रतिमाह की वसूली करने के लिए और स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश के लिए भी एक वाद फाइल किया था । वादियों के अनुसार, फित मोहल, कोठी खोखन, तहसील और जिला कुल्लू में स्थित खाता खतौनी सं. 428 मीन/503 मीन, खाता सं. 555 में समाविष्ट 9 बिस्वा भिम, फित आबादी के रूप में अभिलिखित है जो वादी द्वारा धारित और उसके कब्जे में है, जैसा कि वर्ष 1993-94 के लिए जमाबन्दी की प्रति में दर्शित है और इस भूमि के एक भाग पर माप 27×14 हाथ में एक गृह भी स्थित है और वह उक्त भूमि से जुड़ा हुआ है तथा वादी का गृह खसरा सं. 551 और 552 से सटा हुआ है जिसे भी वादी द्वारा धारित और कब्जे में है जिसके ऊपर वादी का फलों का बगीचा भी स्थित है । वादी और प्रतिवादी सं. 1 के बीच 50,000/- रुपए और 40,000/- रुपए के प्रतिफल जो प्रतिवादी सं. 1 द्वारा वादी को तारीख 10 जुलाई, 1997 को या उससे पूर्व देय था, के एवज में वर्ष 1997 से वर्ष 2001 के फलों के मौसम में खसरा सं. 551 और 552 में समाविष्ट फलों के बगीचों के विक्रय का करार हुआ था । प्रतिवादी ने करार भंग कर दिया । प्रतिवादी सं. 1 ने वादी से वाद गृह में कुछ वारदाना रखने और अपने चौकीदार के रूप में अर्थात श्री परखू को रखने की इजाजत मांगी । वादी ने दो माह अर्थात तारीख 10 अप्रैल, 1997 से तारीख 9 जून, 1997 तक के लिए प्रतिवादी सं. 1 को गृह का उपयोग और अधिभोग रखने के लिए अनुज्ञप्ति और अनुज्ञा प्रदान कर दी । वह अंतःकालीन लाभों के बारे में 500/- रुपए वसूली का भी हकदार है।

3. प्रतिवादियों द्वारा वाद का विरोध किया गया । उनके अनुसार, मूल वादी न तो वाद संपत्ति का स्वामी था न ही उसके कब्जे में था और स्थल नक्शा भी सही नहीं है । गृह, खसरा सं. 555 में समाविष्ट आबादी पर स्थित नहीं है । इस बात से भी इनकार किया गया कि प्रतिवादी सं. 1 के निवेदन पर मूल वादी ने दो माह के लिए अनुज्ञप्ति के रूप में गृह का उपयोग और अधिभोग करने की इजाजत दी थी । यह भी दलील दी गई कि मूल वादी का वाद भूमि में कोई अधिकार, हक या हित नहीं है न ही वह वाद संपत्ति का कब्जे सहित स्वामी है । वस्तुतः, वादी, फित मोहल में नहीं रहता था अथवा न ही उसका सही धारक था । वह फित बाल्ह का निवासी था । प्रतिवादी सं. 1 अनिश्चित काल से फित मोहल में रहता है

और सही धारक है । प्रतिवादी सं. 1 के पिता ने खसरा सं. 555 में समाविष्ट वाद भूमि के आबादी के एक भाग पर 22 वर्ष पूर्व गृह का निर्माण किया था ।

- 4. वादी द्वारा प्रत्युत्तर फाइल किया गया । विद्वान् ज्येष्ठ उप-न्यायाधीश, कुल्लू, हिमाचल प्रदेश ने तारीख 17 जनवरी, 1998 को विवाद्यक विरचित किया । विद्वान् ज्येष्ठ उप-न्यायाधीश, कुल्लू, हिमाचल प्रदेश ने तारीख 19 दिसम्बर, 2001 को वाद खारिज कर दिया । इससे व्यथित होकर, चौबे राम ने विद्वान् जिला न्यायाधीश, कुल्लू के समक्ष एक अपील फाइल की । विद्वान् जिला न्यायाधीश, कुल्लू ने तारीख 6 जून, 2003 को इसे भागतः मंजूर कर लिया । अतएव, यह नियमित द्वितीय अपील फाइल की गई ।
- 5. यह नियमित द्वितीय अपील तारीख 25 मई, 2004 को निम्नलिखित विधि के सारवान् प्रश्न पर स्वीकार कर ली गई थी:—

"क्या विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय द्वारा दस्तावेज/शपथपत्र प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/ए का साक्ष्य में परिशीलन नहीं किया गया है क्योंकि उसे विधि के अनुसरण में अभिवाचित और साबित नहीं किया गया था जिससे विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्ष दृषित होते हैं ?"

- 6. अपीलार्थी के विद्वान् अधिवक्ता श्री जगन नाथ ने विद्वान् ज्येष्ठ उप-न्यायाधीश, कुल्लू द्वारा पारित निर्णय और डिक्री का समर्थन किया है। उन्होंने यह दलील दी कि शपथपत्र प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/ए तारीख 17 मई, 1995 का, विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय द्वारा साक्ष्य में परिशीलन नहीं किया जा सका था क्योंकि उसे न तो वादपत्र में अभिवाचित किया गया था न ही विधि के अनुसरण में साबित किया गया था। दूसरी ओर, विद्वान् अधिवक्ता श्री टी. एस. चौहान ने प्रथम अपील न्यायालय द्वारा तारीख 6 जून, 2003 को दिए गए निर्णय का समर्थन किया है।
- 7. मैंने, पक्षकारों के विद्वान् अधिवक्ताओं को सुना और मामले के निर्णय और अभिलेखों का ध्यानपूर्वक परिशीलन किया ।
- 8. अभि. सा. 1 श्री पोषू राम ने यह परिसाक्ष्य दिया है कि वह वाद भूमि का स्वामी है जिस पर 28 वर्ष पुराने 1-1/2 मंजिला स्लेट पाश गृह और सेब के पेड़ हैं । उसने वाद भूमि में लगभग 14 वर्ष पूर्व गृह का

निर्माण किया था । उसके पास वाद भूमि से सटे 14/15 बीघा का बगीचा है । उसने 14/15 बीघा अपनी भूमि में से 4-1/2 हिस्सा किराएदारों को दिया था और किराएदारों ने उस भूमि को वर्ष 1993 में चौबे राम को विक्रय कर दिया । उसने वर्ष 1956 में अपनी माता से वाद भूमि उत्तराधिकार में प्राप्त की थी और तभी से वह उसके कब्जे में है । उसने न्यायालय में एक वाद फाइल किया था वाद में पक्षकारों के बीच समझौता हो गया था । प्रतिवादी सं. 1 ने एक शपथपत्र फाइल किया था जिसे कार्यपालक मजिस्ट्रेट द्वारा अनुप्रमाणक किया गया जिसमें प्रतिवादी खसरा सं. 553 से खसरा सं. 551, 552 और 555 में जाने के लिए 2 करम भूमि रास्ते के लिए देने को सहमत हुआ था और उसके किराएदारों से भूमि क्रय करने के पश्चात ब्रेस्तू और अन्य चौबे राम ने उसे प्नः क्रय किया और कालोनी का निर्माण किया । प्रतिवादी सं. 1 ने उससे यह निवेदन किया कि वाद गृह में अपना वारदाना रखने के लिए उसे दो माह के लिए किराए पर दे दें, उसके इस निवेदन को उसने स्वीकार कर लिया था और दो माह के पश्चात जब उसने चौबे राम से अपने गृह का कब्जा वापस मांगा तो प्रतिवादी ने इसके ऊपर कब्जा रखते हुए अपने फति आबादी होने का प्रत्याख्यान किया । प्रतिवादी ने 6 सेब के पेड़ों को काट दिया । पुलिस घटनास्थल पर आई थी । चौबे राम ने इस पर विद्युत मीटर लगा लिया था और इसे परखू राम को किराए पर दे दिया था । उसने एल. सी. की नियुक्ति के लिए एक आवेदन प्रस्तुत किया था । निधि सिंह द्वारा गृह का स्थल नक्शा तैयार किया गया था । उसने शजरा नसब प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/एफ साबित किया । उसने फूलनू देवी के फित आबादी का शजरा नसब प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/जी को साबित किया । उसने शजरा नसब प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/एच और आबादी प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/आई की प्रति को साबित किया । उसने जमाबन्दी प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/एन और प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ओ की प्रतियों के साथ प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/के से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/एम की नामांतरण प्रति, मुसबी प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/जे की प्रति को भी साबित किया ।

- 9. अभि. सा. 2 मदन लाल ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि पोषू राम के पास एक बगीचा और 1-1/2 मंजिला गृह था । गृह का निर्माण वर्ष 1975 में हुआ था ।
- 10. अभि. सा. 3 बेली राम ने यह परिसाक्ष्य दिया कि वाद भूमि, पोषू राम द्वारा धारित थी । इस पर एक सेब का बगीचा और एक 1-1/2

मंजिला गृह था । यह वर्ष 1997 तक चौबे राम के कब्जे में था । चौबे राम ने भी सेब के पेड़ों को काट दिया था ।

11. अभि. सा. 4 प्रेम दास भाटिया ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि पोषू राम, वाद भूमि का स्वामी था जिस पर 1-1/2 मंजिला गृह और बगीचा स्थित था । फूलमा देवी, वार्ड पंच और देव राज के गृह वाद भूमि से सटे हुए थे । चौबे राम ने संविदा पर पोषू के बगीचे को लिया था और उसके बाद उस पर कब्जा कर लिया था । चौबे राम ने वाद गृह की सफेदी करवा ली थी और विद्युत मीटर लगवा लिया था और अवरोधक दीवार भी खड़ी कर ली थी । चौबे राम की वाद भूमि से सटी कोई भूमि नहीं थी । चौबे राम के पिता के पास दो बीघा पांच बिस्वा भूमि थी और एक गृह भी था जिसे गिरा दिया गया था ।

12. अभि. सा. 5 श्री नरेन्दर शर्मा के अनुसार, चौबे राम का तारीख 17 मई, 1995 का शपथपत्र उसके रिजस्टर में क्रम सं. 303 पर प्रविष्ट हुआ था । वह मूल शपथपत्र की प्रतिलिपि नहीं लाया है क्योंकि इसे नियमों के अनुसार नष्ट कर दिया गया है ।

13. अभि. सा. 6 निधि सिंह ने स्थल नक्शा प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ए को साबित किया है।

14. अभि. सा. 7 चुन्नी लाल शर्मा, अधिवक्ता, कुल्लू ने यह कथन किया है कि वह चौबे राम को जानता है। शपथपत्र प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/ए में उसने चौबे राम की शनाख्त की है किन्तु उसका शपथपत्र उसकी उपस्थिति में कार्यपालक मजिस्ट्रेट द्वारा अनुप्रमाणित नहीं हुआ था न ही किसी व्यक्ति ने उसकी उपस्थिति में हस्ताक्षर किए थे। प्रतिवादी के हस्ताक्षर पहले से ही शपथपत्र पर थे। उसने न्यायालय परिसर में चौबे राम की शनाख्त की। वह कार्यपालक मजिस्ट्रेट के पास कभी नहीं गया और प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/ए, चौबे राम द्वारा उसे दिया गया था।

15. अभि. सा. 8 डा. आर. शर्मा, प्रश्नगत दस्तावेजों का सहायक सरकारी परीक्षक, ने यह परिसाक्ष्य दिया कि उसने विभिन्न दस्तावेजों की परीक्षा की और उन पर अपनी राय व्यक्त की । उसने क्यू-1 से क्यू-3, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/ए और स्वीकृत हस्ताक्षर ए-1 से ए-3, जो वकालतनामा और लिखित कथन हैं, के साथ तारीख 21 दिसम्बर, 2000 के पत्र सं. 2237 द्वारा ज्येष्ठ उप-न्यायाधीश, कुल्लू के न्यायालय से दस्तावेज प्राप्त किए थे और इन दस्तावेजों की परीक्षा करने के पश्चात उसने यह निष्कर्ष निकाला

था कि क्यू-1 से क्यू-3 और ए-1 से ए-3 एक ही व्यक्ति द्वारा लिखे गए थे । उसने अपनी रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 8/ए और प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 8/बी को साबित किया है ।

- 16. श्री चौबे राम, प्रतिवादी साक्षी 1 के रूप में उपस्थित हुआ । उसने यह परिसाक्ष्य दिया कि वह वाद गृह का कब्जे सिहत स्वामी है जिसे उसने अपने पूर्व पिता के समय पर आबादी भूमि पर बनाया था जो 23 फीट × 23 फीट है । उसने एक शेड का भी निर्माण किया है । वह इस गृह के लिए गृहकर संदाय करता है और इसकी प्राप्तियों प्रदर्श डी-1 से डी-5 को साबित किया है । उसने विद्युत मीटर भी लगाया है जिसकी प्राप्तियों के साथ बिलों को साबित किया है जो प्रदर्श डी-6 से प्रदर्श डी-8 हैं । उसके अनुसार, वादी फित बाल्ह का निवासी है, कोठी माजरा का फित मोहल में कोई गृह नहीं है । परखू, प्रतिवादी सं. 2 उसका किराएदार था और वादी ने उसे परेशान करने के लिए ही वाद फाइल किया है ।
- 17. प्रतिवादी साक्षी 2 हिर चन्द ने प्रतिवादी साक्षी 1 चौबे राम के बयान का समर्थन किया है।
- 18. सुस्पष्टतः, वादी का पक्षकथन यह है कि चौबे राम ने कार्यपालक मिजिस्ट्रेट, कुल्लू के समक्ष सशपथ एक शपथपत्र प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/ए फाइल किया है जिसके द्वारा वह पोषू राम को खाता सं, 551, 552 और 555 में जाने के लिए खाता सं. 553 के माध्यम से रास्ते के लिए 2 करम भूमि देने को सहमत हुआ था।
- 19. प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/ए, तारीख 17 मई, 1995 का है और समझौता, तारीख 16 मई, 1995 का है । यदि मामले में पहले ही तारीख 16 मई, 1995 को समझौता हो गया था तो चौबे राम द्वारा तारीख 17 मई, 1995 को सशपथ एक शपथपत्र देने का कोई अवसर नहीं था । अभि. सा. 7 चुन्नी लाल शर्मा, अधिवक्ता, जैसा कि उपर्युक्त उल्लिखित है, ने यह स्वीकार किया है कि उसने चौबे राम की शनाख्त की है किन्तु इस शपथपत्र को उसकी उपस्थिति में कार्यपालक मिजस्ट्रेट द्वारा अनुप्रमाणित नहीं किया गया था, न ही उसकी उपस्थिति में किसी व्यक्ति ने इस पर हस्ताक्षर किए थे । प्रतिवादी के हस्ताक्षर पहले से ही शपथपत्र पर थे । उसने न्यायालय परिसर में चौबे की शनाख्त की । वह कभी भी कार्यपालक मिजस्ट्रेट के पास नहीं गया और प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/ए को चौबे राम द्वारा उसके पास लाया गया था ।

20. वादी ने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 18, नियम 17(क) और आदेश 18, नियम 2(4) के साथ पठित धारा 151 के अधीन एक आवेदन फाइल किया । इसे तारीख 12 नवम्बर, 1998 को मंजूर कर लिया गया था । इसके पश्चात्, वादी ने पुनः सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 18, नियम 17 और आदेश 18, नियम 2(4) के साथ पठित धारा 151 के अधीन एक आवेदन फाइल किया । आवेदन में अन्तर्विष्ट प्रकथनों के अनुसार, अभि. सा. 7 श्री चुन्नी लाल, अधिवक्ता की परीक्षा के समय पर वह वादी को विनिर्दिष्ट सुझाव नहीं दे सका था । विद्वान् ज्येष्ठ उप-न्यायाधीश, कुल्लू ने आवेदन को तारीख 25 जून, 1999 को विनिश्चित करते समय यह सही ही निष्कर्ष निकाला है कि यह वादी ही था जिसे उक्त अभि. सा. 7 श्री चुन्नी लाल के सभी सुझावों पर सभी प्रकार से ध्यान और सावधानी बरतनी चाहिए थी जब वह साक्षी कठघरे में उपस्थित हुआ था । बल्कि, अभि. सा. 7 चुन्नी लाल ने वादी के पक्षकथन का समर्थन नहीं किया । इस प्रकार, चुन्नी लाल, अभि. सा. 7 को उसे आगे सुझाव देने के लिए पुनः नहीं बुलाया जा सकता है । वादी को ही तारीख 17 मई, 1997 के शपथपत्र प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/ए को साबित करना था । इस प्रकार, विद्वान् ज्येष्ठ उप-न्यायाधीश, कुल्लू ने तारीख 25 जुन, 1999 को उसके आवेदन को नामंजुर कर दिया था । वादी ने शपथपत्र पर प्रतिवादी के हस्ताक्षरों का मिलान करने के लिए पुनः सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 18, नियम 17(क) और आदेश 18, नियम 2(4) के साथ पठित धारा 151 के अधीन एक आवेदन फाइल किया और श्री एन. सी. सूद, उप-सरकारी परीक्षक, प्रश्नगत दस्तावेजों का सरकारी परीक्षक कार्यालय, गृह मंत्रालय को तारीख 16 मई, 2001 के आदेश द्वारा तारीख 11 जुलाई, 2001 के लिए समन करने का आदेश दिया गया । फिर भी, वादी ने ज्येष्ठ उप-न्यायाधीश, कुल्लु द्वारा सिविल वाद सं. 87/94 में पारित तारीख 17 मई. 1995 के आदेश की प्रतिलिपि अभिलेख पर रखने के लिए, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 18, नियम 17(क) और आदेश 18, नियम 2(4) के अधीन एक अन्य आवेदन फाइल किया और पूर्वस्थिगत के लिए तथा उस तारीख को मामले की सुनवाई के लिए और 1994 की सिविल वाद सं. 87 में तारीख 16 मई, 1995 के समझौते की प्रमाणित प्रति को साबित करने के लिए भी आवेदन फाइल किया । आवेदन को विद्वान ज्येष्ठ उप-न्यायाधीश, कुल्लू द्वारा तारीख 20 अगस्त, 2001 को खारिज कर दिया गया । विद्वान विचारण न्यायालय ने यह नोटिस किया कि वादी तारीख 17 मई, 1995 और 16

मई, 1995 को दस्तावेजों को अभिलेख पर रखना चाहता था किन्तु इसका कोई कारण नहीं दिया गया कि वादी को इतने लम्बे समय तक ऐसा करने से क्यों रोका गया और वादी का पक्षकथन यह नहीं था कि सम्यक् परिश्रम करने के पश्चात् भी वह उसे समय पर प्रस्तुत नहीं कर सका जब वह अपने साक्ष्य को दे रहा था । आवेदन को तारीख 20 अगस्त, 2001 को नामंजूर कर दिया गया था ।

21. श्री जगन नाथ, अधिवक्ता ने न्यायालय में वादपत्र फाइल किया । जिसमें प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/ए के बारे में कोई प्रकथन नहीं है । इसे ध्यान में रखते हुए, वादी को वादपत्र में विनिर्दिष्ट प्रकथन करने चाहिए थे और उसके बाद शपथपत्र को साबित करने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत करने चाहिए थे । वादी ने उस कार्यपालक मिजस्ट्रेट की परीक्षा नहीं की जिसने तारीख 17 मई, 1995 को शपथपत्र अनुप्रमाणित किया था । न्यायालय में जैसा कि उपर्युक्त उल्लिखित है, समझौता तारीख 16 मई, 1995 का है और शपथपत्र तारीख 17 मई, 1995 का है । चौबे राम के पास तारीख 16 मई, 1995 को पहले ही समझौता हो जाने के पश्चात् शपथपत्र फाइल करने का कोई अवसर नहीं था ।

22. अभि. सा. 7 चुन्नी लाल, अधिवक्ता द्वारा किए गए चालबाजी भरे कथनों के अनुक्रम में शपथपत्र प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/ए को साबित करने के लिए, वादी द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 18, नियम 17 और आदेश 18, नियम 2(4) के साथ पठित धारा 151 के अधीन बार-बार आवेदन फाइल करने को विद्वान प्रथम अपील न्यायालय, विचार में लेने में असफल रहा है । विचारण न्यायालय ने मौखिक के साथ ही दस्तावेजी साक्ष्यों विशिष्टतया प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/ए का वादी के मामले को खारिज करते समय सही ही मूल्यांकन किया है किन्तु प्रथम अपील न्यायालय ने प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/ए का अवलंब लेते हुए विधि में त्रुटि कारित की है क्योंकि उसे विधि के अनुसरण में साबित नहीं किया गया है । वादपत्र में यह अभिवाचित नहीं किया गया है कि प्रतिवादी सं. 1 ने तारीख 17 मई. 1995 को एक शपथपत्र में शपथ लिया है । प्रतिवादी सं. 1 ने प्रदर्श डी-1 से डी-5 के माध्यम से उसके द्वारा देय गृह किराया की प्रतियों और विद्युत बिलों को भी अभिलेख पर साबित किया है । प्रथम अपील न्यायालय ने गलत तौर पर प्रतिवादी चौबे राम की ओर से ग्राह्य के रूप में शपथपत्र को माना है, यह निष्कर्ष निकालने में कि वादी खसरा सं. 555 में समाविष्ट भूमि का स्वामी है । तदनुसार, सारवान विधि के प्रश्न का उत्तर दिया जाता है ।

23. परिणामस्वरूप, नियमित द्वितीय अपील मंजूर की जाती है । विचारण न्यायालय द्वारा पारित तारीख 19 दिसम्बर, 2006 के निर्णय को पुनः स्थापित किया जाता है । प्रथम अपील न्यायालय के तारीख 6 जून, 2003 के निर्णय को अपास्त किया जाता है ।

द्वितीय अपील मंजूर की गई ।

क.

(2015) 2 सि. नि. प. 243

हिमाचल प्रदेश

सत्या देवी और एक अन्य

बनाम

करतार चन्द और अन्य

तारीख 28 मई, 2015

न्यायमूर्ति राजीव शर्मा

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) — धारा 100 [सपिटत सम्पित अन्तरण अधिनियम, 1882 की धारा 122 तथा रिजस्ट्रीकरण अधिनियम, 1908 की धारा 17] — द्वितीय अपील — स्थावर सम्पित का दान — रिजस्ट्रीकृत नहीं हो पाना — कपटपूर्ण तरीके से उसी सम्पित का विक्रय विलेख रिजस्ट्री कराना — विक्रय विलेख — रद्द किया जाना — यदि किसी युक्तियुक्त कारण से, स्थावर सम्पित के दान विलेख की रिजस्ट्री नहीं हो पाती है और तत्काल पश्चात् ही कपटपूर्वक उसी सम्पित का विक्रय विलेख की रिजस्ट्री करवा ली जाती है ऐसा विक्रय विलेख शून्य और अविधिमान्य होगा ।

वर्तमान मामले में, अपीलार्थी-वादी दलीपा के हित-पूर्विधिकारियों ने प्रत्यिथियों-प्रतिवादियों के विरुद्ध एक वाद संस्थित किया था, यह कथन करते हुए कि ग्राम रोरा बलिवाल, उप-तहसील हरोली, जिला ऊना में स्थित वर्ष 1987-88 के लिए जमाबंदी में यथा प्रविष्ट भूमि माप 10 कनाल, 5 मरला, खेवट संख्या 248, खतौनी संख्या 383, खसरा संख्या 4667, 4906, 4911, 4922, 4913, 4942, 4947, 4948, 4961, 4962, 5157 भूमि दलीपा द्वारा धारित और कब्जे में थी। अपीलार्थी सं. 2

सरसती देवी, दलीपा की पत्नी है । दलीपा ने उसके पक्ष में, हरोली में तारीख 2 जनवरी, 1991 को वाद भूमि का एक दान विलेख निष्पादित किया । दान विलेख को अशोक कुमार, विलेख लेखक द्वारा लिखा गया था । इसे सरसती देवी द्वारा स्वीकार किया गया था । दान विलेख को रजिस्ट्रीकरण के लिए उप-रजिस्ट्रार के समक्ष प्रस्त्त किया गया था । उप-रजिस्टार. हरोली ने पार्श्व साक्षियों की उपस्थिति में वादी और उसकी पत्नी सरसती देवी को यह बताया कि उन्हें दान विलेख को रजिस्ट्रीकरण करने के लिए किसी अन्य तारीख को प्रस्तृत करना चाहिए क्योंकि वह कुछ अन्य कार्यों में व्यस्त है । तथ्य यह है कि दान विलेख तारीख 2 जनवरी, 1991 को रजिस्ट्रीकृत नहीं हो सका था । प्रतिवादी सं. 1 भी दान विलेख के निष्पादन के समय उपस्थित था । उसका पारिवारिक संबंध था और प्रतिवादी सं. 4, श्री अशोक कुमार से नजदीकी थी । प्रतिवादी सं. 4, विलेख लेखक को दान विलेख के निष्पादन और तारीख 2 जनवरी, 1991 के इसके अननुप्रमाणन के तथ्य की जानकारी थी । तारीख 3 जनवरी, 1991 को प्रतिवादी सं. 1 वादी के पास उसके घर आया जबकि अन्य कुटुम्ब सदस्य बाहर गए हए थे और वादी को यह बताया कि उप-रजिस्ट्रार, हरोली, उसे जानता है और वह उप-रजिस्ट्रार, हरोली से दान विलेख का अनुप्रमाणन और रजिस्ट्रीकृत कराने में, उसकी सहायता कर सकता है। वादी दान विलेख के साथ हरोली में प्रतिवादी सं. 1 के साथ था । प्रतिवादी सं. 1 से 4 को दान विलेख के निष्पादन के बारे में जानकारी थी । उन्होंने वादी को आस-पास बैठने को कहा और वादी से कुछ लिखित में प्राप्त कर लिया और उस वादी को उप-रजिस्ट्रार, हरोली के समक्ष प्रस्तुत किया जहां वादी को उप-रजिस्ट्रार, हरोली द्वारा यह बताया गया कि दस्तावेज रजिस्ट्रीकृत हैं । तारीख 3 जनवरी, 1991 को प्रतिवादी सं. 4 द्वारा निष्पादित विक्रय विलेख और विशेष मुख्तारनामा प्राप्त कर लिया गया था । प्रतिवादी सं. 1 से 4 ने वाद भूमि के बारे में अभिकथित विक्रय विलेख प्राप्त करने के लिए वादी के साथ दुर्व्यपदेशन और कपट किया और वादी की पत्नी सरसती के पक्ष में दान विलेख के निष्पादन के तथ्य को छिपाते हुए दुरभिसंधि करके विशेष मुख्तारनामा प्राप्त कर लिया था । तारीख 7 जनवरी, 1991 को वादी दान विलेख प्राप्त करने के लिए उप-रजिस्ट्रार, हरोली के कार्यालय गया किन्तू, उप-रजिस्ट्रार के लिपिक ने वादी को दान विलेख वापस कर दिया, इस आधार पर कि उप-रजिस्ट्रार ने इसे रजिस्टर करने से इनकार कर दिया है, क्योंकि वादी ने प्रश्नगत भूमि का विक्रय विलेख निष्पादित करते हुए इसे करतार चन्द, प्रतिवादी सं. 1 को पहले ही विक्रय कर चुका है । इसके पश्चात्, वादी ने प्रतिवादी सं. 4, विलेख लेखक के साथ ही उप-रजिस्ट्रार के कार्यालय से अभिकथित विक्रय विलेख के बारे में पूछ-ताछ की और तब उसे प्रतिवादी सं. 1 के पक्ष में विक्रय विलेख का निष्पादन और रजिस्ट्रीकरण तथा प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में विशेष मुख्तारनामा के बारे में जानकारी हुई । वादी ने कभी भी कोई विक्रय विलेख और विशेष मुख्तारनामा निष्पादित नहीं किया है और न ही प्रतिवादी सं. 1 से कोई प्रतिफल प्राप्त किया है। प्रतिवादी सं. 1 से 4 ने लिखित कथन फाइल करते हुए, वाद का विरोध किया । गुणागुणों पर, यह स्वीकृत है कि दलीपा, वाद भूमि का स्वामी था किन्तु तारीख 3 जनवरी, 1991 का विक्रय विलेख निष्पादित होने के पश्चात् प्रतिवादी सं. 1 वाद भूमि का कब्जे सहित पूर्ण स्वामी हो गया और वादी कब्जे से बाहर हो गया था । यह अभिकथित है कि वादी ने स्वतंत्र सहमति और व्ययन करने के लिए स्वस्थिचित्त होते हुए विक्रय विलेख निष्पादित किया था और दलीपा द्वारा पूर्ण प्रतिफल की रकम प्राप्त की गई थी और इसी तथ्य को उप-रजिस्ट्रार के समक्ष भी स्वीकार किया गया है । वादी द्वारा प्रत्युत्तर फाइल किया गया था । विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा तारीख 23 दिसम्बर, 1998 को विवाद्यक विरचित किए गए थे । विद्वान् उप-न्यायाधीश (II), ऊना, जिला ऊना, हि. प्र. ने तारीख 19 दिसम्बर, 2000 को वाद खारिज कर दिया था । वादी दलीपा की मृत्यु तारीख 1 अगस्त, 1991 को हो गई थी और उसकी पुत्री श्रीमती सत्या देवी को अभिलेख पर लाया गया था । प्रोफार्मा प्रतिवादी सं. 5 श्रीमती सरसती देवी को भी वादी के रूप में जोड़ा गया था । सरसती ने वादी (दलीपा) के मामले को स्वीकार करते हुए पहले ही लिखित कथन फाइल कर दिया था । वादियों ने विद्वान अपर जिला न्यायाधीश, ऊना, जिला ऊना, हि. प्र. के समक्ष एक अपील फाइल की । उन्होंने तारीख 30 अप्रैल, 2005 को इसे खारिज कर दिया । अतएव, यह नियमित द्वितीय अपील फाइल की गई । न्यायालय द्वारा द्वितीय अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित — विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री एन. के. ठाकुर ने यह जोखार तर्क दिया कि वादी, दलीपा कभी भी भूमि को अपने दामाद के हाथों में जाने नहीं देना चाहता था । सत्या देवी, वादी की एकमात्र पुत्री थी और वादी और उसकी माता की मृत्यु के पश्चात् भूमि उसके विधिक उत्तराधिकारियों के पास आने के लिए आबद्ध थी । जब एक बार वादी दान विलेख का रिजस्ट्रीकरण कराने के लिए गया था, जिसे अभि. सा. 1 कश्मीरी लाल और अभि. सा. 2 बलवन सिंह की उपस्थिति में अभि. सा. 4,

अशोक कुमार ने लिखा था तब उसके पास तारीख 3 जनवरी, 1991 को उस भूमि का विक्रय प्रतिवादी सं. 1 को करने के लिए कोई अवसर नहीं रह गया था । अपीलार्थियों के विद्वान काउंसेल श्री अजय शर्मा की इस दलील में विचारणीय बल है कि वस्तुतः, उसके मुवक्किल के साथ यह विश्वास दिलाते हुए कपट किया गया है कि दस्तावेज, जो उप-रजिस्ट्रार के समक्ष प्रस्तुत किए गए थे, दान विलेख के संबंध में थे और न कि विक्रय विलेख के संबंध में थे । अभि. सा. 1, कश्मीरी लाल के कथन के अनुसार, सत्या देवी और उसके माता-पिता के बीच सौहार्दपूर्ण संबंध थे । अभिलेख पर यह भी आया है कि सरसती देवी वाद भूमि के कब्जे में बनी रही थी । इसके अतिरिक्त, दान विलेख समय के पूर्व का है और विक्रय विलेख बाद के समय का है । तारीख 3 जनवरी, 1991 की विशेष मुख्तारनामा और 3 जनवरी, 1991 के विक्रय विलेख प्रदर्श डी-1 का निष्पादन प्रतिवादी सं. 1 द्वारा किए गए कपट का परिणाम है और प्रतिवादियों द्वारा वादी के साथ दुर्व्यपदेशन किया गया है । चूंकि वादी दलीपा ने पहले ही अपनी पत्नी के पक्ष में दान विलेख निष्पादित कर चुका है, इसलिए, प्रदर्श डी-1 के द्वारा उस संपत्ति के विक्रय के लिए आशय का निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है, बावजूद इसके कि उसके बाद वह भूमिहीन हो जाता है । तद्नुसार, निचले न्यायालयों ने मौखिक के साथ ही दस्तावेजी साक्ष्यों का सही तौर पर मूल्यांकन नहीं किया है । यह दोहराया जाता है कि वादी के पास उस भूमि का विक्रय करने के लिए कोई अवसर नहीं रह जाता है जिसका वह एक बार तारीख 2 जनवरी, 1991 के लिखित दान विलेख, प्रदर्श डी-1 कर चुका है । (पैरा 21, 23 और 24)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा
[2001] [2001] 1 उम. नि. प. 280 = ए. आई. आर.
1999 एस. सी. 1441 :
विद्याधर बनाम माणिक राव ; 23
[1954] ए. आई. आर. 1954 मद्रास 215 :
चेन्नूपति वेंकटसुब्बमा बनाम नेल्लूरी नारायणस्वामी । 22
अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2005 की नियमित द्वितीय अपील सं. 278.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन अपील ।
अपीलार्थियों की ओर से श्री अजय शर्मा, अधिवक्ता
प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 की ओर से सर्वश्री एन. के. ठाकुर, ज्येष्ठ
अधिवक्ता के साथ रोहित भरोल,

न्यायमूर्ति राजीव शर्मा – यह नियमित द्वितीय अपील, विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश, ऊना, जिला ऊना, हि. प्र. द्वारा 2001 की सिविल अपील सं. 6 में पारित तारीख 30 अप्रैल, 2005 के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध निर्देशित है।

2. इस नियमित द्वितीय अपील का अधिनिर्णय करने के लिए आवश्यक मुख्य तथ्य यह हैं कि अपीलार्थी-वादी दलीपा (जिसे इसमें इसके पश्चात् सुविधा के लिए "वादी" कहा गया है) के हित-पूर्वाधिकारियों ने प्रत्यर्थियों-प्रतिवादियों (जिन्हें इसमें इसके पश्चात स्विधा के लिए ''प्रतिवादियों'' कहा गया है) के विरुद्ध एक वाद संस्थित किया था, यह कथन करते हुए कि ग्राम रोरा बलिवाल, उप-तहसील हरोली, जिला ऊना में स्थित वर्ष 1987-88 के लिए जमाबंदी में यथा प्रविष्ट भूमि माप 10 कनाल, 5 मरला, खेवट संख्या 248, खतौनी संख्या 383, खसरा संख्या 4667, 4906, 4911, 4922, 4913, 4942, 4947, 4948, 4961, 4962, 5157 भूमि (जिसे इसमें इसके पश्चात् सुविधा के लिए "वाद भूमि" कहा गया है) दलीपा द्वारा धारित और कब्जे में थी । अपीलार्थी सं. 2 सरसती देवी, दलीपा की पत्नी है । दलीपा ने उसके पक्ष में, हरोली में तारीख 2 जनवरी, 1991 को वाद भूमि का एक दान विलेख निष्पादित किया । दान विलेख को अशोक कुमार, विलेख लेखक द्वारा लिखा गया था । इसे सरसती देवी द्वारा स्वीकार किया गया था । दान विलेख को रजिस्ट्रीकरण के लिए उप-रजिस्ट्रार के समक्ष प्रस्तुत किया गया था । उप-रजिस्ट्रार, हरोली ने पार्श्व साक्षियों की उपस्थिति में वादी और उसकी पत्नी सरसती देवी को यह बताया कि उन्हें दान विलेख को रजिस्ट्रीकरण करने के लिए किसी अन्य तारीख को प्रस्तुत करना चाहिए क्योंकि वह कुछ अन्य कार्यों में व्यस्त है । तथ्य यह है कि दान विलेख तारीख 2 जनवरी, 1991 को रजिस्ट्रीकृत नहीं हो सका था । प्रतिवादी सं. 1 भी दान विलेख के निष्पादन के समय उपस्थित था । उसका पारिवारिक संबंध था और प्रतिवादी सं. 4, श्री अशोक कुमार से नजदीकी थी । प्रतिवादी सं. 4, विलेख लेखक को दान विलेख के निष्पादन और तारीख 2 जनवरी, 1991 के इसके अननुप्रमाणन के तथ्य की जानकारी थी । तारीख 3 जनवरी, 1991 को प्रतिवादी सं. 1 वादी के पास उसके घर आया जबकि अन्य कुटुम्ब सदस्य बाहर गए हुए थे और वादी को यह बताया कि उप-रजिस्ट्रार, हरोली, उसे जानता है और वह उप-रजिस्ट्रार, हरोली से दान विलेख का अनुप्रमाणन और रजिस्ट्रीकृत कराने में, उसकी सहायता कर सकता है। वादी दान विलेख के साथ हरोली में प्रतिवादी सं. 1 के साथ था । प्रतिवादी सं. 1 से 4 को दान विलेख के निष्पादन के बारे में जानकारी थी । उन्होंने वादी को आस-पास बैठने को कहा और वादी से कुछ लिखित में प्राप्त कर लिया और उस वादी को उप-रजिस्ट्रार, हरोली के समक्ष प्रस्तुत किया जहां वादी को उप-रजिस्ट्रार, हरोली द्वारा यह बताया गया कि दस्तावेज रजिस्ट्रीकृत हैं । तारीख 3 जनवरी, 1991 को प्रतिवादी सं. 4 द्वारा निष्पादित विक्रय विलेख और विशेष मुख्तारनामा प्राप्त कर लिया गया था । प्रतिवादी सं. 1 से 4 ने वाद भूमि के बारे में अभिकथित विक्रय विलेख प्राप्त करने के लिए वादी के साथ दुर्व्यपदेशन और कपट किया और वादी की पत्नी सरसती के पक्ष में दान विलेख के निष्पादन के तथ्य को छिपाते हुए दुरभिसंधि करके विशेष मुख्तारनामा प्राप्त कर लिया था । तारीख 7 जनवरी, 1991 को वादी दान विलेख प्राप्त करने के लिए उप-रजिस्ट्रार, हरोली के कार्यालय गया किन्तु, उप-रजिस्ट्रार के लिपिक ने वादी को दान विलेख वापस कर दिया, इस आधार पर कि उप-रजिस्ट्रार ने इसे रजिस्टर करने से इनकार कर दिया है, क्योंकि वादी ने प्रश्नगत भूमि का विक्रय विलेख निष्पादित करते हुए इसे करतार चन्द, प्रतिवादी सं. 1 को पहले ही विक्रय कर चुका है । इसके पश्चात्, वादी ने प्रतिवादी सं. 4, विलेख लेखक के साथ ही उप-रजिस्ट्रार के कार्यालय से अभिकथित विक्रय विलेख के बारे में पुछताछ की और तब उसे प्रतिवादी सं. 1 के पक्ष में विक्रय विलेख का निष्पादन और रजिस्ट्रीकरण तथा प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में विशेष मुख्तारनामा के बारे में जानकारी हुई । वादी ने कभी भी कोई विक्रय विलेख और विशेष मुख्तारनामा निष्पादित नहीं किया है और न ही प्रतिवादी सं. 1 से कोई प्रतिफल प्राप्त किया है।

3. प्रतिवादी सं. 1 से 4 ने लिखित कथन फाइल करते हुए, वाद का विरोध किया । गुणागुणों पर, यह स्वीकृत है कि दलीपा, वाद भूमि का स्वामी था किन्तु तारीख 3 जनवरी, 1991 का विक्रय विलेख निष्पादित होने के पश्चात् प्रतिवादी सं. 1 वाद भूमि का कब्जे सिहत पूर्ण स्वामी हो गया और वादी कब्जे से बाहर हो गया था । यह अभिकथित है कि वादी ने स्वतंत्र सहमित और व्ययन करने के लिए स्वस्थिचित्त होते हुए विक्रय विलेख निष्पादित किया था और दलीपा द्वारा पूर्ण प्रतिफल की रकम प्राप्त की गई थी और इसी तथ्य को उप-रिजस्ट्रार के समक्ष भी स्वीकार किया गया है ।

- 4. वादी द्वारा प्रत्युत्तर फाइल किया गया था । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा तारीख 23 दिसम्बर, 1998 को विवाद्यक विरचित किए गए थे । विद्वान् उप-न्यायाधीश (II), ऊना, जिला ऊना, हि. प्र. ने तारीख 19 दिसम्बर, 2000 को वाद खारिज कर दिया था ।
- 5. वादी दलीपा की मृत्यु तारीख 1 अगस्त, 1991 को हो गई थी और उसकी पुत्री श्रीमती सत्या देवी को अभिलेख पर लाया गया था । प्रोफार्मा प्रतिवादी सं. 5 श्रीमती सरसती देवी को भी वादी के रूप में जोड़ा गया था । सरसती ने वादी (दलीपा) के मामले को स्वीकार करते हुए पहले ही लिखित कथन फाइल कर दिया था ।
- 6. वादियों ने विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश, ऊना, जिला ऊना, हि. प्र. के समक्ष एक अपील फाइल की । उन्होंने तारीख 30 अप्रैल, 2005 को इसे खारिज कर दिया । अतएव, यह नियमित द्वितीय अपील फाइल की गई ।
- 7. यह नियमित द्वितीय अपील तारीख 18 मई, 2015 को निम्नलिखित विधि के सारवान् प्रश्न पर स्वीकार की गई थी:—

"प्रदर्श पी-1 के निष्पादन को ध्यान में रखते हुए, क्या वाद के समय पर डी-1 का निष्पादन, प्रतिवादियों को विधि में कोई हक हस्तांतरित नहीं करता है, किन्तु, निचले न्यायालयों ने मामले के उक्त पहलू पर ध्यान नहीं दिया, इसलिए, आक्षेपित निर्णय और डिक्रियां दूषित हो गई हैं ?"

8. वादियों के विद्वान् काउंसेल श्री अजय शर्मा ने यह जोरदार तर्क दिया है कि प्रदर्श डी-1, तारीख 3 जनवरी, 1991 का विक्रय विलेख, छद्म संव्यवहार है । उसके बाद, उन्होंने यह दलील दी कि दलीपा, वादियों का हित-पूर्वाधिकारी ने वादी सं. 2 सरसती देवी के पक्ष में पहले ही तारीख 2 जनवरी, 1991 का दान विलेख निष्पादित कर चुका था, इस प्रकार, उसे प्रदर्श डी-1 के माध्यम से वाद भूमि का विक्रय करने का कोई अवसर नहीं था । अंततः, उन्होंने यह दलील दी कि विक्रय विलेख का निष्पादन उसके मुवक्किलों के साथ किए गए कपट का परिणाम था ।

- 9. प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 के विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री एन. के. ठाकुर ने दोनों निचले न्यायालयों द्वारा पारित निर्णयों और डिक्रियों का समर्थन किया ।
- 10. मैंने, पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुना और अभिवचनों तथा अभिलेखों का ध्यानपूर्वक परिशीलन किया ।
- 11. अभि. सा. 1, कश्मीरी लाल ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि वह दलीपा को जानता है । सरसती देवी उसकी विधवा है । उसकी एकमात्र पुत्री सत्या है । उसने यह भी अभिसाक्ष्य दिया कि दलीपा ने अपनी पत्नी के पक्ष में दान विलेख का रजिस्ट्रीकरण कराने के लिए, उसे और बलवन, लम्बरदार को हरोली ले गया था । उसकी पत्नी भी उसके साथ थी । यह जनवरी, 1991 का महीना था, कि दान विलेख प्रदर्श पी-1 को विलेख लेखक, अशोक कुमार द्वारा लिखा गया था । इसकी अन्तर्वस्तुओं को दलीपा को पढ़कर सुनाया गया था और स्पष्टीकृत किया गया था । दलीपा ने दान विलेख पर अपने हस्ताक्षर किए और उसके पश्चात उसने और बलवन सिंह ने उस पर अपने हस्ताक्षर किए थे । सरसती ने भी उसे स्वीकार किया और दस्तावेज पर अपने अंगूठे का निशान लगाया था । वह, सरसती और बलवन सिंह के साथ उसका रजिस्ट्रीकरण कराने के लिए उप-रजिस्ट्रार के कार्यालय गया था । तथापि, उप-रजिस्ट्रार ने यह बताया कि आज का दिन रजिस्ट्रीकरण के लिए नहीं है और वह बाहर जा रहा है । उन्होंने यह बताया कि वे सोमवार को आएं । दलीपा ने दान विलेख को उप-रजिस्ट्रार के समक्ष प्रस्तृत किया किन्तू, उप-रजिस्ट्रार ने उन्हें यह बताया कि पश्चातवर्ती कारणों से दान विलेख रजिस्ट्रीकृत नहीं हो सकता था । उसने यह भी अभिसाक्ष्य दिया कि भूमि, सरसती के कब्जे में थी और यह कभी भी करतार चन्द के कब्जे में नहीं आई थी । अपनी प्रतिपरीक्षा में, उसने सुरपष्टतः यह अभिसाक्ष्य दिया कि सत्या देवी का उसके माता-पिता के साथ संबंध सौहार्दपूर्ण थे । वह यह नहीं जानता कि विल क्यों निष्पादित नहीं हुआ था, स्वैच्छिक तौर पर वह दान विलेख निष्पादित करना चाहता था इससे बचने के लिए कि उसका दामाद वाद भूमि का विक्रय नहीं कर सके ।
 - 12. अभि. सा. 2 बलवन सिंह ने अभि. सा. 1 के कथनों की संपुष्टि

की है । उसने दान विलेख पर एक पार्श्व साक्षी के रूप में हस्ताक्षर किए हैं । उसे ही उप-रजिस्ट्रार के समक्ष प्रस्तुत किया गया था । तहसीलदार बाहर गया हुआ था और उन्हें यह बताया गया कि उन्हें किसी अन्य तारीख पर आना चाहिए । इसके पश्चात्, सोमवार को वह, दलीपा, सरसती और कश्मीरी लाल के साथ उप-रजिस्ट्रार के कार्यालय गया । उप-रजिस्ट्रार ने यह बताया कि रजिस्ट्री पहले से ही प्रभावित है और इस प्रकार, दान विलेख निष्पादित नहीं हो सका था । दलीपा ने उसे बताया कि वह कोई रजिस्ट्री निष्पादित नहीं करा सका था । अपनी प्रतिपरीक्षा में उसने यह अभिसाक्ष्य दिया कि अशोक कुमार, दान विलेख का विलेख लेखक था ।

13. अभि. सा. 3 सरसती देवी ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि वह पार्श्व साक्षियों कश्मीरी और बलवन, लम्बरदार के साथ दान विलेख का निष्पादन कराने के प्रयोजन के लिए हरोली गई थी । दान विलेख को विलेख लेखक से लिखवाकर प्राप्त किया था । अधिकारी ने उन्हें यह बताया कि उन्हें सोमवार को आना चाहिए । वे कश्मीरी लाल के साथ सोमवार को गए । तथापि, उन्हें यह जानकारी हुई कि करतारा ने पहले ही कुछ निष्पादित करवा लिया था । करतारा से कोई प्रतिफल स्वीकार नहीं किया गया था । वह वाद भूमि के कब्जे में थी । अपनी प्रतिपरीक्षा में उसने यह अभिसाक्ष्य दिया कि दलीपा अपनी चेतनावस्था में था । उसने अपने जीवनकाल में कोई भूमि कभी भी विक्रय नहीं की है ।

14. अभि. सा. 4, अशोक कुमार ने यह स्वीकार किया है कि उसने श्री बलवन सिंह और कश्मीरी लाल की उपस्थिति में सरसती देवी के पक्ष में एक विल लिखी है । इसकी अन्तर्वस्तुओं को दलीपा को पढ़कर सुनाया गया था और स्पष्टीकृत किया गया था । उसने उसे स्वीकार किया था और उसके पश्चात् उस पर अपने अंगूठे का निशान लगाया था । सरसती देवी ने भी उसे स्वीकार करते हुए, उस पर अपने अंगूठे का निशान लगाया था । उसने विल की 2 प्रतियां तैयार की थीं । इन प्रतियों में से एक उपरिजस्ट्रार के कार्यालय में रखा हुआ है ।

15. अभि. सा. 5 हरि दास ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि नायब तहसीलदार, हरोली के पास उप-रिजस्ट्रार की शक्तियां थीं । अभि. सा. 6 किपल देव ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि दलीपा के पास वर्ष 1987-88 और 1997-98 के लिए जमाबंदी में उल्लिखित भूमि के अलावा कोई भूमि नहीं है ।

16. अशोक कुमार, पुनः प्रतिवादी साक्षी 1 के रूप में उपस्थित हुआ ।

उसने यह अभिसाक्ष्य दिया कि विक्रय विलेख, प्रदर्श डी-1 को दलीपा की प्रेरणा पर तारीख 3 जनवरी, 1991 को उसके द्वारा लिखा गया था । उसने उसकी अन्तर्वस्तुओं को सत्य और सही स्वीकार करने के पश्चात् उस पर हस्ताक्षर किए थे । उसने प्रदर्श डी-1 की शनाख्त की है ।

- 17. प्रतिवादी साक्षी 2, रक्षपाल सिंह ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि उसने पार्श्व साक्षी के रूप में प्रदर्श डी-1 पर अपने हस्ताक्षर किए हैं । प्रतिवादी साक्षी 3, उत्तम चन्द ने भी पार्श्व साक्षी के रूप में प्रदर्श डी-1 पर हस्ताक्षर किए हैं । प्रतिवादी साक्षी 4, करतार चन्द ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि उसने दलीपा से 11,000/- रुपए के प्रतिफल के एवज में भूमि माप 10 कनाल, 5 मरला भूमि क्रय की है । विक्रय विलेख, प्रदर्श डी-1, पार्श्व साक्षियों द्वारा हस्ताक्षरित है । दलीपा ने भी उस पर अपने अंगूठे का निशान लगाया है । विक्रय विलेख को उप-रिजस्ट्रार के समक्ष प्रस्तुत किया गया था । उसकी अन्तर्वस्तुओं को उप-रिजस्ट्रार द्वारा दलीपा को पढ़कर सुनाया गया था और स्पष्टीकृत किया गया था और उसे सत्य स्वीकार करने के पश्चात् उसने उस पर अपने अंगूठे का निशान लगाया था । उसके अनुसार, दलीपा ने उत्तम चन्द के पक्ष में एक मुख्तारनामा प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 2/ए भी निष्पादित किया है । अपनी प्रतिपरीक्षा में, उसने यह स्वीकार किया है कि दलीपा एक कृषक है और उसके पास आय के कोई अन्य स्रोत नहीं हैं ।
- 18. उपर्युक्त कथनों के विश्लेषण से यह प्रलक्षित होता है कि दलीपा ने तारीख 2 जनवरी, 1991 को एक दान विलेख निष्पादित किया है । यह अभि. सा. 4, अशोक कुमार द्वारा लिखा गया था । अभि. सा. 1, कश्मीरी लाल और अभि. सा. 2, बलवन सिंह ने पार्श्व साक्षी के रूप में उस पर हस्ताक्षर किए हैं । दान विलेख को दलीपा की पत्नी द्वारा भी स्वीकार किया गया था । इसे उप-रजिस्ट्रार के समक्ष प्रस्तुत किया गया था । उप-रजिस्ट्रार ने यह बताया था कि वह बाहर जा रहा है और उन्हें सोमवार को आना चाहिए । वे सोमवार को उप-रजिस्ट्रार, हरोली के कार्यालय गए थे । उन्हें यह बताया गया कि इसे रजिस्ट्रीकृत नहीं किया जा सकता है क्योंकि इसका विक्रय विलेख पहले ही करतार चन्द के नाम रजिस्ट्रीकृत हो चुका है ।
- 19. अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल श्री अजय शर्मा ने यह जोरदार तर्क दिया है कि तारीख 3 जनवरी, 1991 का विक्रय विलेख प्रदर्श डी-1, कपट का परिणाम है । उसके अनुसार, उसके मुवक्किल ने प्रदर्श डी-1 के माध्यम से कभी भी भूमि विक्रय नहीं की है । उसके अनुसार, दलीपा के

साथ कपट किया गया है जो एक अशिक्षित व्यक्ति है, उसे यह समझाते हुए कि दस्तावेज, जो उप-रजिस्ट्रार के समक्ष प्रस्तुत किया गया था वह मात्र एक दान विलेख था।

20. विक्रय विलेख, प्रदर्श डी-1 भी अभि. सा. 4, अशोक कुमार द्वारा लिखा गया था । प्रतिवादी साक्षी 2, रक्षपाल सिंह और प्रतिवादी साक्षी 3, उत्तम चन्द पार्श्व साक्षी हैं । मुख्तारनामा भी प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 2/ए के माध्यम से उत्तम चन्द के पक्ष में निष्पादित किया गया था । विक्रय विलेख प्रदर्श डी-1 उप-रजिस्ट्रार के कार्यालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया था और तदनुसार, रजिस्ट्रीकृत हुआ था । दलीपा के पास मात्र एक पुत्री सत्या देवी है । वह वर्ष 1987-88 और 1997-98 के लिए जमाबंदियों में दिए गए वर्णनों के अनुसार, भूमि के अलावा किसी अन्य भूमि का स्वामी नहीं था । तथापि, प्रतिवादी साक्षी 1 अशोक कुमार ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया है कि दलीपा के पास आय का कोई अन्य स्रोत नहीं है । सत्या देवी और उसके माता-पिता के बीच संबंध सौहार्दपूर्ण थे । वस्तुतः, वादी दान विलेख का रजिस्ट्रीकरण कराने के लिए तारीख 2 जनवरी, 1991 को हरोली गया था किन्तु उप-रजिस्ट्रार द्वारा यह सूचित किया गया कि रजिस्ट्रीकरण नहीं हो सकता है और उन्हें सोमवार को आना चाहिए किन्तु उस समय तक प्रदर्श डी-1 के माध्यम से विक्रय विलेख पहले ही रजिस्ट्रीकृत हो चुका था । वादी के लिए ऐसा कोई अवसर नहीं था कि वह अपने पास उपलब्ध मात्र भूमि के टुकड़े को प्रत्यर्थी सं. 1 को विक्रय कर सके । उसकी और उसकी पत्नी की जीविका चलाने के लिए एकमात्र स्रोत भूमि ही था जिसे अभिकथित तौर पर 11,000/- रुपए के प्रतिफल में प्रतिवादी सं. 1 को विक्रय किया जाना कथित है।

21. विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री एन. के. ठाकुर ने यह जोरदार तर्क दिया कि वादी, दलीपा कभी भी भूमि को अपने दामाद के हाथों में जाने नहीं देना चाहता था । सत्या देवी, वादी की एकमात्र पुत्री थी और वादी और उसकी माता की मृत्यु के पश्चात् भूमि उसके विधिक उत्तराधिकारियों के पास आने के लिए आबद्ध थी । जब एक बार वादी दान विलेख का रिजस्ट्रीकरण कराने के लिए गया था, जिसे अभि. सा. 1 कश्मीरी लाल और अभि. सा. 2 बलवन सिंह की उपस्थिति में अभि. सा. 4, अशोक कुमार ने लिखा था तब उसके पास तारीख 3 जनवरी, 1991 को उस भूमि का विक्रय प्रतिवादी सं. 1 को करने के लिए कोई अवसर नहीं रह गया था। अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल श्री अजय शर्मा की इस दलील में विचारणीय बल है कि वस्तुतः, उसके मुवक्किल के साथ यह विश्वास दिलाते हुए कपट किया गया है कि दस्तावेज, जो उप-रिजस्ट्रार के समक्ष प्रस्तुत किए गए थे, दान विलेख के संबंध में थे और न कि विक्रय विलेख के संबंध में थे और न कि विक्रय विलेख के संबंध में थे । अभि. सा. 1, कश्मीरी लाल के कथन के अनुसार, सत्या देवी और उसके माता-पिता के बीच सौहार्दपूर्ण संबंध थे । अभिलेख पर यह भी आया है कि सरसती देवी वाद भूमि के कब्जे में बनी रही थी । इसके अतिरिक्त, दान विलेख समय के पूर्व का है और विक्रय विलेख बाद के समय का है । तारीख 3 जनवरी, 1991 की विशेष मुख्तारनामा और 3 जनवरी, 1991 के विक्रय विलेख प्रदर्श डी-1 का निष्पादन प्रतिवादी सं. 1 द्वारा किए गए कपट का परिणाम है और प्रतिवादियों द्वारा वादी के साथ दूर्व्यपदेशन किया गया है ।

22. चेन्नूपित वेंकटसुब्बमा बनाम नेल्लूरी नारायणस्वामी वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि दान का निष्पादन होने के पश्चात् इसकी स्वीकृति के लिए विधि में क्या अपेक्षाएं हैं, यद्यपि दान विलेख रिजस्ट्रीकृत नहीं हो सका है । विद्वान् एकल न्यायाधीश ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:—

"9. यह निष्कर्ष, इस द्वितीय अपील को निपटाने के लिए पर्याप्त है। किन्तु, कपट और दुर्व्यपदेशन के अन्य प्रश्न पर भी विद्वान् न्यायाधीश के निष्कर्ष को विधि में न्यायोचित नहीं कहा जा सकता है। यह विचार करना प्रतीत होता है कि प्रतिवादी साक्षी 4, 8 और 9 के साक्ष्य, जो उन्होंने रामचन्दरैय्या की शिकायत के बारे में कहा है जिसे उसने डाकघर से दस्तावेज प्राप्त करने के ठीक पश्चात् किया था और उसे पढ़कर सुनाया गया था, मृतक व्यक्ति के कथन के रूप में साक्ष्य में अग्राह्य था जिसे साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 32 के अधीन नहीं लाया जा सकता था। रामचन्दरैय्या द्वारा दस्तावेज प्राप्त करने के ठीक पश्चात् मौखिक साक्ष्य द्वारा यह सिद्ध करने की ईप्सा की गई है कि इन लोगों की शिकायत यह थी कि उसके साथ सुब्बैय्या द्वारा धोखा या कपट किया गया था। यह दस्तावेज प्राप्ति के ठीक पश्चात्, उसके आचरण के बारे में साक्ष्य देता है। कथन, रामचन्दरैय्या द्वारा किए गए कथनों के रूप में साबित करने का प्रयास

¹ ए. आई. आर. 1954 मद्रास 215.

नहीं है अपितु यह मात्र रामचन्दरैय्या के आचरण को ही सिद्ध करते हैं । मैं, साक्ष्य में इन कथनों की स्वीकृति के बारे में कोई विधिक उद्देश्य नहीं पाता हूं और उस एवज में प्रतिवादी साक्षी 4, 8 और 9 के साक्ष्य से परहेज करने का भी कोई कारण नहीं पाता हूं।

विद्वान न्यायाधीश की यह भी राय थी कि उस कपट के बारे में कोई स्निश्चित अभिवाक नहीं किया गया था जिसकी प्रतिवादियों द्वारा शिकायत की गई है । कपट के बारे में, स्वयं रामचन्दरैय्या द्वारा प्रदर्श बी में स्रपष्टतः और स्पष्टतः कथन किया गया है और उस पक्षकथन में जिसमें प्रतिवादियों ने विचारण न्यायालय में साबित करने का प्रयास किया है और जिसे इसके द्वारा स्वीकार किया गया था । ये किमयां, निःसंदेह निचले अपील द्वारा साक्ष्य के पुनःविचार करने का अवसर देती हैं । इस सत्य के बारे में कोई संदेह नहीं है कि विद्वान न्यायाधीश ने एक वैकल्पिक निष्कर्ष भी अभिलिखित किया, इस उपधारणा पर कि प्रतिवादी साक्षी 4, 8 और 9 के साक्ष्य ग्राह्य थे । किन्तु, यह पृथक् करना कठिन है कि किस प्रकार उनका निष्कर्ष इस तथ्य से आच्छादित था कि उसका साक्ष्य ग्राह्य करने योग्य था और यह कि अभिवचन अपर्याप्त या अग्राह्य था । तथापि, इसे इस अनुक्रम में स्वीकार करना अनावश्यक है क्योंकि मेरी राय में, प्रथम मुद्दे पर निकाले गए निष्कर्ष, इस द्वितीय अपील को निपटाने के लिए पर्याप्त है ।

अभि. सा. 3, सरसती देवी ने पहले ही दान विलेख को स्वीकार कर लिया है और दान विलेख प्रदर्श पी-1 पर अपने अंगूठे का निशान लगा दिया है । यह दो साक्षियों द्वारा अर्थात् कश्मीरी लाल (अभि. सा. 1) और बलवन सिंह (अभि. सा. 2) द्वारा अनुप्रमाणित था।"

23. विद्याधर बनाम माणिक राव¹ वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों ने यह अभिनिर्धारित किया है कि 'विक्रय' गठित करने के अनुक्रम में, पक्षकारों का संपत्ति का स्वामित्व अंतरित करने का आशय होना चाहिए और उनका यह भी आशय होना चाहिए कि कीमत चाहे वर्तमान में या भविष्य में अवश्य संदत्त किया जाना चाहिए । आशय का पता विक्रय विलेख में उपवर्णन, पक्षकारों के आचरण और अभिलेख पर साक्ष्य से लगाया जाना चाहिए ।

¹ [2001] 1 उम. नि. प. 280 = ए. आई. आर. 1999 एस. सी. 1441.

- "(37) वास्तविक परीक्षण पक्षकारों का आशय है । इस दृष्टि से कि 'विक्रय' गठित हो, पक्षकारों का आशय संपत्ति के स्वामित्व को अंतरित करने का होना चाहिए तथा उनका आशय यह भी होना चाहिए कि कीमत का संदाय चाहे वर्तमान में अथवा भविष्य में अवश्य कर दिया जाएगा । आशय का पता विक्रय विलेख में उपवर्णन, पक्षकारों के आचरण और अभिलेख पर साक्ष्य से लगाया जाना चाहिए ।
- (38) इन सिद्धांतों को इस मामले में लागू करने पर यह दृष्ट्या है कि प्रतिवादी सं. 2 ने वादी के पक्ष में एक विक्रय विलेख का निष्पादन किया, उसे रजिस्ट्रीकरण के लिए प्रस्तुत किया, उप-रजिस्टार के समक्ष इसके निष्पादन को स्वीकार किया जिनके समक्ष उसे विक्रय प्रतिफल के शेष भाग का संदाय किया गया और तत्पश्चात दस्तावेज रजिस्ट्रीकृत किया गया । अतिरिक्त परिस्थितियां ये हैं कि जब वादी ने उपर्युक्त विक्रय विलेख के आधार पर अपने हक के आधार पर वाद संस्थित किया तब प्रतिवादी सं. 2 ने जो विक्रेता है, अपने लिखित कथन में वादी द्वारा परिवर्णित संपूर्ण मामले को स्वीकार किया और इसके अतिरिक्त उसने साक्षी कठघरे में यह भी स्वीकार किया कि उसने वादी के पक्ष में एक विक्रय विलेख का निष्पादन किया है तथा उसके प्रतिफल की पूरी रकम प्राप्त कर ली है । ये तथ्य स्पष्ट रूप से यह सिद्ध करते हैं कि प्रतिवादी सं. 2 द्वारा वादी के पक्ष में एक पूर्ण और दुर्जेय विक्रय विलेख का निष्पादन किया गया था और संपत्ति का हक वादी को संक्रांत हो गया । इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा इस प्रश्न पर अभिलिखित निष्कर्ष को कायम नहीं खा जा सकता ।
- (39) इस बिन्दु पर उच्च न्यायालय का निर्णय इस कारण से भी गलत है कि इसने संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 55(4)(ख) में अंतर्विष्ट उपबंध की उपेक्षा की है, जिसे नीचे दिया जा रहा है –

'55. तत्प्रतिकूल संविदा न हो तो स्थावर संपत्ति का क्रेता और विक्रेता क्रमशः उन दायित्वों के अध्यधीन और उन अधिकारों से युक्त होंगे जो कि ठीक नीचे लिखे नियमों में, या उनमें से ऐसी में, जो बेची गई संपत्ति को लागू हों, वर्णित हैं —

(1) से (3)	
------------	--

(4) विक्रेता हकदार है -

(<i>क</i> `) .				_	_	_	_	_	_	_	_	_	_	_	_	_	_	_	_	_	_	_	_		_	_	١
١	٦,	, .	•	•	•	•	•	•	•	•	•	•	٠	٠	•	٠	٠	٠	٠	•	٠	•	•	•	•	•	•	٠	•

- (ख) जहां कि संपत्ति का स्वामित्व, पूरा क्रय-धन दिए जाने के पूर्व, क्रेता को संक्रान्त हो गया है वहां क्रय-धन की रकम या उसके असंदत्त शेष भाग के लिए और उस तारीख से, जिसको कब्जा परिदान किया गया है, ऐसी कम या भाग पर ब्याज के लिए क्रेता या किसी भी अप्रतिफल अन्तरिती या क्रय-धन के असंदाय की सूचना रखने वाले किसी अन्तरिती के हाथ में की उस संपत्ति पर भार का।
- (5) 柱 (6) |'"

वर्तमान मामले में, चूंकि वादी दलीपा ने पहले ही अपनी पत्नी के पक्ष में दान विलेख निष्पादित कर चुका है, इसलिए, प्रदर्श डी-1 के द्वारा उस संपत्ति के विक्रय के लिए आशय का निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है, बावजूद इसके कि उसके बाद वह भूमिहीन हो जाता है।

- 24. तद्नुसार, निचले न्यायालयों ने मौखिक के साथ ही दस्तावेजी साक्ष्यों का सही तौर पर मूल्यांकन नहीं किया है। यह दोहराया जाता है कि वादी के पास उस भूमि का विक्रय करने के लिए कोई अवसर नहीं रह जाता है जिसका वह एक बार तारीख 2 जनवरी, 1991 के लिखित दान विलेख, प्रदर्श डी-1 कर चुका है।
- 25. तद्नुसार, नियमित द्वितीय अपील मंजूर की जाती है और दोनों निचले न्यायालयों द्वारा पारित निर्णय और डिक्रियां अपास्त की जाती हैं। परिणामतः, 1991 का सिविल वाद सं. 80 को डिक्री किया जाता है और तारीख 3 जनवरी, 1991 का विक्रय विलेख प्रदर्श डी-1 को अकृत और शून्य घोषित किया जाता है और प्रतिवादी सं. 1 को वादी सरसती देवी के कब्जे में हस्तक्षेप करने से अवरुद्ध किया जाता है। तद्नुसार, प्रकीर्ण आवेदन/आवेदनों, यदि कोई हों, को भी निपटाया जाता है, खर्चे का कोई आदेश नहीं किया जाता है।

द्वितीय अपील मंजूर की गई ।

क.

अविनाश चौहान

बनाम

पी. सी. धीमान और अन्य

तारीख 2 जुलाई, 2015 न्यायमूर्ति धरम चन्द चौधरी

न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 – धारा 6 – अनुकम्पा के आधार पर नियुक्ति – नियुक्ति करते समय आवेदक की कुटुम्ब आय में उसकी माता को मिलने वाली पेंशन को भी जोड़ा जाना – ऐसी संगणना करना विधिविरुद्ध होना – ऐसे आदेश का अनुपालन नहीं करना – अवमानना – यदि नियुक्ति प्राधिकारी द्वारा आवेदक के पक्ष में पारित आदेश का सम्यक् अनुपालन नहीं किया जाता है तो वह न्यायालय की अवमानना करता है और इसके लिए उसे दंडित करना सर्वथा युक्तियुक्त और विधिसम्मत होता है।

वर्तमान मामले में, आवेदक के पिता श्री पियार सिंह, हिमाचल प्रदेश के शिक्षा विभाग में पी. ई. टी. के रूप में कार्य कर रहे थे । उनकी मृत्यू वर्ष 2006 में कार्य के दौरान हो गई थी । आवेदक की अर्हता इंटरमीडिएट थी । इसके अतिरिक्त, उसने भौतिक शिक्षा में रनातक (बी. पी. ई.) की डिग्री ली थी और भौतिक शिक्षा में परा-रनातक (एम. पी. एड.) की भी शिक्षा ली थी । उसने वर्ष 2006 में स्वयं की शैक्षणिक अर्हता के अनुरूप अनुकम्पा के आधार पर नियुक्ति की ईप्सा करते हुए, एक आवेदन किया । उस पर विचार किया गया और उसे नामंजूर कर दिया गया । उसके आवेदन की नामंजूरी के बारे में संसूचना ओ. एम. संख्या ई. डी. एन.-एच.(1)(बी)(4) 241/2004-05-अनुकम्पा नियुक्ति, तारीख 20 अक्तूबर, 2012 (रिट आवेदन उपाबंध पी-15) के जारी होने के उपरान्त, उप-निदेशक, उच्चतर शिक्षा, बिलासपुर ने इस आवेदन के उपाबंध सी-3 के पत्र तारीख 21 नवम्बर, 2012 के द्वारा आवेदक को यह सूचित किया कि उसके कुटुम्ब की आय 63,000/- रुपए प्रतिवर्ष अर्थात अनुकम्पा आधार पर नियुक्ति करने के लिए स्कीम के अधीन सरकार द्वारा नियत आय मापदंड से परे होने को ध्यान में रखते हुए उसका आवेदन नामंजूर किया गया है । आवेदक ने 2013 की सी. डब्ल्यू. पी. संख्या 7674 में उपर्युक्त

विनिश्चय को चुनौती दी । इस न्यायालय के खंड न्यायपीठ ने तथ्यों और परिस्थितियों तथा लागू विधि पर भी विचार करने के पश्चात आवेदन मंजूर कर लिया । जब इस न्यायालय द्वारा पारित निर्णय को प्रवर्तित करने में प्रत्यर्थी असफल रहे. तब आवेदक ने उनके विरुद्ध 2014 की अवमान आवेदन (सिविल) संख्या 121 फाइल की । इसका निपटारा तारीख 5 मई, 2014 के आदेश उपाबंध सी-8 द्वारा किया गया । अवमान आवेदन में यथापारित आदेशों के अनुपालन में, तृतीय प्रत्यर्थी ने शपथपत्र फाइल किया जिसमें यह कथन किया है कि प्रशासनिक विभाग ने मामले में विचार करने के लिए वित्त विभाग को भेजा था और वित्त विभाग ने आवेदक के पिता की मृत्यु के समय पर उसके कुटुम्ब की आय 1,19,034/- रुपए प्रतिवर्ष पाई थी । इसलिए, आवेदक को अनुकम्पा आधार पर नियोजित होने का हकदार नहीं पाया गया था । प्रत्यर्थियों द्वारा इस प्रकार लिए गए विनिश्चय के बारे में उसे तारीख 25 मार्च. 2014 के पत्र उपाबंध सी-9 के द्वारा सूचित कर दिया गया था । इस कारण से एक अन्य अवमान आवेदन (सिविल) सं. 283/14 फाइल की गई । इसका निपटारा भी तारीख 13 अगस्त, 2014 के आदेश उपाबंध सी-10 द्वारा कर दिया गया । पूर्वोक्त आदेश के परिणामस्वरूप, प्रथम प्रत्यर्थी ने तारीख 10 नवम्बर, 2014 का आदेश उपाबंध सी-11 पारित किया । उसके परिशीलन से यह प्रकट होता है कि उक्त प्रत्यर्थी ने इस न्यायालय द्वारा 2013 की सी. डब्ल्यू. पी. संख्या 7674 में पारित निर्णय के प्रवर्तित भाग को नोट करने और वित्त विभाग से राय लेने के पश्चात भी यह निष्कर्ष निकाला कि आवेदक का मामला निर्धनावस्था में नहीं आता है न ही यह वर्ष 2006 में सरकार द्वारा नियत वित्तीय/आय मापदंड को पुरा करता है । इसलिए, आवेदक का अनुकम्पा आधार पर नियुक्ति के लिए दावा नामंजुर कर दिया गया । आदेश उपाबंध सी-11 के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी सं. 1 ने वित्त विभाग की सलाह पर कुटुम्ब की आय में पेंशन की रकम को सम्मिलित किया था जिसे 2013 की सी. डब्ल्यू. पी. संख्या 7674 में पारित निर्णय के अनुसार सम्मिलित नहीं किया जा सकता था । आवेदक ने 2014 की अवमान आवेदन (सिविल) संख्या 283 में 2014 की सी. एम. पी. संख्या 18778 फाइल किया, इस निवेदन के साथ कि प्रत्यर्थियों ने बार-बार निर्देश देने के बावजूद इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश का अनुपालन नहीं किया । इस आवेदन में पारित तारीख 1 दिसम्बर, 2014 और तारीख 1 जनवरी, 2015 के आदेशों के अनुसार, प्रत्यर्थियों को इस न्यायालय द्वारा जारी निर्देशों का अनुपालन करने का निर्देश दिया गया था ।

जो कुछ भी हो, आवेदन को आदेश उपाबंध सी-13 द्वारा खारिज कर दिया गया था, निस्संदेह, इस स्वतंत्रता के साथ कि आवेदक नए सिरे से अवमान आवेदन फाइल कर सकता है । इस परिप्रेक्ष्य में, वर्तमान अर्थात् तृतीय अवमान आवेदन, प्रत्यर्थियों-अवमानकर्ताओं के विरुद्ध फाइल किया गया । न्यायालय द्वारा अवमान रिट आवेदन मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – प्रथम प्रत्यर्थी ने आवेदक के अनुकम्पा आधार पर नियुक्ति करने के लिए आवेदन को वित्त विभाग से प्राप्त सलाह पर शुद्धतः आय मापदंडों पर नामंजूर किया था । आदेश उपाबंध सी-11 में, आवेदक के कुटुम्ब की आय 1,19,034/- रुपए के रूप में उल्लेख किया गया है । आदेश इस बारे में चुप है कि किस आधार पर आवेदक के कुटुम्ब की आय की संगणना 1,19,034/- रुपए के रूप में की गई है । तथापि, इसमें यह वर्णित है कि अनुकम्पा नियोजन मात्र तभी दिया जा सकता है जहां मृतक सेवक के कुटुम्ब की दशा निर्धनावस्था में है और यह कि कुटुम्ब द्वारा कुटुम्ब पेंशन की एवज में प्राप्त फायदे और अन्य सेवानिवृत्त फायदे भी विचार में लिए जाने आवश्यक हैं जबिक आवेदक के कुट्म्ब की आय की संगणना की जाती है जिससे मात्र यही निष्कर्ष निकलता है कि सेवानिवृत्ति फायदों को भी कुटुम्ब की वार्षिक आय की संगणना में सम्मिलित किया गया है, क्योंकि अन्यथा भी प्रत्यर्थियों के लिए आवेदक के कुटुम्ब की आय 1,19,034/- रुपए के रूप में संगणना करने का कोई आधार नहीं था, इन कारणों से कि आवेदक के पिता श्री पियार सिंह की मृत्यु के समय पर सभी स्रोतों से आवेदक के कुटुम्ब की आय 11,500/- रुपए प्रतिवर्ष थी और इसमें पेंशन के माध्यम से प्राप्त रकम सम्मिलित करने पर यह 96.000/- रुपए प्रतिवर्ष हो गई थी । यह क्रमशः, तारीख 3 अक्तूबर, 2006 और तारीख 30 अक्तूबर, 2006 के प्रमाणपत्रों उपाबंध सी-1 और सी-2 के परिशीलन से अभिलेख पर सिद्ध होता है । आदेश उपाबंध सी-11 से यह भी प्रकट होता है कि तरीका, जिसमें प्रत्यर्थी सं. 1 ने आवेदक के आवेदन को नामंजूर कर दिया है, में विस्तृत तौर पर यह वर्णित है कि उक्त प्रत्यर्थी एक अपीली प्राधिकारी के रूप में इस न्यायालय के निर्णय के ऊपर हो गया है और तदद्वारा न केवल प्रश्नगत निर्णय को छिपाया है अपितृ इस न्यायालय की महिमा और गरिमा को भी क्षति पहुंचाई है । यहां यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि एक न्यायालय द्वारा पारित आदेश अविधिमान्य हो सकता है किन्तु वह लम्बित पक्षकारों पर तब तक बाध्यकारी होता है जब तक कि मामले में अधिकारिता रखने वाले सक्षम

न्यायालय द्वारा इसे अभिखंडित नहीं कर दिया जाता है । प्रत्यर्थी-अवमानकर्ता के लिए यह खुला नहीं होता है कि वह गुणागुणों पर किसी नई दलील के आधार पर न्यायालय के आदेश का अनुपालन नहीं करने की अपनी कार्रवाई को न्यायानुमत ठहरा सके । इस प्रक्रम पर, यह सुस्थिर है कि जब तक कि उस बारे में न्यायालय का आदेश जिसका अननुपालन करने की शिकायत की गई है, मामले में अधिकारिता रखने वाले सक्षम न्यायालय द्वारा बिना अधिकारिता के या आरम्भतः शून्य अभिनिर्धारित नहीं कर दिया जाता है, ऐसा आदेश इसकी भाषा और भाव की दृष्टि से इसके पक्षकारों पर आबद्धकारी होता है, यद्यपि ऐसा आदेश अविधिमान्य भी हो सकता है । प्रत्यर्थी-अवमानकर्ता के लिए यह खुला नहीं होता है कि वह शिकायती निर्णय, जो दूषित हो सकता है, के प्रतिकूल कुछ नई दलीलों के आधार पर स्वयं के अवमानपूर्ण आचरण को न्यायानुमत ठहरा सके । यह आश्चर्यजनक नहीं है कि अपित् यह इंगित करना कष्टदायक है कि इस न्यायालय के खंड न्यायपीठ द्वारा 2013 की सी. डब्ल्यू. पी. संख्या 7674 में पारित तारीख 9 दिसम्बर, 2013 के अपने निर्णय में अभिलिखित इन निष्कर्षों के बावजूद कि कुटुम्ब पेंशन स्कीम के अधीन कुटुम्ब द्वारा प्राप्त रकम, उपदान संदाय अधिनियम, 1972 के अधीन उपदान और कर्मचारी भविष्य-निधि और कर्मचारी भविष्य-निधि और प्रकीर्ण उपबंध अधिनियम, 1952 के अधीन संदत्त भविष्य-निधि को अनुकम्पा आधार पर नियुक्ति करने से इनकार करने का आधार नहीं बनाया जा सकता है, प्रथम प्रत्यर्थी ने वित्त विभाग की सलाह पर याची के कुटुम्ब की वार्षिक आय की संगणना करते समय उसकी माता द्वारा प्राप्त पेंशन फायदों को पुनः सम्मिलित कर लिया और उसके आवेदन को नामंजूर कर दिया था । तथ्य यह है कि प्रत्यर्थियों द्वारा उसी आधार पर याची के आवेदन को नामंजूर करने और उनके द्वारा इस प्रकार लिए गए विनिश्चय को रिट आवेदन के उपाबंध-16 द्वारा उसे संसूचित करने को, खंड न्यायपीठ द्वारा आदेश उपाबंध पी-16 को बिना सकारण और संक्षिप्त आदेश अभिनिर्धारित करते हुए, रिट आवेदन मंजूर करते समय अवैध अभिनिर्धारित कर दिया गया था । इस न्यायालय के निर्णय के प्रतिकूल, इसी प्रकार के विनिश्चय को पुनः लेना कुछ और नहीं है अपित् प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा किया गया अवमानपूर्ण आचरण है और प्रत्यर्थी संख्या 2 और 3 ने भी प्रश्नगत निर्णय को कलंकित किया है । (पैरा 13, 14, 15 और 16)

निर्णय स्पष्ट और असंदिग्ध है । इसके सही आशय और अर्थ के

अनुसार, पेंशन से आय या अन्य सेवानिवृत्त फायदों को अनुकम्पा आधार पर नियुक्ति के प्रयोजन के लिए आय की संगणना करते समय सम्मिलित नहीं किया जा सकता है । प्रत्यर्थी सं. 1 ज्येष्ट नौकरशाह और हिमाचल प्रदेश सरकार में प्रधान सचिव (शिक्षा) के रूप में तैनात होने के नाते, जबिक प्रत्यर्थी सं. 2 और 3 उसी सरकार में निदेशक और अवर सचिव, उच्चतर शिक्षा के उच्च पदों पर होने के नाते भी युक्तियुक्त तौर पर यह विश्वास नहीं किया जा सकता है कि उन्होंने निर्णय के सही आशय और अर्थ को समझा है । उन पर यह कर्तव्य भार था कि वे सही भाषा और भाव की दृष्टि से निर्णय को प्रवर्तित करवाते । तथापि, उन्होंने इस तरीके से स्वयं का आचरण किया कि वे विधि के ऊपर प्राधिकारी हैं और निर्णय का असम्मान और अवहेलना की । शिकायती निर्णय, जिसका अतिक्रमण किया गया है, अंतिम हो गया है, क्योंकि इसकी वैधता और विधिमान्यता को किसी उच्चतर न्यायालय या किसी अन्य न्यायालय में और आगे की कार्यवाहियों में भी चुनौती नहीं दी गई है । प्रत्यर्थियों द्वारा पेंशन की रकम को कुटुम्ब की आय में सम्मिलित करने की कार्यवाही को इस न्यायालय द्वारा पहले ही अपास्त और अभिखंडित किया जा चुका है, इन स्पष्ट निष्कर्षों के साथ कि कुटुम्ब पेंशन और अन्य सेवानिवृत्त फायदों से प्राप्त आय को अनुकम्पा आधार पर नियुक्ति के लिए आवेदन पर विचार करने के प्रयोजन के लिए कुटुम्ब की आय की संगणना करते समय सम्मिलित नहीं किया जा सकता है । प्रत्यर्थियों द्वारा याची के कुटुम्ब की आय की संगणना में उसकी माता द्वारा कुटुम्ब पेंशन के माध्यम से प्राप्त रकम को विचार में लेने की कार्रवाई, निर्णय की घोर और जान-बुझकर अवहेलना की कोटि में आता है । प्रश्नगत निर्णय का सही आशय और अर्थ यह है कि अनुकम्पा आधार पर नियुक्ति के लिए याची के आवेदन पर विचार करते समय उसके कृटुम्ब पेंशन और सेवानिवृत्त फायदों, यदि कोई हो, से प्राप्त आय को अपवर्जित करते हुए, सभी स्रोतों से उसके कुटुम्ब की आय को विचार में लिया जाना चाहिए था । कुटुम्ब आय की संगणना में, कुटुम्ब पेंशन से आय को सम्मिलित करने के बारे में, पूनः विस्तृत तौर पर यह वर्णित किया कि ऐसा करना सआशय और जान-बुझकर निर्णय की अवहेलना करना है । प्रत्यर्थियों की ओर से, ऐसे जान-बूझकर कृत्य और आचरण, अवमानना के अपराध के आधारभूत अवयव गठित करते हैं । 2014 की अवमान आवेदन (सिविल) संख्या 121, 283 और 2014 की अवमान आवेदन (सिविल) संख्या 283 में फाइल 2014 की आवेदन सी. एम. पी. संख्या 18778 में पारित आदेशों क्रमशः उपाबंध सी-8. सी-10

और सी-12, जिनके द्वारा प्रत्यर्थियों को शिकायती निर्णय, जिसका अतिक्रमण किया गया है, इस न्यायालय के अनुसरण में ऐसी राय के प्ररूप में अनुपालन रिपोर्ट देने के निर्देश दिए गए । बार-बार इन निर्देशों के बावजूद, प्रत्यर्थी, निर्णय की भाषा और भाव के अनुरूप अनुपालन करने में असफल रहे जिससे मात्र यही निष्कर्ष निकलता है कि इस न्यायालय द्वारा पारित निर्णय/आदेशों की अवहेलना की है । (पैरा 17, 18 और 19)

अवमान (सिविल) अधिकारिता : 2015 की सी. ओ. पी. सी. सं. 308.

न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 की धारा 6 के अधीन आवेदन ।

आवेदक की ओर से

श्री ओंकार जयरथ, अधिवक्ता

प्रत्यर्थियों की ओर से

सर्वश्री श्रवण डोगरा, महाधिवक्ता के साथ अनूप रतन, रोमेश वर्मा, अपर महाधिवक्ता, जे. के. वर्मा और विक्रम ठाकूर, उप-महाधिवक्ता

न्यायमूर्ति धरम चन्द चौधरी — इसमें शिकायत यह है कि प्रत्यर्थियों ने इस न्यायालय के खंड न्यायपीठ द्वारा 2003 की सी. डब्ल्यू. पी. संख्या 7674 में पारित तारीख 9 दिसम्बर, 2013 के निर्णय को बार-बार प्रवर्तित कराने के निर्देश देने के बावजूद उसकी भाषा और भाव की दृष्टि से प्रवर्तित कराने में असफल रहे । वे अभिकथित तौर पर इस न्यायालय द्वारा पारित निर्णय के बारे में थोड़ा भी ध्यान नहीं दिया और तद्द्वारा इस न्यायालय की महिमा और गरिमा को ठेस पहुंचाई गई, अतएव, उन्होंने स्वयमेव ही इस न्यायालय की अवमानना के लिए दंडित होने के लिए दायी बना लिया ।

2. आवेदक के पिता श्री पियार सिंह, हिमाचल प्रदेश के शिक्षा विभाग में पी. ई. टी. के रूप में कार्य कर रहे थे । उनकी मृत्यु वर्ष 2006 में कार्य के दौरान हो गई थी । आवेदक की अर्हता इंटरमीडिएट थी । इसके अतिरिक्त, उसने भौतिक शिक्षा में स्नातक (बी. पी. ई.) की डिग्री ली थी और भौतिक शिक्षा में परा-स्नातक (एम. पी. एड.) की भी शिक्षा ली थी । उसने वर्ष 2006 में स्वयं की शैक्षणिक अर्हता के अनुरूप अनुकम्पा के आधार पर नियुक्ति की ईप्सा करते हुए, एक आवेदन किया । उस पर विचार किया गया और उसे नामंजूर कर दिया गया । उसके आवेदन की नामंजूरी के बारे में संसूचना ओ. एम. संख्या ई. डी. एन. एच.(1)(बी)(4)

241/2004-05-अनुकम्पा नियुक्ति, तारीख 20 अक्तूबर, 2012 (रिट आवेदन उपाबंध पी-15) के जारी होने के उपरान्त, उप-निदेशक, उच्चतर शिक्षा, बिलासपुर ने इस आवेदन के उपाबंध सी-3 के पत्र तारीख 21 नवम्बर, 2012 के द्वारा आवेदक को यह सूचित किया कि उसके कुटुम्ब की आय 63,000/- रुपए प्रतिवर्ष अर्थात् अनुकम्पा आधार पर नियुक्ति करने के लिए स्कीम के अधीन सरकार द्वारा नियत आय मापदंड से परे होने को ध्यान में रखते हुए उसका आवेदन नामंजूर किया गया है।

- 3. आवेदक ने 2013 की सी. डब्ल्यू. पी. संख्या 7674 में उपर्युक्त विनिश्चय को चुनौती दी । इस न्यायालय के खंड न्यायपीठ ने तथ्यों और परिस्थितियों तथा लागू विधि पर भी विचार करने के पश्चात् निम्नलिखित मताभिव्यक्तियों के साथ मंजूर कर लिया :—
 - "8. यदि इन परिस्थितियों में, नामंजूरी के लिए यही एकमात्र आधार है तो हम उपाबंध पी-15 और पी-16 को अभिखंडित और अपास्त करते हैं और यह अभिनिर्धारित करते हैं कि दोनों आदेशों में इस बारे में तथ्य सविस्तार नहीं दिए गए हैं जिससे कि यह अभिनिर्धारित किया जा सके कि आवेदक की आय 63,000/- रुपए प्रतिवर्ष (उपाबंध पी-16) है, वस्तुतः हम उपाबंध पी-16 को विनिश्चय के लिए किसी आधार के प्ररूप में किसी तरीके से सकारण और संक्षिप्त आदेश नहीं पाते हैं । रिट आवेदन मंजूर किया जाता है । प्रत्यर्थियों को यह निर्देश जारी किया जाता है कि वे उस समय पर जब आवेदक के पिता की मृत्यु हुई थी तब प्रवर्तित विधि के अधीन अविभावी पालिसी के अनुसरण में आवेदक के आवेदन पर विचार करें।"
- 4. तथ्य यह है कि कुटुम्ब की वार्षिक आय की संगणना के प्रयोजन के लिए आवेदक की माता द्वारा सेवानिवृत्ति फायदों, जिसमें पेंशन सम्मिलित है, प्राप्त रकम को विचार में लेने की प्रत्यर्थियों की कार्रवाई को इस न्यायालय द्वारा उपर्युक्त निर्णय द्वारा अभिखंडित और अपास्त कर दिया गया, प्रत्यर्थियों को यह निर्देश देते हुए कि वे उस समय पर जब आवेदक के पिता की मृत्यु हुई थी तब अविभावी पालिसी और निर्णय में चर्चा की गई विधि के अनुसरण में आवेदक के आवेदन पर विचार करें।
- 5. जब इस न्यायालय द्वारा पारित निर्णय को प्रवर्तित करने में प्रत्यर्थी असफल रहे, तब आवेदक ने उनके विरुद्ध 2014 की अवमान आवेदन

(सिविल) संख्या 121 फाइल की । इसका निपटारा तारीख 5 मई, 2014 के आदेश उपाबंध सी-8 द्वारा किया गया, जो इस प्रकार है :—

"इस अवमान आवेदन का निपटारा प्रत्यर्थियों को यह निर्देश देते हुए किया जाता है कि वे 2013 की सी. डब्ल्यू. पी. संख्या 7674 में पारित तारीख 9 दिसम्बर, 2013 के न्यायालय निर्देशों का अनुपालन 6 सप्ताह के भीतर करें, यदि इसका अपर रजिस्ट्रार (न्यायिक) के समक्ष पहले ही अनुपालन रिपोर्ट नहीं दिया जा चुका है।

2. रजिस्ट्री को यह निर्देश दिया जाता है कि वह प्रत्यर्थियों को आदेश संसूचित करें और इसकी प्रतिलिपि विद्वान् महाधिवक्ता को प्रदान करें। रिट आवेदन निपटाया जाता है।"

अवमान आवेदन में यथापारित आदेशों के अनुपालन में, तृतीय प्रत्यर्थी ने शपथपत्र फाइल किया जिसमें यह कथन किया है कि प्रशासनिक विभाग ने मामले में विचार करने के लिए वित्त विभाग को भेजा था और वित्त विभाग ने आवेदक के पिता की मृत्यु के समय पर उसके कुटुम्ब की आय 1,19,034/- रुपए प्रतिवर्ष पाई थी । इसलिए, आवेदक को अनुकम्पा आधार पर नियोजित होने का हकदार नहीं पाया गया था । प्रत्यर्थियों द्वारा इस प्रकार लिए गए विनिश्चय के बारे में उसे तारीख 25 मार्च, 2014 के पत्र उपाबंध सी-9 के द्वारा सूचित कर दिया गया था । इस कारण से एक अन्य अवमान आवेदन (सिविल) सं. 283/14 फाइल की गई । इसका निपटारा भी तारीख 13 अगस्त, 2014 के आदेश उपाबंध सी-10 द्वारा कर दिया गया, जो इस प्रकार है:—

"नोटिस जारी — विद्वान् उप-महाधिवक्ता जे. के. वर्मा ने प्रत्यर्थियों की ओर से नोटिस पर आग्रह नहीं किया ।

- (2) इस अवमान आवेदन का निपटारा प्रत्यर्थियों को यह निर्देश देते हुए किया जाता है कि वे 2013 की सी. डब्ल्यू. पी. संख्या 7674 में पारित तारीख 9 दिसम्बर, 2013 के न्यायालय निर्देशों का अनुपालन 6 सप्ताह के भीतर करें, यदि इसका अपर रजिस्ट्रार (न्यायिक) के समक्ष पहले ही अनुपालन रिपोर्ट नहीं दिया जा चुका है।
- (3) रजिस्ट्री को यह निर्देश दिया जाता है कि वह प्रत्यर्थियों को आदेश संसूचित करें और इसकी प्रतिलिपि विद्वान् महाधिवक्ता को प्रदान करें। रिट आवेदन, लम्बित आवेदन के साथ निपटाया जाता है।"

- 6. पूर्वोक्त आदेश के परिणामस्वरूप, प्रथम प्रत्यर्थी ने तारीख 10 नवम्बर, 2014 का आदेश उपाबंध सी-11 पारित किया । उसके परिशीलन से यह प्रकट होता है कि उक्त प्रत्यर्थी ने इस न्यायालय द्वारा 2013 की सी. डब्ल्यू. पी. संख्या 7674 में पारित निर्णय के प्रवर्तित भाग को नोट करने और वित्त विभाग से राय लेने के पश्चात् भी यह निष्कर्ष निकाला कि आवेदक का मामला निर्धनावस्था में नहीं आता है न ही यह वर्ष 2006 में सरकार द्वारा नियत वित्तीय/आय मापदंड को पूरा करता है । इसलिए, आवेदक का अनुकम्पा आधार पर नियुक्ति के लिए दावा नामंजूर कर दिया गया ।
- 7. आदेश उपाबंध सी-11 के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी सं. 1 ने वित्त विभाग की सलाह पर कुटुम्ब की आय में पेंशन की रकम को सम्मिलित किया था जिसे 2013 की सी. डब्ल्यू. पी. संख्या 7674 में पारित निर्णय के अनुसार सम्मिलित नहीं किया जा सकता था।
- 8. आवेदक ने 2014 की अवमान आवेदन (सिविल) संख्या 283 में 2014 की सी. एम. पी. संख्या 18778 फाइल किया, इस निवेदन के साथ कि प्रत्यर्थियों ने बार-बार निर्देश देने के बावजूद इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश का अनुपालन नहीं किया । इस आवेदन में पारित तारीख 1 दिसम्बर, 2014 और तारीख 1 जनवरी, 2015 के आदेशों के अनुसार, प्रत्यर्थियों को इस न्यायालय द्वारा जारी निर्देशों का अनुपालन करने का निर्देश दिया गया था । जो कुछ भी हो, आवेदन को आदेश उपाबंध सी-13 द्वारा खारिज कर दिया गया था, निरसंदेह, इस स्वतंत्रता के साथ कि आवेदक नए सिरे से अवमान आवेदन फाइल कर सकता है।
- 9. इस परिप्रेक्ष्य में, वर्तमान अर्थात् तृतीय अवमान आवेदन, प्रत्यर्थियों-अवमानकर्ताओं के विरुद्ध फाइल किया गया ।
- 10. प्रत्यर्थी सं. 1 को इस आवेदन में पारित तारीख 21 मई, 2015 के आदेश द्वारा 2013 की सी. डब्ल्यू. पी. संख्या 7674 में पारित तारीख 9 दिसम्बर, 2013 के निर्णय में अन्तर्विष्ट निर्देशों का अनुपालन करने का निर्देश दिया गया था और इसका व्यतिक्रम करने पर व्यक्तिगत तौर पर तारीख 18 जून, 2015 को न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने का निर्देश दिया गया था । इस प्रकार, नियत तारीख को न तो अनुपालन रिपोर्ट फाइल की गई और न ही प्रथम प्रत्यर्थी व्यक्तिगत तौर पर इस न्यायालय के समक्ष उपस्थित हुआ ।

- 11. विद्वान् महाधिवक्ता ने अभिलेखों के आधार पर यह इंगित किया कि प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा पारित आदेश उपाबंध सी-11, तथाकथित निर्णय का अतिक्रमण करता है जिसका अनुपालन किया जाना चाहिए ।
- 12. हमने, अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्रियों के प्रकाश में मामले पर विचार किया और दोनों पक्षकारों द्वारा प्रेषित तर्कों को सुना ।
- 13. प्रथम प्रत्यर्थी ने आवेदक के अनुकम्पा आधार पर नियुक्ति करने के लिए आवेदन को वित्त विभाग से प्राप्त सलाह पर श्द्धतः आय मापदंडों पर नामंजूर किया था । आदेश उपाबंध सी-11 में, आवेदक के कुटुम्ब की आय 1,19,034/- रुपए के रूप में उल्लेख किया गया है। आदेश इस बारे में चुप है कि किस आधार पर आवेदक के कुटुम्ब की आय की संगणना 1,19,034/- रुपए के रूप में की गई है । तथापि, इसमें यह वर्णित है कि अनुकम्पा नियोजन मात्र तभी दिया जा सकता है जहां मृतक सेवक के कुट्म्ब की दशा निर्धनावस्था में है और यह कि कुट्म्ब द्वारा कुट्म्ब पेंशन की एवज में प्राप्त फायदे और अन्य सेवानिवृत्त फायदे भी विचार में लिए जाने आवश्यक हैं जबकि आवेदक के कुट्म्ब की आय की संगणना की जाती है जिससे मात्र यही निष्कर्ष निकलता है कि सेवानिवृत्ति फायदों को भी कुटुम्ब की वार्षिक आय की संगणना में सम्मिलित किया गया है, क्योंकि अन्यथा भी प्रत्यर्थियों के लिए आवेदक के कुटुम्ब की आय 1,19,034/- रुपए के रूप में संगणना करने का कोई आधार नहीं था, इन कारणों से कि आवेदक के पिता श्री पियार सिंह की मृत्यु के समय पर सभी स्रोतों से आवेदक के कुटुम्ब की आय 11,500/- रुपए प्रतिवर्ष थी और इसमें पेंशन के माध्यम से प्राप्त रकम सम्मिलित करने पर यह 96,000/- रुपए प्रतिवर्ष हो गई थी । यह क्रमशः, तारीख 3 अक्तूबर, 2006 और तारीख 30 अक्तूबर, 2006 के प्रमाणपत्रों उपाबंध सी-1 और सी-2 के परिशीलन से अभिलेख पर सिद्ध होता है।
- 14. आदेश उपाबंध सी-11 से यह भी प्रकट होता है कि तरीका, जिसमें प्रत्यर्थी सं. 1 ने आवेदक के आवेदन को नामंजूर कर दिया है, में विस्तृत तौर पर यह वर्णित है कि उक्त प्रत्यर्थी एक अपीली प्राधिकारी के रूप में इस न्यायालय के निर्णय के ऊपर हो गया है और तद्द्वारा न केवल प्रश्नगत निर्णय को छिपाया है अपितु इस न्यायालय की महिमा और गरिमा को भी क्षति पहुंचाई है । यहां यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि एक

न्यायालय द्वारा पारित आदेश अविधिमान्य हो सकता है किन्तु वह लम्बित पक्षकारों पर तब तक बाध्यकारी होता है जब तक कि मामले में अधिकारिता रखने वाले सक्षम न्यायालय द्वारा इसे अभिखंडित नहीं कर दिया जाता है । प्रत्यर्थी-अवमानकर्ता के लिए यह खुला नहीं होता है कि वह गुणागुणों पर किसी नई दलील के आधार पर न्यायालय के आदेश का अनुपालन नहीं करने की अपनी कार्रवाई को न्यायानुमत ठहरा सके । इस प्रक्रम पर, यह सुस्थिर है कि जब तक कि उस बारे में न्यायालय का आदेश जिसका अननुपालन करने की शिकायत की गई है, मामले में अधिकारिता रखने वाले सक्षम न्यायालय द्वारा बिना अधिकारिता के या आरम्भतः शून्य अभिनिर्धारित नहीं कर दिया जाता है, ऐसा आदेश इसकी भाषा और भाव की दृष्टि से इसके पक्षकारों पर आबद्धकारी होता है, यद्यपि ऐसा आदेश अविधिमान्य भी हो सकता है । प्रत्यर्थी-अवमानकर्ता के लिए यह खुला नहीं होता है कि वह शिकायती निर्णय, जो दूषित हो सकता है, के प्रतिकूल कुछ नई दलीलों के आधार पर स्वयं के अवमानपूर्ण आचरण को न्यायानुमत ठहरा सके ।

15. यह आश्चर्यजनक नहीं है कि यह इंगित करना कष्टदायक है कि इस न्यायालय के खंड न्यायपीठ द्वारा 2013 की सी. डब्ल्यू. पी. संख्या 7674 में पारित तारीख 9 दिसम्बर, 2013 के अपने निर्णय में अभिलिखित इन निष्कर्षों के बावजूद कि कुटुम्ब पेंशन स्कीम के अधीन कुटुम्ब द्वारा प्राप्त रकम, उपदान संदाय अधिनियम, 1972 के अधीन उपदान और कर्मचारी भविष्य-निधि और कर्मचारी भविष्य-निधि और प्रकीर्ण उपबंध अधिनियम, 1952 के अधीन संदत्त भविष्य-निधि को अनुकम्पा आधार पर नियुक्ति करने से इनकार करने का आधार नहीं बनाया जा सकता है, प्रथम प्रत्यर्थी ने वित्त विभाग की सलाह पर याची के कुट्म्ब की वार्षिक आय की संगणना करते समय उसकी माता द्वारा प्राप्त पेंशन फायदों को पुनः सम्मिलित कर लिया और उसके आवेदन को नामंजूर कर दिया था । तथ्य यह है कि प्रत्यर्थियों द्वारा उसी आधार पर याची के आवेदन को नामंजुर करने और उनके द्वारा इस प्रकार लिए गए विनिश्चय को रिट आवेदन के उपाबंध-16 द्वारा उसे संसूचित करने को, खंड न्यायपीठ द्वारा आदेश उपाबंध पी-16 को बिना सकारण और संक्षिप्त आदेश अभिनिर्धारित करते हुए, रिट आवेदन मंजूर करते समय अवैध अभिनिर्धारित कर दिया गया था ।

- 16. इस न्यायालय के निर्णय के प्रतिकूल, इसी प्रकार के विनिश्चय को पुनः लेना कुछ और नहीं है अपितु प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा किया गया अवमानपूर्ण आचरण है और प्रत्यर्थी संख्या 2 और 3 ने भी प्रश्नगत निर्णय को कलंकित किया है।
- 17. निर्णय स्पष्ट और असंदिग्ध है । इसके सही आशय और अर्थ के अनुसार, पेंशन से आय या अन्य सेवानिवृत्त फायदों को अनुकम्पा आधार पर नियुक्ति के प्रयोजन के लिए आय की संगणना करते समय सम्मिलित नहीं किया जा सकता है । प्रत्यर्थी सं. 1 ज्येष्ठ नौकरशाह और हिमाचल प्रदेश सरकार में प्रधान सचिव (शिक्षा) के रूप में तैनात होने के नाते, जबिक प्रत्यर्थी सं. 2 और 3 उसी सरकार में निदेशक और अवर सचिव, उच्चतर शिक्षा के उच्च पदों पर होने के नाते भी युक्तियुक्त तौर पर यह विश्वास नहीं किया जा सकता है कि उन्होंने निर्णय के सही आशय और अर्थ को समझा है । उन पर यह कर्तव्य भार था कि वे सही भाषा और भाव की दृष्टि से निर्णय को प्रवर्तित करवाते । तथापि, उन्होंने इस तरीके से स्वयं का आचरण किया कि वे विधि के ऊपर प्राधिकारी हैं और निर्णय का असम्मान और अवहेलना की ।
- 18. शिकायती निर्णय, जिसका अतिक्रमण किया गया है, अंतिम हो गया है, क्योंकि इसकी वैधता और विधिमान्यता को किसी उच्चतर न्यायालय या किसी अन्य न्यायालय में और आगे की कार्यवाहियों में भी चुनौती नहीं दी गई है । प्रत्यर्थियों द्वारा पेंशन की रकम को कुटुम्ब की आय में सिम्मिलित करने की कार्यवाही को इस न्यायालय द्वारा पहले ही अपास्त और अभिखंडित किया जा चुका है, इन स्पष्ट निष्कर्षों के साथ कि कुटुम्ब पेंशन और अन्य सेवानिवृत्त फायदों से प्राप्त आय को अनुकम्पा आधार पर नियुक्ति के लिए आवेदन पर विचार करने के प्रयोजन के लिए कुटुम्ब की आय की संगणना करते समय सिम्मिलित नहीं किया जा सकता है । प्रत्यर्थियों द्वारा याची के कुटुम्ब की आय की संगणना में उसकी माता द्वारा कुटुम्ब पेंशन के माध्यम से प्राप्त रकम को विचार में लेने की कार्रवाई, निर्णय की घोर और जान-बूझकर अवहेलना की कोटि में आता है । प्रश्नगत निर्णय का सही आशय और अर्थ यह है कि अनुकम्पा आधार पर नियुक्ति के लिए याची के आवेदन पर विचार करते समय उसके कुटुम्ब पेंशन के लिए याची के आवेदन पर विचार करते समय उसके कुटुम्ब पेंशन और सेवानिवृत्त फायदों, यदि कोई हों, से प्राप्त आय को अपवर्जित

करते हुए, सभी स्रोत्रों से उसके कुटुम्ब की आय को विचार में लिया जाना चाहिए था । कुटुम्ब आय की संगणना में, कुटुम्ब पेंशन से आय को सम्मिलित करने के बारे में, पुनः विस्तृत तौर पर यह वर्णित किया कि ऐसा करना सआशय और जान-बूझकर निर्णय की अवहेलना करना है ।

19. प्रत्यर्थियों की ओर से, ऐसे जान-बूझकर कृत्य और आचरण, अवमानना के अपराध के आधारभूत अवयव गठित करते हैं । 2014 की अवमान आवेदन (सिविल) संख्या 121, 283 और 2014 की अवमान आवेदन (सिविल) संख्या 283 में फाइल 2014 की आवेदन सी. एम. पी. संख्या 18778 में पारित आदेशों क्रमशः उपाबंध सी-8, सी-10 और सी-12, जिनके द्वारा प्रत्यर्थियों को शिकायती निर्णय, जिसका अतिक्रमण किया गया है, इस न्यायालय के अनुसरण में ऐसी राय के प्ररूप में अनुपालन रिपोर्ट देने के निर्देश दिए गए । बार-बार इन निर्देशों के बावजूद, प्रत्यर्थी, निर्णय की भाषा और भाव के अनुरूप अनुपालन करने में असफल रहे जिससे मात्र यही निष्कर्ष निकलता है कि उन्होंने इस न्यायालय द्वारा पारित निर्णय/आदेशों की अवहेलना की है ।

20. इसलिए, हमारी राय में, प्रत्यर्थियों ने अवमानना की है क्योंकि उन्होंने इस न्यायालय के निर्णय का सआशय और जान-बूझकर अतिक्रमण किया । इसलिए, हम, न्यायालय अवमान (हिमाचल प्रदेश) नियम, 1996 के प्ररूप सं. 1 के निबंधनों में प्रत्यर्थियों को तारीख 9 जुलाई, 2015 को व्यक्तिगत रूप में उपस्थित होने का नोटिस जारी करने का आदेश दिया जाता है और यह कारण बताओ नोटिस जारी किया जाता है कि उन्हें क्यों नहीं, इस अवमानना के लिए दंडित किया जाए ।

अवमान रिट आवेदन मंजूर किया गया ।

क.

रीमा (श्रीमती)

बनाम

श्री भूपेन्दर सिंह

तारीख 17 जुलाई, 2015 न्यायमूर्ति राजीव शर्मा

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) — धारा 13(1)(i-क), 13(1)(i-ख) और 28 — क्रूरता, अभित्यजन — आशय — विवाह-विच्छेद — यदि अभिलेख पर यह साबित कर दिया जाता है कि पति-पत्नी में से किसी एक का आचरण इतना क्रूर है कि दूसरे का उसके साथ रहना असम्भाव्य हो जाता है तभी पीड़ित पक्षकार को विवाह-विच्छेद की डिक्री मंजूर की जा सकती है अन्यथा नहीं।

वर्तमान मामले में, पक्षकारों के बीच हिन्दू रीति-रिवाजों के साथ प्रत्यर्थी के मूल गांव में तारीख 12 मार्च, 2009 को विवाह हुआ था । पक्षकार कुछ दिनों के लिए प्रत्यर्थी के मूल गांव में रुके थे और इसके पश्चात् दिल्ली चले गए, जहां प्रत्यर्थी का पिता आबंटित सरकारी आवास में रहता था । प्रत्यर्थी का बड़ा भाई भी वहां अपने कुटुम्ब के साथ रहता था । प्रत्यर्थी ने क्रूरता और अभित्यजन के आधारों पर विवाह-विच्छेद की डिक्री की ईप्सा करते हुए, हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13 के अधीन एक अर्जी प्रस्तुत की । अर्जी में किए गए प्रकथनों के अनुसार, अपीलार्थी (प्रत्यर्थी) उसके और उसके क्ट्रम्ब सदस्यों के साथ सम्चित व्यवहार नहीं करती थी । वह उसके साथ छोटी-छोटी बातों पर झगड़ा करती थी । प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी को पृथक आवास की व्यवस्था करने में अपनी वित्तीय असमर्थता दर्शित कर दी क्योंकि वह मात्र 4,500/- रुपए प्रतिमाह कमाता था । तारीख 18 अप्रैल, 2010 को उसकी माता ने उसे टेलीफोन किया । इस पर, अपीलार्थी अत्यधिक क्रोधित हो गई और उसका मोबाइल कमरे के बाहर फेंक दिया । उसने आत्महत्या करने की धमकी दी, यदि उसने अपने माता-पिता से बात करना बन्द नहीं किया । उसने स्वयं को आग लगाने की धमकी दी और यह दावा किया कि वह आत्महत्या कर लेगी और उसे तथा उसके कुटुम्ब सदस्यों को मिथ्या मामले में फंसा देगी । तारीख 19 अप्रैल, 2010 को उसने अपीलार्थी को उसके माता-पिता के घर छोड़ दिया । अपीलार्थी ने तारीख 19 अक्तूबर, 2010 को उसके और उसके

कुटुम्ब सदस्यों के विरुद्ध मिथ्या परिवाद दर्ज कराया । उसने अपीलार्थी के दुर्व्यवहार को माफ नहीं किया है । अर्जी का अपीलार्थी द्वारा विरोध किया गया । उसके अनुसार, प्रत्यर्थी और प्रत्यर्थी के कुटुम्ब सदस्य उसे अपने पिता से धन लाने के लिए उस पर दबाव बनाना आरम्भ कर दिया था ताकि प्रत्यर्थी दिल्ली में एक फ्लैट क्रय कर सके । प्रत्यर्थी के कुटुम्ब यह जानते थे कि अपीलार्थी के पिता के पास सड़क से सटे कुनीहार पर भूमि का एक मूल्यवान भूखंड है । उसने प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्यों के साथ कभी दुर्व्यवहार नहीं किया । तारीख 18 अप्रैल, 2010 को प्रत्यर्थी अपने माता-पिता के साथ और अपने अन्य कुटुम्ब सदस्यों के साथ दुरभिसंधि करके उसे आग लगाने की कोशिश की । प्रत्यर्थी ने तारीख 19 अप्रैल, 2010 को अपने माता-पिता के साथ उसका घर छोड़ दिया । उसके माता-पिता ने घरेलू वस्तुएं, जेवरात, जिसके मूल्य 2,24,000/- रुपए थे, जिसमें सोने की चैन और अंगूठी सम्मिलित थी, प्रत्यर्थी को दिया था । मामले में समझौता करने के लिए तारीख 23 मई, 2010 और तारीख 5 अगस्त, 2010 को बैठकें की गई थीं । रेस्ट हाउस, अर्की में भी तारीख 10 अक्तूबर, 2010 को बैठक हुई थी । तथापि, प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्यों ने उसे वैवाहिक गृह ले जाने के लिए सीधे तौर पर इनकार कर दिया । प्रत्यर्थी द्वारा एक प्रत्युत्तर फाइल किया गया । तारीख 28 सितम्बर, 2011 को विद्वान अपर जिला न्यायाधीश-II, सोलन, हिमाचल प्रदेश द्वारा विवाद्यक विरचित किए गए । तारीख 23 अगस्त, 2014 को अर्जी मंजूर कर ली गई थी । अतएव, यह अपील फाइल की गई । न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित — यह प्रकट होता है कि पक्षकारों के बीच विवाह तारीख 12 मार्च, 2009 को हिन्दू रीति-रिवाजों के अनुसार हुआ था । अभि. सा. 2 श्री भूपेन्द्र ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि तारीख 18 अप्रैल, 2010 को जब वह अपनी माता से एक टेलीफोन काल प्राप्त किया तभी अपीलार्थी क्रोधित हो गई और उसने स्वयं पर मिट्टी का तेल छिड़ककर आग लगाने की कोशिश की । उसने आग बुझाने की कोशिश की । वह अपीलार्थी को उसके माता-पिता के घर ले गया । क्योंकि अपीलार्थी ने मिट्टी का तेल छिड़ककर स्वयं को आग लगाकर आत्महत्या करने की कोशिश की थी इसलिए यह एक गंभीर घटना थी । मामले की रिपोर्ट पुलिस थाने में की जानी चाहिए थी । यह सिद्ध करने के लिए अभिलेख पर ऐसा कोई विश्वसनीय साक्ष्य नहीं है कि प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्यों ने अभिकथित घटना के बारे में पुलिस में शिकायत दर्ज कराई थी । उसने यह

भी परिसाक्ष्य दिया कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट, उसके और उसके कुटुम्ब सदस्यों के विरुद्ध रजिस्ट्रीकृत की गई थी और उन्होंने जमानत ले ली थी। घरेल हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 के अधीन उनके विरुद्ध एक और मामला भी लम्बित है । उसने स्रपष्टतः यह परिसाक्ष्य दिया कि यद्यपि अपीलार्थी उनके साथ जाने को तैयार और रजामंद थी फिर भी वह उसे अपने साथ दिल्ली नहीं ले गया । इसी प्रकार, प्रत्यर्थी की माता ने स्पष्टतः यह अभिसाक्ष्य दिया कि यद्यपि अपीलार्थी उनके साथ दिल्ली जाने के लिए तैयार और रजामंद थी फिर भी, वह उसे दिल्ली नहीं ले गई । इस प्रकार, यह साबित होता है कि अपीलार्थी अपने पति और सास के साथ जाने के लिए हमेशा ही तैयार और रजामंद थी किन्तू, वे उसे वापस दिल्ली ले जाने के लिए तैयार और रजामंद नहीं थे । अभि. सा. 4 अजीत सिंह ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि उसे उसकी पूत्री ने बताया था कि अपीलार्थी को आग लगाने की कोशिश की गई है । तथापि, अपनी प्रतिपरीक्षा में, उसने यह स्वीकार किया कि यह जयसिंह ही था जिसने उसे पंचायत के दौरान घटना के बारे में बताया था । न तो प्रत्यर्थी न ही उसके पिता ने अपने शपथपत्रों में यह कथन किया है कि अभि. सा. 4 अजीत सिंह को आग की घटना के बारे में सूचित किया गया था । प्रतिवादी साक्षी 1, राजिन्दर ठाकुर, प्रतिवादी साक्षी 3 दलवीर सिंह और प्रतिवादी साक्षी 4 राजकुमार ने सुरपष्टतः यह कथन किया है कि प्रत्यर्थी और उसके कृटुम्ब सदस्य प्रतिवादी साक्षी 2 श्रीमती रीमा को और अधिक धन लाने के लिए और उस पर कुनीहार में सड़क से सटे भूमि में अपने हिस्से की भूमि का दावा करने के लिए भी दबाव डाला करते थे । प्रतिवादी साक्षी 2 श्रीमती रीमा ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि उसने अपने पिता से 10,000/- रुपए प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्यों को संदाय करने के लिए कहा था । उसके माता-पिता ने उसके विवाह पर 2,24,000/- रुपए खर्च किए थे । अभि. सा. 2 श्री भूपेन्दर, अभि. सा. 5 निर्मला ने यह कथन किया है कि तारीख 18 अप्रैल, 2010 को अपीलार्थी ने मिट्टी का तेल छिड़ककर स्वयं को आग लगाने की कोशिश की थी । घटना की उत्पत्ति इस प्रकार हुई है कि अभि. सा. 2 श्री भूपेन्दर ने अभि. सा. 5 निर्मला से एक टेलीफोन काल प्राप्त की और उसके पश्चात अपीलार्थी क्रोधित हो गई और मिट्टी का तेल छिड़ककर स्वयं को आग लगाने की कोशिश की । इस बारे में, विश्वास नहीं किया जा सकता है कि मात्र प्रत्यर्थी द्वारा अपनी माता से टेलीफोन काल प्राप्त होने पर अपीलार्थी क्रोधित हो गई और स्वयं पर मिटटी का तेल छिडककर अपने जीवन को समाप्त करने की कोशिश की । प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्यों का आचरण भी पराया जैसा था । उसे उपचार के लिए अस्पताल ले जाया जाना चाहिए था । प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्यों द्वारा ही प्रतिकूल परिस्थितियां सृजित की गईं थीं जिनके कारण ही तारीख 18 अप्रैल, 2010 की आग वाली घटना घटित हुई । कोई भी संवेदनशील व्यक्ति छोटे-मोटे मामलों पर अपने जीवन का अंत करने के लिए कभी आत्महत्या नहीं करेगा चाहे वह संवेदनशील हो या नहीं । मानवीय आचरण अपने जीवन को सुरक्षित रखने का होता है न कि उसे नष्ट करने का । प्रत्यर्थी को छोटे-मोटे आधारों पर विवाह-विच्छेद लेने के लिए गलत लाभ की अनुज्ञा नहीं दी जा सकती है । प्रत्यर्थी को अनन्य तौर पर यह साबित करने की अपेक्षा होती है कि अपीलार्थी के कृत्यों से उसे मानसिक और शारीरिक क्रूरता कारित हुई है । उसके द्वारा वर्णित आधार स्वाभाविक तौर पर सूक्ष्म हैं और वैवाहिक जीवन में घटित होते रहते हैं । (पैरा 16, 17 और 18)

प्रत्यर्थी के विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री जी. डी. वर्मा ने यह जोरदार तर्क दिया है कि अपीलार्थी ने उसके मुवक्किल और उसके कृटुम्ब सदस्यों के विरुद्ध तारीख 10 नवम्बर, 2010 को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 116/2010 की गलत शिकायत दर्ज कराई है । न्यायालय ने यह पहले ही नोटिस किया है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्य्. 1/ए की प्रति को अभि. सा. 1 एल. सी. पुष्पा द्वारा साबित किया जा चुका है । यह सत्य है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने में विलम्ब हुआ है, जिसमें अपीलार्थी को आग लगाने की घटना का भी उल्लेख किया गया है। किन्तु, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट का सम्पूर्णतः परिशीलन किया जाना चाहिए । न्यायालय इस तथ्य का न्यायिक नोटिस ले सकता है कि भारतीय समाज में, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने के लिए पुलिस थाने जाना अंतिम विकल्प होता है । साधारणतया, पक्षकारों की प्रवृत्ति पुलिस थाने जाने से बचने की होती है । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में यह भी उल्लिखित है कि प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्य अपीलार्थी से दहेज की मांग किया करते थे और उसे तंग करते थे और उसे पीटते रहते थे । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को मिथ्या नहीं कहा सकता है । प्रत्यर्थी के विद्वान ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री जी. डी. वर्मा ने यह भी तर्क दिया कि प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्यों के विरुद्ध घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 के अधीन एक मामला फाइल किया गया था । अपीलार्थी को अधिनियम के अधीन उपबंधित विधिक उपचारों का अवलंब लेने का स्वतंत्र अधिकार है । घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 के अधीन मात्र प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने

और मामला संस्थित करने से ही यह स्वतः क्रूरता की कोटि में नहीं आ जाता है। मामले के संपूर्ण तथ्यों और परिस्थितियों में, घरेलू हिंसा से महिला संस्क्षण अधिनियम, 2005 के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने और याचिका संस्थित करने से यह निष्कर्ष निकलता है कि यह मानसिक और शारीरिक क्रूरता की कोटि में आता है। विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री जी. डी. वर्मा ने यह भी तर्क दिया कि अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी को अभित्यक्त किया है। तथापि, मामले के तथ्य यह हैं कि प्रत्यर्थी ने स्वयमेव ही ऐसी परिस्थितियां सृजित कीं जिससे अपीलार्थी तारीख 18 अप्रैल, 2010 की घटना के पश्चात् अपने माता-पिता के साथ रहने के लिए बाध्य हो गई। अभित्यजन को साबित करने के अनुक्रम में, पक्षकारों को अनन्य तौर पर अभित्यजन का आशय साबित करना होता है। वर्तमान मामले में, स्वयं प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी को उसके माता-पिता के पास छोड़ा था और उसे दिल्ली वापस लाने से इनकार कर दिया था। इस प्रकार, वह अभित्यजन को साबित करने में असफल रहा है। (पैरा 19, 20, 21, 22 और 31)

निर्दिष्ट निर्णय

			पैरा
[2014]	(2014) 7 एस. सी. सी. 640 : मालती रवि, एम. डी. बनाम एम. वी. रवि, एम. डी. ;		31
[2013]	(2013) 5 एस. सी. सी. 226 : के. श्रीनिवास राव बनाम डी. ए. दीपा ;		30
[2011]	ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 114 : गुरुबक्श सिंह बनाम हरमिन्दर कौर ;		29
[2010]	(2010) 4 एस. सी. सी. 339 : मनीषा त्यागी बनाम दीपक कुमार ;		26
[2010]	(2010) 4 एस. सी. सी. 476 : रवि कुमार बनाम जुल्मी देवी ;		27
[2010]	(2010) 13 एस. सी. सी. 298 : नीलम कुमार बनाम दया रानी ;		28
[2008]	[2008] 3 उम. नि. प. 23 = (2007) 4 एस. सी. सी. 511 :		
	समर घोष बनाम जया घोष ;	5,	30

[2005] 2005 (2) शिमला एल. सी. 399 : श्रीमती सुरेश शर्मा बनाम डा. सुखदेव शर्मा ; 24

[1988] ए. आई. आर. 1988 एस. सी. 121 : शोभा रानी बनाम मधुकर रेड्डी । 23

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2014 की एफ. ए. ओ. (हिन्दू विवाह अधिनियम) सं. 362.

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 28 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री रमा कान्त शर्मा, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री जी. डी. वर्मा, ज्येष्ट

अधिवक्ता के साथ वी. सी. वर्मा,
अधिवक्ता

न्यायमूर्ति राजीव शर्मा – यह एफ. ए. ओ. (हि. वि. अ.), विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश-II, सोलन, हि. प्र. द्वारा 2013/2010 की अर्जी संख्या 3-ए के/3 में पारित तारीख 23 अगस्त, 2014 के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध संस्थित की गई है।

2. इस अपील का न्यायनिर्णयन करने के लिए आवश्यक मुख्य तथ्य यह हैं कि पक्षकारों के बीच हिन्दू रीति-रिवाजों के साथ प्रत्यर्थी के मूल गांव में तारीख 12 मार्च, 2009 को विवाह हुआ था । पक्षकार कुछ दिनों के लिए प्रत्यर्थी के मूल गांव में रुके थे और इसके पश्चात् दिल्ली चले गए, जहां प्रत्यर्थी का पिता आबंटित सरकारी आवास में रहता था । प्रत्यर्थी का बड़ा भाई भी वहां अपने कुटुम्ब के साथ रहता था । प्रत्यर्थी ने क्रूरता और अभित्यजन के आधारों पर विवाह-विच्छेद की डिक्री की ईप्सा करते हुए, हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13 के अधीन एक अर्जी प्रस्तुत की । अर्जी में किए गए प्रकथनों के अनुसार, अपीलार्थी (प्रत्यर्थी) उसके और उसके कुटुम्ब सदस्यों के साथ समुचित व्यवहार नहीं करती थी । वह उसके साथ छोटी-छोटी बातों पर झगड़ा करती थी । प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी को पृथक् आवास की व्यवस्था करने में अपनी वित्तीय असमर्थता दर्शित कर दी क्योंकि वह मात्र 4,500/- रुपए प्रतिमाह कमाता था । तारीख 18 अप्रैल, 2010 को उसकी माता ने उसे टेलीफोन किया । इस पर, अपीलार्थी अत्यिधक क्रोधित हो गई और उसका मोबाइल कमरे के

बाहर फेंक दिया । उसने आत्महत्या करने की धमकी दी, यदि उसने अपने माता-पिता से बात करना बन्द नहीं किया । उसने स्वयं को आग लगाने की धमकी दी और यह दावा किया कि वह आत्महत्या कर लेगी और उसे तथा उसके कुटुम्ब सदस्यों को मिथ्या मामले में फंसा देगी । तारीख 19 अप्रैल, 2010 को उसने अपीलार्थी को उसके माता-पिता के घर छोड़ दिया । अपीलार्थी ने तारीख 19 अक्तूबर, 2010 को उसके और उसके कुटुम्ब सदस्यों के विरुद्ध मिथ्या परिवाद दर्ज कराया । उसने अपीलार्थी के दुर्व्यवहार को माफ नहीं किया है ।

- 3. अर्जी का अपीलार्थी द्वारा विरोध किया गया । उसके अनुसार, प्रत्यर्थी और प्रत्यर्थी के कुटुम्ब सदस्य उसे अपने पिता से धन लाने के लिए उस पर दबाव बनाना आरम्भ कर दिया था ताकि प्रत्यर्थी दिल्ली में एक फ्लैट क्रय कर सके । प्रत्यर्थी के कुटुम्ब यह जानते थे कि अपीलार्थी के पिता के पास सड़क से सटे कुनीहार पर भूमि का एक मूल्यवान भूखंड है। उसने प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्यों के साथ कभी दुर्व्यवहार नहीं किया । तारीख 18 अप्रैल, 2010 को प्रत्यर्थी अपने माता-पिता के साथ और अपने अन्य कुटुम्ब सदस्यों के साथ दूरभिसंधि करके उसे आग लगाने की कोशिश की । प्रत्यर्थी ने तारीख 19 अप्रैल, 2010 को अपने माता-पिता के साथ उसका घर छोड़ दिया । उसके माता-पिता ने घरेलू वस्तुएं, जेवरात, जिसके मूल्य 2,24,000/- रुपए थे, जिसमें सोने की चैन और अंगुठी सम्मिलित थी, प्रत्यर्थी को दिया था । मामले में समझौता करने के लिए तारीख 23 मई, 2010 और तारीख 5 अगस्त, 2010 को बैठकें की गई थीं । रेस्ट हाउस, अर्की में भी तारीख 10 अक्तूबर, 2010 को बैठक हुई थी । तथापि, प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्यों ने उसे वैवाहिक गृह ले जाने के लिए सीधे तौर पर इनकार कर दिया । प्रत्यर्थी द्वारा एक प्रत्युत्तर फाइल किया गया । तारीख 28 सितम्बर, 2011 को विद्वान अपर जिला न्यायाधीश-II, सोलन, हिमाचल प्रदेश द्वारा विवाद्यक विरचित किए गए । तारीख 23 अगस्त, 2014 को अर्जी मंजूर कर ली गई थी । अतएव, यह अपील फाइल की गई ।
- 4. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल श्री रमा कांत शर्मा ने यह जोरदार तर्क दिया कि प्रत्यर्थी, क्रूरता और अभित्यजन को साबित करने में असफल रहा है।
- 5. विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री जी. डी. वर्मा ने तारीख 23 अगस्त, 2014 के निर्णय का समर्थन किया है ।

- 6. मैंने, पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुना और निर्णय तथा अभिलेखों का ध्यानपूर्वक परिशीलन किया ।
- 7. अभि. सा. 1 एल. सी. पुष्पा देवी ने भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 34 के साथ पिठत धारा 498-ए और 506 के अधीन रिजस्ट्रीकृत तारीख 10 नवम्बर, 2010 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 116/10 को साबित किया । प्रत्यर्थी अभि. सा. २ के रूप में उपस्थित हुआ । उसने एक शपथपत्र के माध्यम से अपना साक्ष्य प्रस्तुत किया । उसके अनुसार, वह 4,500/- रुपए प्रतिमाह अर्जित करता है । उसने तारीख 18 अप्रैल, 2010 को एक टेलीफोन काल प्राप्त किया । अपीलार्थी इस काल से क्रोधित हो गई । उसने अपने ऊपर मिटटी का तेल छिड़क लिया और स्वयं को आग लगा ली । उसने आग बुझाई । अपीलार्थी उससे गाली-गलौच करती थी । वह अपीलार्थी के घर तारीख 20 अप्रैल, 2010 को गया था । उसने उसके माता-पिता को घटना के बारे में बताया था । अक्तूबर, 2010 के माह में उसके कुटुम्ब के सदस्य मामले में समझौता कराने के लिए अपीलार्थी के कुटुम्ब के घर गए थे । तथापि, मामले में समझौता नहीं हो सका था । उसके और उसके कुटुम्ब सदस्यों के विरुद्ध एक मिथ्या मामला पुलिस थाना, अर्की में रजिस्ट्रीकृत किया गया था । अपीलार्थी ने घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 के अधीन भी एक शिकायत फाइल की थी । अपनी प्रतिपरीक्षा में, उसने सुस्पष्टतः यह कथन किया है कि यद्यपि अपीलार्थी उसके साथ दिल्ली जाने के लिए तैयार और रजामंद थी किन्तू, वह उसे अपने साथ नहीं ले गया ।
- 8. अभि. सा. 3, धरम सिंह चौहान ने भी एक शपथपत्र के माध्यम से अपना साक्ष्य प्रस्तुत किया । उसने यह परिसाक्ष्य दिया कि अक्तूबर, 2010 के माह में उसने पंचायत की कार्यवाहियों में भाग लिया । जय सिंह ने लड़की के माता-पिता को यह बताया था कि उनकी पुत्री ने स्वयं पर मिट्टी का तेल छिड़क कर आत्महत्या करने की कोशिश की है और वह कुटुम्ब सदस्यों के साथ झगड़ा करती रहती है ।
- 9. अभि. सा. 4, अजीत सिंह रोहल ने भी एक शपथपत्र के माध्यम से अपना साक्ष्य प्रस्तुत किया । उसने अपनी पुत्री का विवाह श्री जय सिंह के बड़े पुत्र के साथ किया था । उसकी पुत्री ने उसे बताया है कि अपीलार्थी, प्रत्यर्थी के कुटुम्ब सदस्यों को धमकाया करती थी और उन्हें यह भी धमकी देती थी कि वह आत्महत्या कर लेगी और प्रत्यर्थी के कुटुम्ब सदस्यों को फंसा देगी । उसने स्वयं पर मिट्टी का तेल छिड़क कर

आत्महत्या करने की कोशिश की थी । तथापि, अपनी प्रतिपरीक्षा में, उसने यह स्वीकार किया कि मिट्टी का तेल छिड़कने से संबंधित घटना के बारे में, उसे श्री जय सिंह ने बताया था ।

- 10. अभि. सा. 5 निर्मला, प्रत्यर्थी की माता है । उसने भी एक शपथपत्र के माध्यम से अपना साक्ष्य प्रस्तुत किया । अपीलार्थी झगड़ा किया करती थी और यह दावा किया कि वह संयुक्त कुटुम्ब में नहीं रहती थी । प्रत्यर्थी ने तारीख 18 अप्रैल, 2010 को एक टेलीफोन काल प्राप्त की । अपीलार्थी ने स्वयं पर मिट्टी का तेल छिड़क कर आत्महत्या करने की कोशिश की थी । उसे सूक्ष्म क्षतियां कारित हुईं थीं । अपनी प्रतिपरीक्षा में, उसने सुस्पष्टतः यह कथन किया कि वे अपीलार्थी को अपने साथ रखने के लिए तैयार और रजामन्द नहीं हैं, यद्यपि कि वह उनके साथ आने को तैयार थी ।
- 11. अभि. सा. 6 देवी राम ने भी एक शपथपत्र के माध्यम से अपना साक्ष्य प्रस्तुत किया । उसने तारीख 18 अप्रैल, 2010 को अपने भाई से एक टेलीफोन काल प्राप्त की जिसने उसे बताया कि अपीलार्थी ने स्वयं पर मिट्टी का तेल छिड़क लिया था और आत्महत्या करने की कोशिश की थी । उसने अपने भाई को इसकी सूचना अपीलार्थी के माता-पिता को देने के लिए कहा और इसके पश्चात् प्रत्यर्थी, उसे उसके माता-पिता के घर ले गया । अपनी प्रतिपरीक्षा में, वह क्षतियों की प्रकृति के बारे में और उस स्थान के बारे में जहां उसका उपचार हुआ था, के बारे में वर्णन नहीं कर सका।
- 12. प्रतिवादी साक्षी 1, राजेन्दर ठाकुर ने एक शपथपत्र के माध्यम से अपना साक्ष्य प्रस्तुत किया । उसने पंचायत के समक्ष कार्यवाहियों में सम्मिलित होना स्वीकार किया । अपीलार्थी के माता-पिता ने उसे बताया था कि उनकी पुत्री का पित और दामाद धन की मांग कर रहा था । उनकी पुत्री की सास अपने साथ रीमा (अपीलार्थी) को रखने के लिए तैयार और रजामंद नहीं थी ।
- 13. अपीलार्थी, प्रतिवादी साक्षी 2 के रूप में उपस्थित हुई । उसने भी एक शपथपत्र के माध्यम से अपना साक्ष्य प्रस्तुत किया । उसने यह अभिसाक्ष्य दिया कि कुछ दिनों के लिए वह तुकना में रुकी थी । उसने प्रत्यर्थी या उसके कुटुम्ब सदस्यों के साथ कभी भी दुर्व्यवहार नहीं किया । प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्य धन लाने के लिए और अपने माता-पिता से अपने हिस्से की मांग करने के लिए उस पर दबाव डालते थे । वह अपने

माता-पिता से 10,000/- रुपए भी लाई थी । तारीख 18 अप्रैल, 2010 को उसका पित और उसके पित के बड़े भाई की पत्नी ने उसके ऊपर मिट्टी का तेल छिड़क कर उसे आग लगाने की कोशिश की । वह कमरे से भागकर स्वयं को बचाई । उसे मामूली क्षतियां कारित हुईं । उसे अस्पताल नहीं ले जाया गया था ।

- 14. प्रतिवादी साक्षी 3, अपीलार्थी का पिता है । उसने भी एक शपथपत्र फाइल करते हुए अपना साक्ष्य प्रस्तुत किया । शपथपत्र में यह वर्णित किया है कि उसकी पुत्री कुछ समय के लिए प्रत्यर्थी के साथ ग्राम तुकना में रुकी थी और इसके पश्चात् वह दिल्ली आ गई थी । प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्य उसकी पुत्री के साथ दुर्व्यवहार करते थे और उसे पीटते भी रहते थे । उस पर अपने माता-पिता से धन लाने के लिए दबाव डाला जाता था । उस पर कुनिहार में सड़क से सटे भूमि में अपने हिस्से को मांगने के लिए भी दबाव डाला जाता था । उसकी पुत्री ने उसे यह बताया था कि तारीख 18 अप्रैल, 2010 को प्रत्यर्थी और उसकी ननद ने उसे आग लगाने की कोशिश की थी ।
- 15. प्रतिवादी साक्षी 4, राजकुमार ने भी एक शपथपत्र फाइल करते हुए, अपना साक्ष्य प्रस्तुत किया । शपथपत्र में यह वर्णित किया है कि रीमा (अपीलार्थी) ने उसे बताया था कि उसकी सास ने उसे आग लगाने की कोशिश की थी । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट की प्रति प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ए है जो अभि. सा. 1 एल. सी. पुष्पा द्वारा सम्यक् रूप से साबित है ।
- 16. इसमें उपर्युक्त चर्चा किए गए कथनों के विश्लेषण से यह प्रकट होता है कि पक्षकारों के बीच विवाह तारीख 12 मार्च, 2009 को हिन्दू रीति-रिवाजों के अनुसार हुआ था । अभि. सा. 2 श्री भूपेन्दर ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि तारीख 18 अप्रैल, 2010 को जब वह अपनी माता से एक टेलीफोन काल प्राप्त किया तभी अपीलार्थी क्रोधित हो गई और उसने स्वयं पर मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगाने की कोशिश की । उसने आग बुझाने की कोशिश की । वह अपीलार्थी को उसके माता-पिता के घर ले गया । क्योंकि अपीलार्थी ने मिट्टी का तेल छिड़क कर स्वयं को आग लगाकर आत्महत्या करने की कोशिश की थी इसलिए यह एक गंभीर घटना थी । मामले की रिपोर्ट पुलिस थाने में की जानी चाहिए थी । यह सिद्ध करने के लिए अभिलेख पर ऐसा कोई विश्वसनीय साक्ष्य नहीं है कि प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्यों ने अभिकथित घटना के बारे में पुलिस में शिकायत दर्ज कराई थी । उसने यह भी परिसाक्ष्य दिया कि प्रथम

इत्तिला रिपोर्ट, उसके और उसके कुटुम्ब सदस्यों के विरुद्ध रजिस्ट्रीकृत की गई थी और उन्होंने जमानत ले ली थी । घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 के अधीन उनके विरुद्ध एक और मामला भी लम्बित है। उसने सुस्पष्टतः यह परिसाक्ष्य दिया कि यद्यपि अपीलार्थी उनके साथ जाने को तैयार और रजामंद थी फिर भी वह उसे अपने साथ दिल्ली नहीं ले गया । इसी प्रकार, प्रत्यर्थी की माता ने स्पष्टतः यह अभिसाक्ष्य दिया कि यद्यपि अपीलार्थी उनके साथ दिल्ली जाने के लिए तैयार और रजामंद थी फिर भी, वह उसे दिल्ली नहीं ले गई । इस प्रकार, यह साबित होता है कि अपीलार्थी अपने पति और सास के साथ जाने के लिए हमेशा ही तैयार और रजामंद थी किन्तू, वे उसे वापस दिल्ली ले जाने के लिए तैयार और रजामंद नहीं थे । अभि. सा. 4 अजीत सिंह ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि उसे उसकी पुत्री ने बताया था कि अपीलार्थी को आग लगाने की कोशिश की गई है । तथापि, अपनी प्रतिपरीक्षा में, उसने यह स्वीकार किया कि यह जयसिंह ही था जिसने उसे पंचायत के दौरान घटना के बारे में बताया था । न तो प्रत्यर्थी न ही उसके पिता ने अपने शपथपत्रों में यह कथन किया है कि अभि. सा. 4 अजीत सिंह को आग की घटना के बारे में स्चित किया गया था ।

17. प्रतिवादी साक्षी 1, राजिन्दर ठाकुर, प्रतिवादी साक्षी 3 दलवीर सिंह और प्रतिवादी साक्षी 4 राजकुमार ने सुस्पष्टतः यह कथन किया है कि प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्य प्रतिवादी साक्षी 2 श्रीमती रीमा को और अधिक धन लाने के लिए और उस पर कुनीहार में सड़क से सटे भूमि में अपने हिस्से की भूमि का दावा करने के लिए भी दबाव डाला करते थे । प्रतिवादी साक्षी 2 श्रीमती रीमा ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि उसने अपने पिता से 10,000/- रुपए प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्यों को संदाय करने के लिए कहा था । उसके माता-पिता ने उसके विवाह पर 2,24,000/- रुपए खर्च किए थे । अभि. सा. 2 श्री भूपेन्दर, अभि. सा. 5 निर्मला ने यह कथन किया है कि तारीख 18 अप्रैल, 2010 को अपीलार्थी ने मिट्टी का तेल छिड़क कर स्वयं को आग लगाने की कोशिश की थी ।

18. घटना की उत्पत्ति इस प्रकार हुई है कि अभि. सा. 2 श्री भूपेन्दर ने अभि. सा. 5 निर्मला से एक टेलीफोन काल प्राप्त की और उसके पश्चात् अपीलार्थी क्रोधित हो गई और मिट्टी का तेल छिड़क कर स्वयं को आग लगाने की कोशिश की । इस बारे में, विश्वास नहीं किया जा सकता है कि मात्र प्रत्यर्थी द्वारा अपनी माता से टेलीफोन काल प्राप्त होने पर

अपीलार्थी क्रोधित हो गई और स्वयं पर मिट्टी का तेल छिड़क कर अपने जीवन को समाप्त करने की कोशिश की । प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्यों का आचरण भी पराया जैसा था । उसे उपचार के लिए अस्पताल ले जाया जाना चाहिए था । प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्यों द्वारा ही प्रतिकूल परिस्थितियां सृजित की गईं थीं जिनके कारण ही तारीख 18 अप्रैल, 2010 की आग वाली घटना घटित हुई । कोई भी संवेदनशील व्यक्ति छोटे-मोटे मामलों पर अपने जीवन का अंत करने के लिए कभी आत्महत्या नहीं करेगा चाहे वह संवेदनशील हो या नहीं । मानवीय आचरण अपने जीवन को सुरक्षित रखने का होता है न कि उसे नष्ट करने का । प्रत्यर्थी को छोटे-मोटे आधारों पर विवाह-विच्छेद लेने के लिए गलत लाभ की अनुज्ञा नहीं दी जा सकती है । प्रत्यर्थी को अनन्य तौर पर यह साबित करने की अपेक्षा होती है कि अपीलार्थी के कृत्यों से उसे मानसिक और शारीरिक क्रूरता कारित हुई है । उसके द्वारा वर्णित आधार स्वाभाविक तौर पर सूक्ष्म हैं और वैवाहिक जीवन में घटित होते रहते हैं ।

- 19. प्रत्यर्थी के विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री जी. डी. वर्मा ने यह जोरदार तर्क दिया है कि अपीलार्थी ने उसके मुवक्किल और उसके कुटुम्ब सदस्यों के विरुद्ध तारीख 10 नवम्बर, 2010 को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 116/2010 की गलत शिकायत दर्ज कराई है।
- 20. न्यायालय ने यह पहले ही नोटिस किया है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ए की प्रति को अभि. सा. 1 एल. सी. पुष्पा द्वारा साबित किया जा चुका है । यह सत्य है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने में विलम्ब हुआ है, जिसमें अपीलार्थी को आग लगाने की घटना का भी उल्लेख किया गया है । किन्तु, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट का सम्पूर्णतः परिशीलन किया जाना चाहिए । न्यायालय इस तथ्य का न्यायिक नोटिस ले सकता है कि भारतीय समाज में, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने के लिए पुलिस थाने जाना अंतिम विकल्प होता है । साधारणतया, पक्षकारों की प्रवृत्ति पुलिस थाने जाने से बचने की होती है । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में यह भी उल्लिखित है कि प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्य अपीलार्थी से दहेज की मांग किया करते थे और उसे तंग करते थे और उसे पीटते रहते थे । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को मिथ्या नहीं कहा सकता है ।
- 21. प्रत्यर्थी के विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री जी. डी. वर्मा ने यह भी तर्क दिया कि प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्यों के विरुद्ध घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 के अधीन एक मामला फाइल किया गया

था । अपीलार्थी को अधिनियम के अधीन उपबंधित विधिक उपचारों का अवलंब लेने का स्वतंत्र अधिकार है । घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 के अधीन मात्र प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने और मामला संस्थित करने से ही यह स्वतः क्रूरता की कोटि में नहीं आ जाता है । मामले के संपूर्ण तथ्यों और परिस्थितियों में, घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने और याचिका संस्थित करने से यह निष्कर्ष निकलता है कि यह मानसिक और शारीरिक क्रूरता की कोटि में आता है ।

- 22. विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री जी. डी. वर्मा ने यह भी तर्क दिया कि अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी को अभित्यक्त किया है । तथापि, मामले के तथ्य यह हैं कि प्रत्यर्थी ने स्वयमेव ही ऐसी परिस्थितियां सृजित कीं जिससे अपीलार्थी तारीख 18 अप्रैल, 2010 की घटना के पश्चात् अपने माता-पिता के साथ रहने के लिए बाध्य हो गई । अभित्यजन को साबित करने के अनुक्रम में, पक्षकारों को अनन्य तौर पर अभित्यजन का आशय साबित करना होता है ।
- 23. शोभा रानी बनाम मधुकर रेड्डी वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों ने यह अभिनिर्धारित किया है कि दहेज की मांग, विधि के अधीन प्रतिषिद्ध है । यह क्रूरता की कोटि में आता है । माननीय न्यायाधीशों ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :—

"14. उच्च न्यायालय का भी यही विचार है। उच्च न्यायालय ने यह कहा है कि पत्नी अतिसंवेदनशील प्रतीत होती है और वह अत्यधिक कल्पना करती है और अत्यधिक अप्राकृतिक चीजों को सोचती है। उसके बाद, उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि —

'यद्यपि, कोई भी धन की मांगों को न्यायोचित नहीं ठहरा सकता है यदि परिस्थितियों को समुचित दृष्टिकोण से देखा जाए । प्रत्यर्थी एक चिकित्सक है, यदि वह यह कहता है कि उसकी धनी पत्नी कुछ फालतू खर्च करती है तो यह कुछ भी गलत या अस्वाभाविक नहीं है ।'

18. वैवाहिक अपराधों को समुचित तौर पर विवेक में रखते हुए,

_

¹ ए. आई. आर. 1988 एस. सी. 121.

हमारा यह समाधान है कि इस मामले में अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत तथ्यों और परिस्थितियों में, यह निष्कर्ष निकालना न्यायोचित है कि दहेज की मांग की गई थी । दहेज की मांग करना विधि के अधीन प्रतिषिद्ध है । यह अपने आप में ही पर्याप्त रूप से गलत है । हमारी राय यह है कि यह क्रूरता की कोटि में आने के नाते पत्नी विवाह के विघटन की डिक्री पाने की हकदार है ।"

24. श्रीमती सुरेश शर्मा बनाम डा. सुखदेव शर्मा वाले मामले में, विद्वान एकल न्यायाधीश ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:—

"31. चिह्न-ए, पति के भाई द्वारा पत्नी को लिखा गया एक पत्र है । उसने यह लिखा है कि उसे उसके पित द्वारा दी गई अत्यधिक पीड़ा को सहन करने की ईश्वर शक्ति दे । चिह्न-बी और चिह्न-सी, उसके पति के भतीजे कमलेश कुमार द्वारा उसकी मामी अर्थात् पत्नी के नामे, लिखे गए पत्र । इन पत्रों में भी पति के भतीजे ने उसके पति द्वारा पत्नी के साथ किए गए व्यवहार की तीव्र व्यथा अभिव्यक्त की है । चिह्न-डी, पति के हस्तलेख में पत्नी को लिखा एक पत्र है इस पत्र में बूरे बर्ताव के बारे में अभिकथन है । पति को यह संदेह था कि उसकी पत्नी विवाह के समय कुंवारी नहीं थी । पत्रों में अभिकथनों की जांच किए बिना, जो प्रकृति में गंदे हैं, यह नितान्त स्पष्ट है कि पति अपनी पत्नी के साथ अत्यधिक चिढ़ा हुआ था क्योंकि, सुहागरात की रात्रि में पत्नी ने अपने साथ उसे संभोग नहीं करने दिया । इस कारण से और न कि अन्य कारण से वह यह संदेह करता था कि उसकी पत्नी कुंवारी नहीं है और यह कि वह कुछ यौन रोग से ग्रसित है । यह प्रतीत होता है कि पति कुछ ऐसे भ्रम से ग्रसित था कि चूंकि पत्नी स्हागरात की रात्रि में संभोग करने में अनिच्छुक थी इसलिए वह कुंवारी नहीं थी और वह कुछ योनिय प्रदत्त रोग से ग्रसित है । पति ने पत्नी की पवित्रता के बारे में संदेह करने का कोई अन्य कारण नहीं दिया है । तथापि, इस पत्र के परिशीलन से यह स्पष्टतः उपदर्शित होता है कि पक्षकारों के बीच विवाह हुआ था । यद्यपि, पत्नी द्वारा प्रस्तुत किया गया पत्र पति द्वारा हस्ताक्षरित नहीं है और यह पति द्वारा एस. डी. एम., अर्की को लिखे गए पत्र की प्रतिलिपि प्रदर्श पी-1 के जैसे ही हस्तलेख में है और पति द्वारा प्रस्त्त किया गया था । निस्संदेह, दोनों ही पत्र एक ही हस्तलेख में

¹ 2005 (2) शिमला एल. सी. 399.

हैं । अभिलेख पर कतिपय अन्य मनी आर्डर की प्रतियां हैं जिससे यह दर्शित होता है कि पत्नी ने अपनी सास को धन भेजा था ।"

25. समर घोष बनाम जया घोष¹ वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों ने मानसिक क्रूरता को निम्नलिखित स्पष्टीकृत किया है:—

"मार्गदर्शन के लिए कभी भी कोई एकरूपीय कसौटी अधिकथित नहीं की जा सकती है। तब भी हम मानवीय आचरण के कुछ उदाहरणों का उल्लेख करना उपयुक्त समझते हैं जो मानवीय क्रूरता के मामले पर चर्चा करते समय सुसंगत हो सकते हैं। निम्न पैराओं में इंगित किए गए उदाहरण केवल दृष्टांतस्वरूप हैं और न कि सर्वांगीण —

- (i) पक्षकारों के सम्पूर्ण वैवाहिक जीवन पर विचार करने पर अत्यंत मानसिक पीड़ा, दुख और वेदना, जिसके कारण पक्षकारों का एक दूसरे के साथ रहना संभव नहीं हो पाएगा । यह मानसिक क्रूरता की व्यापक परिधि के भीतर आएगा ।
- (ii) पक्षकारों के सम्पूर्ण वैवाहिक जीवन का व्यापक रूप से मूल्यांकन करने पर यदि यह प्रचुर रूप से स्पष्ट हो जाता है कि स्थिति ऐसी है कि दुखी किए गए पक्षकार से अन्य पक्षकार के ऐसे आचरण को सहने के लिए और उसके साथ सतत् रूप से जीवनयापन करने के लिए नहीं कहा जा सकता है।
- (iii) मात्र ठंडापन या प्यार की कमी से क्रूरता गठित नहीं हो सकती । भाषा में प्रायः रूखापन/कठोरता, विरत भाव दर्शित करना, टीका-टिप्पणी करना, एक ऐसी कोटि के हो सकते हैं जिनके कारण अन्य पक्षकार (पति/पत्नी) के लिए वैवाहिक जीवन पूर्णरूप से असहनीय बन जाए ।
- (iv) मानसिक क्रूरता चित्त की एक स्थिति है । गहन वेदना, असंतोष, अन्य पित/पत्नी के आचरण से दूसरे पक्षकार को नैराशय जो लंबी अवधि तक हो, की भावना मानसिक क्रूरता गठित करती है ।

¹ [2008] 3 उम. नि. प. 23 = (2007) 4 एस. सी. सी. 511.

- (v) गाली-गलौज और अपमानकारी व्यवहार का अनवरत रूप से जारी रहना जिससे अन्य पक्षकार को यंत्रणा/असंतोष या जीवन दुःखदपूर्ण हो जाए, यह भी मानसिक क्रूरता गठित करता है।
- (vi) पित/पत्नी का अनवरत अनुचित आचरण और व्यवहार जो वस्तुतः अन्य पक्षकार के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करता हो । पिरवाद किए गए व्यवहार और उसके पिरणामस्वरूप पहुंचा खतरा या आशंका अत्यंत ही घोर और प्रबल होनी चाहिए ।
- (vii) अनवरत भयाक्रांत आचरण, नितांत अनदेखी करना या वैवाहिक दयालुता के सामान्य स्तर से पूर्णतया विचलन करना जिसके कारण दूसरे पक्षकार के मानसिक स्वास्थ्य को क्षति पहुंचती हो या उससे त्रुटि करने वाले पक्षकार को अत्यधिक आत्मिक सुख मिलता हो, यह मानसिक क्रूरता गठित करते हैं।
- (viii) आचरण ऐसा होना चाहिए जो ईर्ष्या, स्वार्थता आधिपत्यता से अत्यंत अधिक हो अन्यथा दुख, असंतोष और भावनात्मक रूप से चोट पहुंचाना मानसिक क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद प्रदान किए जाने के लिए आधार नहीं हो सकते।
- (ix) मात्र छोटी-मोटी कहा-सुनी, झगड़े वैवाहिक जीवन के सामान्य झगड़े जो दिन-प्रतिदिन के जीवन में घटित होते हैं, मानसिक क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद किए जाने के लिए पर्याप्त नहीं होंगे।
- (x) सम्पूर्ण वैवाहिक जीनव का पुनर्विलोकन किया जाना चाहिए और अनेक वर्षों के दौरान के कुछ एकल उदाहरण क्रूरता गठित नहीं कर सकेंगे । दुर्व्यवहार ऋजुतापूर्वक एक लंबी अविध तक जारी रहना चाहिए, जिसके दौरान उनके (पिति/पत्नी) संबंध इस सीमा तक खराब हो गए हों कि एक पित/पत्नी के कृत्यों और आचरण के कारण व्यथित पक्षकार उसके साथ और अधिक रहना अत्यंत ही कठिन पाता हो, यह मानसिक क्रूरता गठित कर सकेगा ।
 - (xi) यदि पति बिना किसी चिकित्सीय कारण के और

अपनी पत्नी की सम्मित या उसकी जानकारी के बिना अपना नसबंदी का आपरेशन कराता है और यदि पत्नी बिना किसी चिकित्सीय कारण के या अपनी पित की सम्मित या जानकारी के बिना गर्भपात या नसबंदी कराती है तब पित/पत्नी का यह कृत्य मानिसक क्रूरता गठित करेगा।

- (xii) पति/पत्नी का एकपक्षीय रूप से बिना किसी शारीरिक अक्षमता या विधिमान्य कारण के एक पर्याप्त अवधि तक दूसरे पक्षकार के साथ संभोग करने से इनकार करने का एकपक्षीय विनिश्चय भी मानसिक क्रूरता गठित करेगा।
- (xiii) पति या पत्नी का विवाह के पश्चात् यह एकपक्षीय विनिश्चय करना कि वह विवाहोपरान्त कोई बच्चा पैदा नहीं करेगा यह भी मानसिक क्रूरता गठित करेगा ।
- (xiv) जहां एक लंबी सतत् अवधि तक पित/पत्नी अलग रह रहे हैं वहां यह ऋजुतापूर्वक निष्कर्ष निकाला जा सकेगा कि उनके बीच वैवाहिक संबंध सुधार के परे हैं । विवाह नाममात्र का रह जाता है यद्यपि यह विधिक बंधन के अधीन रहता है । ऐसे मामले में विधि द्वारा ऐसे बंधन को तोड़ने से इनकार करने से विवाह का कोई प्रयोजन पूरा नहीं होता । इसके प्रतिकूल यह पक्षकारों की भावनाओं के प्रति अत्यंत ही अनादर दर्शित करता है । ऐसी समरूप स्थितियों में यह मानसिक क्रूरता गठित करेगा ।"
- 26. मनीषा त्यागी बनाम दीपक कुमार वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों ने यह अभिनिर्धारित किया है कि ''क्रूरता'' गठित करने के अनुक्रम में यह पर्याप्त है कि पक्षकारों में से एक का आचरण असामान्य और स्वीकृत मानकों से इतना निम्न होता है कि अन्य पित या पत्नी दूसरे के साथ युक्तियुक्त तौर पर ऐसे आचरण की प्रत्याशा नहीं कर सकते हैं । माननीय न्यायाधीशों ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:—

26. इस प्रक्रम पर हम नवीन कोहली **बनाम** नीलू कोहली [(2006) 4 एस. सी. सी. 558] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा

٠

¹ (2010) 4 एस. सी. सी. 339.

अभिव्यक्त किए गए मतों की अवेक्षा कर सकते हैं । इस मामले में न्यायालय ने वैवाहिक मामलों में मानसिक क्रूरता की संकल्पना के विकास और उद्गम की जांच की थी । पैरा 35 में निम्न मत व्यक्त किया गया है –

"35. विवाह-विच्छेद की अर्जी मुख्य रूप से क्रूरता के आधार पर फाइल की गई थी । यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 में 1976 के संशोधन के पूर्व हिन्दू विवाह अधिनियम के अधीन विवाह-विच्छेद का दावा करने के लिए क्रूरता का आधार नहीं था । यह केवल अधिनियम की धारा 10 के अधीन न्यायिक पृथक्करण का दावा करने के लिए ही आधार था । 1976 के संशोधन द्वारा क्रूरता को विवाह-विच्छेद का एक आधार बनाया गया था और वे शब्द जो धारा 10 से लोप किए गए इस प्रकार हैं 'जिससे याची के मस्तिष्क में युक्तियुक्त आशंका कारित हो कि दूसरे पक्षकार के साथ रहना याची के लिए नुकसानदेह या हानिकर होगा' । इसलिए, विवाह-विच्छेद का दावा करने वाले पक्षकार के लिए यह साबित करना आवश्यक नहीं है कि क्रूरता का व्यवहार ऐसी प्रकृति का है जिससे यह आशंका-युक्तियुक्त आशंका हो कि दूसरे पक्षकार के साथ रहना उसके लिए नुकसानदेह या हानिकर होगा ।"

27. 1976 के पूर्व की अवधि में क्रूरता की परिभाषा का उपयुक्त उदाहरण इस न्यायालय द्वारा एन. जी. दास्तने **बनाम** एस. दास्तने [(1975) 2 एस. सी. सी. 326] वाले मामले में दिया गया सुविख्यात विनिश्चय है जिसमें निम्न मत व्यक्त किया गया –

"30. इस संबंध में जांच की जानी चाहिए कि क्या क्रूरता के रूप में आरोपित आचरण ऐसी प्रकृति का है जिससे याची के चित्त में यह युक्तियुक्त आशंका उत्पन्न हो कि उसका प्रत्यर्थी के साथ रहना हानिकर या क्षतिपूर्ण होगा।"

यह अब और अधिक अपेक्षित मापदंड नहीं है । अब यह दर्शित करना पर्याप्त होगा कि पित/पत्नी में से किसी का आचरण इतना असामान्य और स्वीकृत मापदंडों से इतना निम्न प्रकृति का है कि अन्य पक्ष (पित/पत्नी) से उसके साथ रहने की युक्तियुक्त रूप से प्रत्याशा न की जा सके । आचरण अब और अधिक ऐसा क्रूरतापूर्ण और घृणित होना अपेक्षित नहीं है जिसके आधार पर युक्तियुक्त आशंका की जा

सके कि यह अन्य पक्षकार (पित/पत्नी) के साथ सतत रूप से सहवास करना हानिकर या क्षितपूर्ण बनाएगा । इसिलए क्रूरता साबित करने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि शारीरिक हिंसा प्रयोग की जाए । तथापि, सतत रूप से दुर्व्यवहार, दाम्पत्य संभोग से विरत रहना, जानबूझकर उपेक्षा करना, एक पक्ष द्वारा अन्य पक्ष के प्रति अन्यमनस्क व्यवहार करने के आधार पर क्रूरता का निष्कर्ष निकाला जा सकेगा । तथापि, इस मामले में उपर्युक्त मापदंडों के साथ भी विचारण न्यायालय और अपीली न्यायालय दोनों ने यह स्वीकार किया था कि पत्नी का आचरण ऐसी प्रकृति की क्रूरता गठित नहीं करता था जिसके आधार पर पित विवाह-विच्छेद की डिक्री अभिप्राप्त करने में समर्थ हो सके ।

28. हम इस न्यायालय द्वारा शोभा रानी **बनाम** मधुकर रेड्डी [(1988) 1 एस. सी. सी. 105] वाले मामले में व्यक्त किए गए मतों की भी यहां पर अवेक्षा कर सकते हैं जिसमें क्रूरता की संकल्पना को निम्न प्रकार व्यक्त किया गया है –

"4. 'क्रूरता' शब्द को हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 में परिभाषित नहीं किया गया है । इसका प्रयोग अधिनियम की धारा 13 (1) (i-क) में वैवाहिक कर्तव्यों या दायित्वों की बाबत या संबंधित मानवीय आचरण या व्यवहार के संदर्भ में किया गया है । यह ऐसा आचरण है जो अन्य व्यक्ति पर प्रतिकृल प्रभाव डालता है I क्रूरता, मानसिक या शारीरिक, साशय या बिना आशय हो सकती है । यदि यह शारीरिक है तो यह तथ्य और कोटि का प्रश्न है । यदि यह मानसिक है तो जांच क्रूर बर्ताव की प्रकृति और तत्पश्चात ऐसे बर्ताव का दंपत्ति पर प्रभाव के संबंध से आरंभ होनी चाहिए । क्या यह युक्तियुक्त आशंका पैदा करती है कि इसके कारण दूसरे पक्षकार के साथ रहना नुकसानदेह या हानिकर होगा, अंततः शिकायत करने वाले पति/पत्नी पर इसके प्रभाव और आचरण की प्रकृति पर ध्यान देते हुए मामले का निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए । तथापि, ऐसे मामले भी हो सकते हैं जहां स्वयं शिकायत किया गया आचरण अत्यंत बुरा और स्वतः विधिविरुद्ध या अवैध है । तब दूसरे पक्षकार पर इसके प्रभाव या हानिकर प्रभाव की जांच या विचार किए जाने की आवश्यकता नहीं है। ऐसे मामलों में क्रूरता तभी सिद्ध हो जाएगी यदि आचरण स्वतः साबित या स्वीकृत है । आशय का अभाव मामले में कोई अंतर पैदा नहीं करता यदि मानवीय क्रियाकलाप के मामूली अर्थ में शिकायत किया गया कार्य, अन्यथा क्रूरता माना जाता है । क्रूरता में आशय आवश्यक घटक नहीं है । पक्षकार को अनुतोष इस आधार पर इनकार नहीं किया जा सकता है कि जानबूझकर या सोच-समझकर कोई बुरा बर्ताव नहीं किया गया है ।"

27. **रवि कुमार** बनाम **जुल्मी देवी** वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :—

"19. यह सही है कि उक्त अधिनियम के अधीन क्रूरता की कोई परिभाषा नहीं दी गई है । वास्तव में ऐसी परिभाषा संभव नहीं है । विवाह विषयक संबंधों में क्रूरता से स्पष्ट रूप से पित-पत्नी के बीच पारस्परिक सम्मान और मेल-मिलाप का अभाव अभिप्रेत है जिससे कि संबंधों में कटुता पैदा हो जाती है और इसके परिणामस्वरूप प्रायः व्यवहार संबंधी विभिन्न प्रस्फोटन होते हैं जिन्हें क्रूरता कहा जा सकता है । कभी-कभी वैवाहिक संबंधों में क्रूरता हिंसा का रूप धारण कर लेती है और कभी-कभी इससे भिन्न रूप भी ले सकती है । कभी-कभी वह केवल व्यवहार या कोई दृष्टिकोण हो सकता है । कुछ स्थितियों में चुप रहना क्रूरता की कोटि में आ सकता है ।"

20. इसलिए, वैवाहिक व्यवहार में क्रूरता किसी भी पिरभाषा को चुनौती देती है और उसके प्रवर्ग को कभी भी बन्द नहीं किया जा सकता । इस बात का अभिनिश्चय और निर्णय किसी मामले के समस्त तथ्यों और उसकी पिरिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए किया जाना होता है न कि किसी पूर्व-निश्चित कठोर फार्मूले के आधार पर कि पित अपनी पत्नी के प्रति क्रूर है या पत्नी अपने पित के प्रति क्रूर है । वैवाहिक मामलों में क्रूरता असंख्य प्रकार की हो सकती है — यह सूक्ष्म या पाश्विक भी हो सकती है और चेष्टाओं और शब्दों द्वारा भी हो सकती है । वह संभवतः इससे स्पष्ट हो सकता है कि लार्ड डेनिंग ने शैल्डन बनाम शैल्डन [(1966) 2 आल इंग्लैंड ला रिपोर्ट्स 257] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया कि वैवाहिक मामलों में क्रूरता

^{1 (2010) 4} एस. सी. सी. 476.

की श्रेणियां कभी भी समाप्त नहीं होतीं ।

21. इस न्यायालय का ध्यान उस बात की ओर दिलाया गया जो कुछ लार्ड रीड ने गोलिन्स **बनाम** गोलिन्स [(1963) 2 आल इंग्लैंड ला रिपोर्ट्स 966] वाले मामले में वैवाहिक मामलों में क्रूरता का न्यायनिर्णयन करने के बारे में कहा था । प्रासंगिक मताभिव्यक्तियां निम्नलिखित हैं –

'..........वैवाहिक मामलों में, हमारा सरोकार युक्तियुक्त व्यक्ति से नहीं होता है जैसा कि उपेक्षा के मामलों में होता है । हम इस पुरुष और इस महिला के संबंध में कार्यवाही कर रहे हैं और हम उनके बारे में जितनी कम कारण-कार्य उपधारणाएं करें उतना बेहतर है । क्रूरता संबंधी मामलों में, कोई भी कभी भी इस उपधारणा के साथ कार्यवाही आरंभ नहीं कर सकता कि पक्षकार युक्तियुक्त व्यक्ति हैं क्योंकि यदि पति-पत्नी दोनों युक्तियुक्त व्यक्ति के रूप में सोचे और व्यवहार करें तब क्रूरता संबंधी कोई मामला उद्भूत होने की कभी भी कल्पना करना कठिन होता है।'

पूर्वोक्त लेखांश इस न्यायालय द्वारा दस्ताने **बनाम** दस्ताने [(1975) 2 एस. सी. सी. 326] वाले मामले से अनुमोदित है ।

- 22. इस न्यायालय ने वैवाहिक मामलों में क्रूरता की बदलती उपधारणा के बारे में शोभा रानी बनाम मधुकर रेड्डी {[1988] 3 उम. नि. प. 199 = ए. आई. आर. 1988 एस. सी. 121, पृ. 123} वाले मामले में इस प्रकार मत व्यक्त किया
 - '5. यह बात ध्यान में रखना आवश्यक है कि हमारे चतुर्दिक जीवन में विशेष परिवर्तन हुआ है । हम वैवाहिक कर्तव्यों और विशेषतः उत्तरदायित्वों के स्वरूप में महान परिवर्तन पाते हैं । उक्त परिवर्तन एक घर से दूसरे घर में अथवा एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में, अलग-अलग मात्रा में है । इसलिए जब कोई पित या पत्नी अपने जीवनसाथी या संबंधियों के क्रूरता के व्यवहार के बारे में शिकायत करती है तो न्यायालय को जीवन स्तर के बारे में जांच नहीं करनी चाहिए । किसी एक मामले में तथ्यों का समूह क्रूरता के रूप में कलंकित होते हुए भी किसी दूसरे मामले में ऐसा नहीं भी हो सकता है । अभिकथित क्रूरता अधिकांशतः जीवन के

उस प्रकार पर निर्भर कर सकती है जिसके पक्षकार आदी हैं अथवा उनकी आर्थिक और सामाजिक दशा पर निर्भर कर सकती है । वह उनकी संस्कृति और मानवीय मूल्यों पर भी निर्भर कर सकती है जिसे वह महत्व देते हैं । इसलिए हम न्यायाधीशों और वकीलों को हमारे स्वयं के जीवन के सिद्धांतों को अभिव्यक्त नहीं करना चाहिए । हम उनके समानांतर नहीं हो सकते हैं । हमारे और पक्षकारों के बीच एक पीढी का अंतर हो सकता है।""

28. नीलम कुमार बनाम दया रानी¹ वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों ने यह अभिनिर्धारित किया है कि एकांकी में एकल कृत्य, क्रूरता के आधार पर विवाह के विघटन के लिए पर्याप्त नहीं होता है । माननीय न्यायाधीशों ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि सबूत का भार क्रूरता अभिकथित करने वाले व्यक्ति पर होता है । माननीय न्यायाधीशों ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया :—

"7. विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री के विरुद्ध, प्रत्यर्थी ने अधिनियम, 1955 की धारा 28 के अधीन उच्च न्यायालय में एक अपील फाइल की । उच्च न्यायालय के समक्ष, अपीलार्थी ने विचारण न्यायालय के निर्णय का जोरदार बचाव किया और यह इंगित किया कि प्रत्यर्थी अपने मामले के समर्थन में कोई भी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं कर सकी है । तथापि, उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि हमारा यह नितांत सही ही विचार है कि यद्यपि प्रत्यर्थी कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं कर सकी है, तथापि, विवाह-विच्छेद की कोई डिक्री तब तक मंजूर नहीं की जा सकती है जब तक कि अपीलार्थी स्वयं द्वारा प्रस्तुत अभिवचनों और साक्ष्यों के आधार पर यह साबित करने में असफल नहीं हो जाता है कि उसका मामला, हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13(1)(i-क) के अधीन आता है । अभिलेख पर की सामग्रियों पर विचार करते हुए, उच्च न्यायालय ने यह पाया और अभिनिर्धारित किया कि प्रत्यर्थी के विरुद्ध क्रूरता का कोई मामला नहीं बनता है और अतएव, अपीलार्थी उस आधार पर विवाह के विघटन की डिक्री पाने का हकदार नहीं है।

9. उसके बाद, उच्च न्यायालय ने इन अन्य अभिकथनों पर विचार किया कि प्रत्यर्थी उस समय अपीलार्थी के साथ नहीं रही और

^{1 (2010) 13} एस. सी. सी. 298.

उसकी देखभाल नहीं की, जब वह दुर्घटना में कारित क्षतियों के कारण चिकित्सीय उपचार के लिए अस्पताल में भर्ती था । उच्च न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि यह अभिकथन अपीलार्थी के अभिवचनों का भाग नहीं है और मामले को साक्ष्य के दौरान प्रस्तुत किया गया था । न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि अभिवचनों में कथित नहीं होने के कारण इस अभिकथन को विचार में नहीं लिया जा सकता है । अन्यथा भी, विचारण न्यायालय के समक्ष किए गए मौखिक कथनों के अलावा इस अभिकथन के समर्थन में कोई सामग्री नहीं है । अपीलार्थी ने अपने उपचार के संबंध में किसी चिकित्सक की परीक्षा नहीं की न ही कोई चिकित्सीय अभिलेख प्रस्तुत किया । किसी भी दशा में, एकांकी रूप में एकल कृत्य के इस आधार पर कि प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी के साथ क्रूरता कारित की है, विवाह के विघटन के लिए मृश्किल से ही पर्याप्त आधार होता है ।"

29. गुरुबक्श सिंह बनाम हरमिन्दर कौर वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि यह नितान्त संभाव्य है कि एक विशिष्ट आचरण, एक मामले में क्रूरता की कोटि में आ सकता है किन्तु वही आचरण आवश्यक रूप से भिन्न परिस्थितियों में विभिन्न कारकों के परिवर्तन होने के कारण क्रूरता की कोटि में नहीं आ सकता है । इसलिए, उस अपीलार्थी, जो अनुतोष के लिए दावा करता है, के लिए यह साबित करना आवश्यक होता है कि आचरण या व्यवहार के एक विशिष्ट भाग के परिणामस्वरूप उसे क्रूरता कारित हुई । माननीय न्यायाधीशों ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:—

"11. अधिनियम, 1955 के अधीन सम्पन्न हिन्दू विवाह का विघटन मात्र उसमें विनिर्देष्ट आधारों पर ही हो सकता है। हम यह पहले ही इंगित कर चुके हैं कि विवाह के विघटन के लिए अर्जी में, अपीलार्थी ने मात्र अधिनियम, 1955 की धारा 13 का ही उल्लेख किया है और अर्जी में उसने प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा किए गए कतिपय कृत्यों को क्रूरता की कोटि में आने वाले का उल्लेख किया है। क्रूरता को अधिनियम, 1955 के अधीन परिभाषित नहीं किया गया है, यह नितान्त संभाव्य है कि एक विशिष्ट आचरण, एक मामले में क्रूरता की कोटि में आ सकता है किन्तु वही आचरण आवश्यक रूप से भिन्न परिस्थितियों में विभिन्न कारकों के परिवर्तन होने के कारण क्रूरता की

_

¹ ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 114.

कोटि में नहीं आ सकता है । इसलिए, उस अपीलार्थी, जो अनुतोष के लिए दावा करता है, के लिए यह साबित करना आवश्यक होता है कि आचरण या व्यवहार के एक विशिष्ट भाग के परिणामस्वरूप उसे क्रूरता कारित हुई । ऐसे मामलों में, कोई पूर्व उपधारणा नहीं की जा सकती है । इसका तात्पर्य यह है कि यह उपधारणा नहीं की जा सकती है कि एक विशिष्ट आचरण सभी परिस्थितियों के अधीन अन्य पक्षकारों के संबंध में क्रूरता की कोटि में आएगा । व्यथित पक्षकार को यह विनिर्दिष्ट प्रकथन करना होता है कि आचरण, जिसके अपवाद हो सकते हैं, क्रूरता की कोटि में आता है । यह सत्य है कि हिंसा का एकल कृत्य भी, जो प्रकृति में कष्टदायक और अक्षम्य है, क्रूरता के परीक्षण में पूर्ण हो सकता है । दूसरे पक्षकार द्वारा असामान्य लैंगिक संभोग की निरन्तर मांग करना या दुराचार करना क्रूरता हो सकती है, यदि यह अन्य पक्षकार को क्षति पहुंचाता है । अपीलार्थी द्वारा ऐसी कोई शिकायत नहीं की गई है । वर्तमान मामले में, जैसा कि पूर्व में कथित है, अपीलार्थी ने कुछ कृत्यों का उल्लेख किया है, जिसमें, उसके अनुसार, प्रत्यर्थी उसके माता-पिता के साथ गाली-गलौच करती थी । हमने, दोनों पक्षकारों के अर्जियों के सभी प्रकथनों, प्रत्युत्तर कथनों, लिखत निवेदनों के साथ ही साक्ष्यों को सत्यापित किया है । हमारा यह समाधान है कि ऐसे कृत्यों के आधार पर विवाह का विघटन नहीं किया जा सकता है।"

30. के. श्रीनिवास राव बनाम डी. ए. दीपा¹ वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों ने समर घोष बनाम जया घोष² वाले मामले में दिए गए निर्णय में अनन्य रूप से और अधिक दृष्टांत जोड़े हैं। माननीय न्यायाधीशों ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:—

"10. हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13(1)(i-क) के अधीन पित या पत्नी द्वारा एक अर्जी प्रस्तुत करते हुए, विवाह-विच्छेद की डिक्री द्वारा विवाह का विघटन कराया जा सकता है, इस आधार पर कि विवाह होने के पश्चात् दूसरे पक्षकार ने अर्जीदार के साथ क्रूरता का व्यवहार किया है । इस न्यायालय के कई निर्णयों में 'क्रूरता' के अभिप्राय और मार्गदर्शक सिद्वांत दोहराए गए हैं । क्रूरता वहां प्रकट होती है जहां पित-पत्नी में से कोई एक दूसरे के साथ

¹ (2013) 5 एस. सी. सी. 226.

² [2008] 3 उम. नि. प. 23 = (2007) 4 एस. सी. सी. 511.

ऐसा व्यवहार करता है और दूसरा उसके बारे में ऐसा महसूस करता है या उससे ऐसा कारित होता है या उसके विवेक में ऐसी युक्तियुक्त आशंका कारित होती है कि इससे उसका दूसरे के साथ रहना कष्टदायक या जोखिमपूर्ण हो जाएगा । क्रूरता शारीरिक या मानसिक हो सकती है ।

- 11. इस न्यायालय ने समर घोष बनाम जया घोष [(2007) 4 एस. सी. सी. 511] वाले मामले में कई दृष्टांत अधिकथित किए हैं जिनसे 'मानसिक क्रूरता' के निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं । यह सूची सुस्पष्टतः सर्वांगीण नहीं है क्योंकि प्रत्येक मामले के अपने स्वयं के विशिष्ट तथ्य होते हैं और मानसिक क्रूरता के अस्तित्व या अन्यथा के निष्कर्ष विवेक लागू करने के पश्चात् निकाले जा सकते हैं । हमें, समर घोष (उपर्युक्त) वाले मामले के सुसंगत पैराग्राफ को उद्धृत करना चाहिए । हम, उन्हीं दृष्टांतों को प्रस्तुत कर रहे हैं जो वर्तमान मामले के लिए सुसंगत हैं
 - (101) मार्गदर्शन के लिए कभी भी कोई एकरूपीय कसौटी अधिकथित नहीं की जा सकती है । तब भी हम मानवीय आचरण के कुछ उदाहरणों का उल्लेख करना उपयुक्त समझते हैं जो मानवीय क्रूरता के मामले पर चर्चा करते समय सुसंगत हो सकते हैं । निम्न पैराओं में इंगित किए गए उदाहरण केवल दृष्टांतस्वरूप हैं और न कि सर्वांगीण
 - (i) पक्षकारों के सम्पूर्ण वैवाहिक जीवन पर विचार करने पर अत्यंत मानसिक पीड़ा, दुख और वेदना, जिसके कारण पक्षकारों का एक दूसरे के साथ रहना संभव नहीं हो पाएगा । यह मानसिक क्रूरता की व्यापक परिधि के भीतर आएगा ।
 - (ii) पक्षकारों के सम्पूर्ण वैवाहिक जीवन का व्यापक रूप से मूल्यांकन करने पर यदि यह प्रचुर रूप से स्पष्ट हो जाता है कि स्थिति ऐसी है कि दुखी किए गए पक्षकार से अन्य पक्षकार के ऐसे आचरण को सहने के लिए और उसके साथ सतत रूप से जीवनयापन करने के लिए नहीं कहा जा सकता है।

- (iv) मानसिक क्रूरता चित्त की एक स्थिति है। गहन वेदना, असंतोष, अन्य पति/पत्नी के आचरण से दूसरे पक्षकार को नैराश्य जो लंबी अवधि तक हो, की भावना मानसिक क्रूरता गठित करती है।
- (v) गाली-गलौज और अपमानकारी व्यवहार का अनवरत रूप से जारी रहना जिससे अन्य पक्षकार को यंत्रणा/असंतोष या जीवन दुःखदपूर्ण हो जाए, यह भी मानसिक क्रूरता गठित करता है।
- (vi) पति/पत्नी का अनवरत अनुचित आचरण और व्यवहार जो वस्तुतः अन्य पक्षकार के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करता हो । परिवाद किए गए व्यवहार और उसके परिणामस्वरूप पहुंचा खतरा या आशंका अत्यंत ही घोर और प्रबल होनी चाहिए ।

(vii)	
(viii)	I
(ix)	

(x) सम्पूर्ण वैवाहिक जीवन का पुनर्विलोकन किया जाना चाहिए और अनेक वर्षों के दौरान के कुछ एकल उदाहरण क्रूरता गठित नहीं कर सकेंगे । दुर्व्यवहार ऋजुतापूर्वक एक लंबी अवधि तक जारी रहना चाहिए, जिसके दौरान उनके (पित/पत्नी) संबंध इस सीमा तक खराब हो गए हों कि एक पित/पत्नी के कृत्यों और आचरण के कारण व्यथित पक्षकार उसके साथ और अधिक रहना अत्यंत ही कठिन पाता हो, यह मानसिक क्रूरता गठित कर सकेगा।

(xi) .	 	 	 I
(xii)	 	 	 .
(xiii)	 	 	

(xiv) जहां एक लंबी सतत अवधि तक पति/पत्नी अलग रह रहे हैं वहां यह ऋजुतापूर्वक निष्कर्ष निकाला जा सकेगा कि उनके बीच वैवाहिक संबंध सुधार के परे हैं । विवाह नाममात्र का रह जाता है यद्यपि यह विधिक बंधन के अधीन रहता है । ऐसे मामले में विधि द्वारा ऐसे बंधन को तोड़ने से इनकार करने से विवाह का कोई प्रयोजन पूरा नहीं होता । इसके प्रतिकूल यह पक्षकारों की भावनाओं के प्रति अत्यंत ही अनादर दर्शित करता है । ऐसी समरूप स्थितियों में यह मानसिक क्रूरता गठित करेगा।""

- 12. यह उल्लेख करना समुचित है कि इस मामले में पित और पत्नी 16 वर्ष और 6 माह से अधिक समय से पृथक् रह रहे थे । इस तथ्य को अन्य तथ्यों के साथ विचार में लिया गया था, यह निष्कर्ष निकालने के लिए कि वैवाहिक बंधन पत्नी द्वारा कारित मानसिक क्रूरता के कारण सुधार योग्य नहीं रह गया था । इसी प्रकार का मत नवीन कोहली बनाम नीलू कोहली [(2006) 4 एस. सी. सी. 558] वाले मामले में भी अपनाया गया था ।
- 13. वी. भगत बनाम डी. भगत [(1994) 1 एस. सी. सी. 337] वाले मामले में, पित द्वारा फाइल विवाह-विच्छेद की अर्जी के प्रत्युत्तर में, पत्नी द्वारा फाइल लिखित कथन में यह कथन किया गया था कि पित मानिसक भ्रम से पीड़ित है, कि वह एक विकृत मस्तिष्क वाला व्यक्ति है जिसके कारण उसे विशेषज्ञ मनोचिकित्सक से उपचार कराने की आवश्यकता है और यह कि वह संविभ्रम विकार से पीड़ित है । अपनी प्रतिपरीक्षा में उसके काउंसेल ने पित से कितपय प्रश्न पूछते हुए यह सुझाव दिया कि उसके कुटुम्ब के कितपय सदस्य, जिसमें उसकी दादी भी सम्मिलित है, विक्षिप्त हैं । इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि ये प्रकथन, ऐसी प्रकृति की मानिसक क्रूरता गठित नहीं करते हैं कि जिससे यह कहा जा सकता है । ऐसे अभिवचनों और प्रश्नों से यह अभिनिर्धारित किया जा सकता है है कि इससे पित को असीम मानिसक पीड़ा और कष्ट कारित होते हैं ।
- 14. विजय कुमार भाटे {[2003] 3 एस. सी. आर. 607} वाले मामले में लिखित कथन में अभिवाचित व्यभिचार और पड़ोसी के साथ अनुचित संबंध में विभेद किया गया है । इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि ऐसी गुणता, महत्ता और पारिणामिक

अभिकथनों से मानसिक पीड़ा, कष्ट और वैवाहिक विधि में क्रूरता की अवधारणा को गठित करने की धारणा कारित होती है जिसके परिणामस्वरूप, पत्नी के मस्तिष्क में भय और विघटन की भावना गहराई से महसूस होती है और यह युक्तियुक्त आशंका बनती है कि उसका अपने पति के साथ रहना जोखिमपूर्ण होगा।

- 15. नवीन कोहली बनाम नीलू कोहली [(2006) 4 एस. सी. सी. 558] वाले मामले में प्रत्यर्थी-पत्नी ने एक राष्ट्रीय समाचारपत्र में यह विज्ञापन छपवाया था कि उसका पित उसका कर्मचारी है । उसने अपने कारबार एसोशिएट के साथ संव्यवहार से बचने के लिए एक अन्य समाचार छपवाया । यह पित के साथ मानसिक क्रूरता कारित करना माना गया ।
 - (82). उच्च न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि ये कार्यवाहियां ऐसी नहीं की जा सकती हैं जिससे यह विवाह की अकृतता को पूर्णतया कायम रखे जाने योग्य नहीं हो सकें।
- 16. इस प्रकार, समर घोष बनाम जया घोष [(2007) 4 एस. सी. सी. 511] वाले मामले में उल्लिखित मानसिक क्रूरता के विस्तृत दृष्टांतों में, हम कुछ और जोड़ सकते हैं । अभिवचनों में, पित या पत्नी या उसके या उसके नातेदारों के विरुद्ध अनुचित, अपमानजनक अभिकथन करना, शिकायतें फाइल करना या नोटिसें जारी करना या समाचार मद में छपवाना जिससे कि पित या पत्नी के समृद्ध कारबार या नौकरी पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता हो और पित या पत्नी के विरुद्ध न्यायालय ने बार-बार मिथ्या शिकायतें फाइल करना या मामले फाइल करना, मामले के तथ्यों में, ये दूसरे पित या पत्नी के विरुद्ध मानसिक क्रूरता करने की कोटि में आएंगे।"
- 31. मालती रिव, एम. डी. बनाम एम. वी. रिव, एम. डी. वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय के माननीय न्यायाधीशों ने यह अभिनिर्धारित किया है कि अभित्यजन साबित करने के अनुक्रम में, दो आवश्यक शर्तें होनी चाहिएं, (1) पृथक्करण का तथ्य और (2) स्थायी तौर पर सहवास नहीं करने का आशय (अभित्यजन का आशय) । माननीय न्यायाधीशों ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:—

¹ (2014) 7 एस. सी. सी. 640.

"20. उपर्युक्त मामले में, लक्ष्मण उत्तमचन्द कृपलानी वाले मामले का भी निर्देश किया गया था जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अभित्यजन का अपने सार में अभिप्राय पति-पत्नी में से किसी एक द्वारा अन्य की सहमति के बिना या किसी युक्तियुक्त कारण के बिना दूसरे को स्थायी तौर पर छोड़ने या परित्याग करने का आशय है । अभित्यजन के अपराध के लिए, जहां तक यह अभित्यजन करने वाले पति या पत्नी का संबंध है, दो आवश्यक शर्तें होनी चाहिएं, (1) पृथक्करण का तथ्य और (2) स्थायी तौर पर सहवास नहीं करने का आशय (अभित्यजन का आशय) । इसी प्रकार, जहां तक अभित्यक्त पति या पत्नी का संबंध दो आवश्यक अवयव होने चाहिए (1) सहमति का अभाव और (2) ऐसे आचरण का अभाव जो पूर्वोक्त आवश्यक आशय के प्ररूप में वैवाहिक गृह छोड़ने के लिए युक्तियुक्त कारण देता है । अभित्यजन अभिनिर्धारित करने के लिए, यथासाबित कतिपय तथ्यों से निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं जो अन्य मामले में, उसी प्रकार के निष्कर्ष निकालने के लिए समर्थ नहीं हो सकते हैं, कि इसे तथ्यों को देखते हुए, उस प्रयोजन के लिए जो उन कृत्यों या आचरण और आशय की अभिव्यक्ति से प्रकट होते हैं, जिनसे वास्तविक कृत्यों के पृथक्करण द्वारा दोनों पूर्ववर्ती और पश्चातवर्ती निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं।"

वर्तमान मामले में, स्वयं प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी को उसके माता-पिता के पास छोड़ा था और उसे दिल्ली वापस लाने से इनकार कर दिया था । इस प्रकार, वह अभित्यजन को साबित करने में असफल रहा है ।

32. तद्नुसार, अपील मंजूर की जाती है और विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश-II, सोलन, हिमाचल प्रदेश द्वारा 2013/2010 की अर्जी सं. 3-ए के/3 में पारित तारीख 23 अगस्त, 2014 के निर्णय और डिक्री को अपास्त किया जाता है । प्रकीर्ण आवेदन/आवेदनों, यदि कोई हों, को भी निपटाया जाता है । खर्चे का कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

अपील मंजूर की गई ।

क.

सुमन कुमार शर्मा और अन्य

बनाम

श्रीमती सलोचना और अन्य

तारीख 23 जुलाई, 2015

न्यायमूर्ति संजय करोल

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) — धारा 115, 151, 152 और 153 — पुनरीक्षण — पारित डिक्री और निर्णय में संशोधन — आकस्मिक भूल या लिपिकीय त्रुटि — न्यायालय का आशय — यदि न्यायालय ऐसी कोई डिक्री और निर्णय पारित कर देता है जिसे पारित करने का उसका आशय नहीं था और जो आकस्मिक भूल या लिपिकीय त्रुटि के कारण हुआ है तो न्यायालय ऐसी आकस्मिक भूल या लिपिकीय त्रुटि में ऐसे संशोधन कर सकता है जो उसके वास्तविक आशय की अभिव्यक्ति को व्यक्त करता है।

वर्तमान मामले में, वादियों ने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 115, 151, 152 और 153 के उपबंधों के अधीन फाइल आवेदन में उपन्यायाधीश (I), धर्मशाला द्वारा 1991 की सिविल वाद सं. 154, शीर्षक मदन लाल और अन्य बनाम निक्को राम और अन्य वाले मामले में पारित तारीख 31 जुलाई, 1997 के निर्णय और डिक्री में संशोधन करने की ईप्सा की है, जैसा कि विद्वान् जिला न्यायाधीश, धर्मशाला द्वारा 1997 की सिविल अपील सं. 77-डी/XIII, शीर्षक निक्को राम और अन्य बनाम मदन लाल और अन्य वाले मामले में पारित तारीख 24 जुलाई, 1998 के निर्णय और डिक्री द्वारा पुष्टि/संशोधन किया गया है, जिसे निचले न्यायालय द्वारा 2003 के सिविल प्रक्रीर्ण आवेदन सं. 303, शीर्षक मदन लाल और अन्य बनाम निक्को राम और अन्य वाले मामले में तारीख 12 जनवरी, 2004 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया था । विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री की प्रतिवादियों की अपील में पुष्टि कर दी गई थी । इससे व्यथित होकर आवेदकों ने वर्तमान पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया । न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण आवेदन मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय को अपने निर्णय और डिक्री में संशोधन करने

की शक्ति उन आधारों पर होती है जो निर्दिष्ट होते हैं और कानूनी प्रकृति में विनिर्दिष्ट हैं । न्यायालय, दोनों साम्या और न्याय के हित में, ऐसी शक्ति का प्रयोग करने के लिए आबद्ध होता है । तथापि, ऐसी शक्ति का प्रयोग, विधि में सुस्थिर मापदंडों के भीतर विधायी आशय में ही करना चाहिए । सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908, न्यायालय की अन्तर्निहित शक्ति को मान्यता देता है । यह न केवल निर्णय या डिक्री के संशोधन तक सीमित करता है जैसा कि सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 152 के अधीन यथापरिकल्पित है, अपित्, साधारण अन्तर्निहित शक्ति भी प्रदत्त करता है । न्यायालय को यह भी देखने का कर्तव्य होता है कि अभिलेख सत्य हैं और सही कार्यकलाप की स्थिति प्रस्तुत की गई है । तथापि, इस बारे में, कोई संदेह नहीं किया जा सकता है कि, जो भी हो, न्यायालय उक्त अधिकारिता का प्रयोग इस प्रकार नहीं कर सकता है जैसे कि वह अपने निर्णय का पुनर्विलोकन करता है । यह अपनी अधिकारिता का प्रयोग तब भी नहीं कर सकता है जब डिक्री या आदेश में कोई भूल या आकस्मिक भूल नहीं हुई हो । तथापि, इस उपबंध का प्रयोग लम्बित मामलों में नहीं करना चाहिए । इसलिए, न्यायालय डिक्री में दोनों ही अर्थात सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 152 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए, तथा धारा 151 के अधीन भी शक्तियों का प्रयोग करते हुए, स्धार कर सकता है । (पैरा 16 और 17)

वादपत्र के परिशीलन से यह प्रकट होता है कि मोहल काद्याल, मौजा लूज, तहसील और जिला कांगड़ा में स्थित 4 खसरा संख्या अर्थात् खसरा सं. 663, 664, 667 और 668 वाद की विषय-वस्तु है । निर्णायक तौर पर, विचारण न्यायालय ने प्रतिवादियों को वाद भूमि के कब्जे में नहीं पाया और प्रतिवादियों के प्रतिकूल वाद भूमि पर वादियों का कब्जा पाया जो राजस्व प्रविष्टियों पर आधारित हैं, जिनमें वर्ष 1975 से वादियों के हित-पूर्वाधिकारी का कब्जा प्रलक्षित होने के प्रतिकूल पाया, अतएव उनके पक्ष में विवाद्यक सं. 1 और 9 का उत्तर दिया । महत्वपूर्ण तौर पर ऐसे निष्कर्ष अंतिमता प्राप्त कर लेते हैं और आक्षेपित नहीं होने पर निचले अपील न्यायालय द्वारा डिक्री की पुष्टि कर दी जाती है जो अविवादित तौर पर अंतिमता प्राप्त कर लेते हैं । अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्रियों, जैसा कि विचारण न्यायालय द्वारा चर्चा किया गया है, से मात्र यही निष्कर्ष निकलता है कि पक्षकारों के बीच लम्बित विषय-वस्तु, जो निचले न्यायालय द्वारा निर्णय किए जाने थे वे खसरा सं. 663, 664, 667 और 668 में समाविष्ट

सम्पूर्ण वाद भूमि थी । यहां तक कि साक्ष्य मौखिक/दस्तावेजी, स्पष्ट तौर पर ऐसे ही तथ्य का सुझाव देते हैं । इस परिप्रेक्ष्य में ही निचले न्यायालय ने वादी के आवेदन को खारिज करने में भागतः त्रुटि कारित की है जो त्रुटिपूर्ण तौर पर टंकण भूल/लिपिकीय त्रुटि सही करने के लिए फाइल की गई थी जिसके द्वारा निर्णय या डिक्री के प्रवर्तित भाग में खसरा सं. 667 और 668 अभिलिखित नहीं किया गया था । न्यायालय ने पूर्ववर्ती निर्दिष्ट आधारों पर आवेदन खारिज करने में त्रुटि की है जो इसमें पूर्ववर्ती चर्चा को ध्यान में रखते हुए, विधिक तौर पर कायम रखे जाने योग्य नहीं है । विशेष कानूनी उपबंधों को ध्यान में रखते हुए, वादियों द्वारा पुनर्विलोकन की ईप्सा करने का कोई प्रश्न उद्भूत नहीं होता है । (पैरा 18, 20 और 21)

निर्दिष्ट निर्णय

।नादष्ट ।नणय					
			पैरा		
[2009]	(2009) 2 एस. सी. सी. एस. सतनाम सिंह और अ और एक अन्य ;		15		
[2007]	(2007) 13 एस. सी. सी नियामत अली मौला बनाम को-आपरेटिव सोसाइटी लि	सोनारगाव हाउसिंग	14		
[2003]	(2003) 1 एस. सी. सी. लक्ष्मी राम भूइयां बनाम ही	197 : रे प्रसाद भूइयां और अन्य ;	13		
[2001]	(2001) 4 एस. सी. सी. जयलक्ष्मी सैलो बनाम अं		12		
पुनरीक्षण (र्	सेविल) अधिकारिता :	2004 की सिविल पुनरीक्षण र	я́. 46 .		
सिविल आवेदन ।	। प्रक्रिया संहिता, 1908	की धारा 115 के अधीन पु	गुनरीक्षण		
आवेदकों र्क	ो ओर से	सर्वश्री जी. डी. वर्मा, ज्येष्ठ अ के साथ वी. सी. वर्मा, अधिवव			
	1 से 5 और इनके (6(क) से (ग) की	सर्वश्री अनुज नाग, अधिवक्ता आशीष वर्मा, अधिवक्ता	के साथ		

न्यायमूर्ति संजय करोल — वादियों ने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 151, 152 और 153 के उपबंधों के अधीन फाइल आवेदन में उप-न्यायाधीश (I), धर्मशाला द्वारा 1991 की सिविल वाद सं. 154, शीर्षक मदन लाल और अन्य बनाम निक्को राम और अन्य वाले मामले में पारित तारीख 31 जुलाई, 1997 के निर्णय और डिक्री में संशोधन करने की ईप्सा की है, जैसा कि विद्वान् जिला न्यायाधीश, धर्मशाला द्वारा 1997 की सिविल अपील सं. 77-डी/XIII, शीर्षक निक्को राम और अन्य बनाम मदन लाल और अन्य वाले मामले में पारित तारीख 24 जुलाई, 1998 के निर्णय और डिक्री द्वारा पुष्टि/संशोधन किया गया है, जिसे निचले न्यायालय द्वारा 2003 के सिविल प्रकीर्ण आवेदन सं. 303, शीर्षक मदन लाल और अन्य बनाम निक्को राम और अन्य वाले मामले में तारीख 12 जनवरी, 2004 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया था।

2. तारीख 31 जुलाई, 1997 की डिक्री का प्रवर्तित भाग इस प्रकार है :—

".......वादियों का वाद सफल होता है और इस प्रभाव की डिक्री पारित करते हुए, डिक्री की जाती है कि वादी प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से वाद भूमि, जो मोहल काद्याल, मौजा लूज, तहसील और जिला कांगड़ा में स्थित वर्ष 1984-85 के लिए जमाबंदी, भूमि राजस्व रुपए 3.22, खाता सं. 121, खतौनी सं. 302, खसरा सं. 663, 664, किटा 2, माप 0-33-43 में समाविष्ट है, के स्वामी हो गए और प्रतिवादियों को स्थायी, प्रतिषेधात्मक व्यादेश की डिक्री पारित करते हुए, वाद भूमि में वादियों के शांतिपूर्ण कब्जे में हस्तक्षेप करने से अवरुद्ध किया जाता है। खर्चे का कोई आदेश नहीं किया जाता है।"

(रेखांकन जोर देने के लिए किया गया है)

- 3. प्रश्नगत आवेदन के निबंधनों में वादियों ने दो और खसरा संख्याओं अर्थात् 667 और 668 को डिक्री में समाविष्ट करने की ईप्सा की है जो अभिकथित तौर पर टंकण संबंधी भूल या लिपिकीय त्रुटि के कारण छूट गए हैं।
- 4. महत्वपूर्ण तौर पर, विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को प्रतिवादियों की अपील में पुष्टि कर दी गई थी।

- 5. विवाद्यक संविवाद की ठीक और समुचित विवेचना करने के लिए आवेदन का सुसंगत पैराग्राफ नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है :—
 - "4. कि उप-न्यायाधीश द्वारा आवेदकों का वाद डिक्री कर दिया गया था किन्तु तत्कालीन उप-न्यायाधीश ने अपने निर्णय और डिक्री में वाद भूमि के एक भाग अर्थात् खाता सं. 122, खतौनी सं. 304, खसरा सं. 667 और 668 भूमि माप 0-08-27 हेक्टेयर भूमि का उल्लेख करने में लोप कर दिया था और माननीय जिला न्यायाधीश ने भी ऐसा ही लोप कर दिया है जैसा कि विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री में लोप किया गया था । वाद भूमि के भाग का उल्लेख करने में लोप आकस्मिक भूल या लिपिकीय त्रुटि के कारण हुआ है क्योंकि न्यायालय का इस तरीके से निर्णय और डिक्री पारित करने का कभी भी आशय नहीं रहा है क्योंकि वादियों का वाद डिक्री कर दिया गया था।"

और इसके उत्तर में प्रतिवादियों द्वारा फाइल प्रत्युत्तर इस प्रकार है :-

- "4. आवेदन का पैराग्राफ 4 सही है कि वाद डिक्री कर दिया गया है किन्तु संशोधन, जिसकी प्रार्थना की गई है, का आदेश नहीं किया जा सकता है । माननीय न्यायालय को संशोधन, जैसी कि प्रार्थना की गई है, का आदेश पारित करने की अधिकारिता नहीं है । भूल, आकस्मिक भूल या लिपिकीय त्रुटि नहीं है । निर्णय और डिक्री के सुधार का आदेश नहीं दिया जा सकता है ।"
- 6. प्रकटतः, न्यायिक प्राधिकारी की ओर से आकस्मिक भूल/ लिपिकीय त्रुटि वह आधार है जिसके संशोधन के लिए प्रार्थना की गई है।
- 7. निचले न्यायालय ने आवेदन को तीन आधारों पर नामंजूर कर दिया (i) डिक्री के विरुद्ध कोई अपील प्रस्तुत नहीं की गई थी (ii) आवेदक प्रश्नगत निर्णय का पुनर्विलोकन कराने में असफल रहा है, और (iii) निर्णय और डिक्री के प्रवर्तित भाग से यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है कि क्या विचारण न्यायालय ने खसरा सं. 667 और 668 के बारे में वाद डिक्री की है या नहीं।
- 8. इस प्रक्रम पर, यह भी मत व्यक्त किया गया कि न्यायालय, ने उसी आवेदन में आवेदकों द्वारा किए गए द्वितीय प्रार्थना होने के नाते मोहल के नाम में सुधार करते हुए, कन्याल से कलार करते हुए, आवेदन भागतः

मंजूर कर लिया था ।

- 9. सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 151, 152 और 153 इस प्रकार है :—
 - "151. न्यायालय की अन्तर्निहित शक्तियों की व्यावृत्ति इस संहिता की किसी भी बात के बारे में यह नहीं समझा जाएगा कि वह ऐसे आदेशों के देने की न्यायालय की अन्तर्निहित शक्ति को परिसीमित या अन्यथा प्रभावित करती है, जो न्याय के उद्देश्यों के लिए या न्यायालय की आदेशिका के दुरुपयोग का निवारण करने के लिए आवश्यक है।
 - 152. निर्णयों, डिक्रियों या आदेशों का संशोधन निर्णयों, डिक्रियों या आदेशों में की लेखन या गणित संबंधी भूलें या किसी आकस्मिक भूल या लोप से उसमें हुई गलतियां न्यायालय द्वारा स्वप्रेरणा से या पक्षकारों में से किसी के आवेदन पर किसी भी समय शुद्ध की जा सकेंगी।
 - 153. संशोधन करने की साधारण शक्ति न्यायालय किसी भी समय और खर्च-संबंधी ऐसी शर्तों पर या अन्यथा जो वह ठीक समझे, वाद की किसी भी कार्यवाही में की किसी भी त्रुटि या गलती को संशोधित कर सकेगा, और ऐसी कार्यवाही द्वारा उठाए गए या उस पर अवलंबित वास्तविक प्रश्न या विवाद्यक के अवधारण के प्रयोजन के लिए सभी आवश्यक संशोधन किए जाएंगे।"
- 10. यह विधि की सुस्थिर प्रतिपादना है कि डिक्री, न्यायनिर्णयन की औपचारिक अभिव्यक्ति होती है, जो जहां तक कि यह न्यायालय की अभिव्यक्ति से संबंधित होती है, वाद में संविवादित सभी या किसी मामलों के संबंध में, पक्षकारों के अधिकारों को अनन्य रूप से अवधारित करती है और यह आरम्भिक या अंतिम हो सकती है । यह भी विधि की सुस्थिर प्रतिपादना है कि यह अवधारित करने के लिए कि क्या न्यायालय द्वारा पारित आदेश डिक्री है या नहीं, डिक्री पारित करने में अभिवचनों, कार्यवाहियों और परिस्थितियों पर विचार किया जाना अपेक्षित है ।
- 11. इस प्रश्न का अवधारण करने के लिए कि न्यायालय द्वारा पारित आदेश डिक्री है या नहीं, इसे निम्नलिखित परीक्षणों को संतुष्ट करना चाहिए (i) न्यायनिर्णयन होना चाहिए, (ii) ऐसा न्यायनिर्णयन एक वाद

में दिया जाना चाहिए (iii) वाद में संविवादित सभी या किसी मामले के संबंध में पक्षकारों के अधिकारों को अवधारित करना चाहिए, (iv) ऐसा अवधारण अनन्य प्रकृति का होना चाहिए, और (v) ऐसे न्यायनिर्णयन की औपचारिक अभिव्यक्ति होनी चाहिए।

12. जयलक्ष्मी सैलो बनाम ओसवाल जोसफ सैलो वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :-

"इस मुद्दे पर निम्नलिखित मामलों को निर्दिष्ट किया जा सकता है –

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 152 के अधीन उपबंध के आधार पर, एक युक्ति 'न्यायालय के कार्य में किसी की हानि नहीं होती है' मान्य है अर्थात न्यायालय का कार्य किसी व्यक्ति के प्रतिकृल नहीं होगा जैसा कि असम टी कारपोरेशन लिमिटेड बनाम नारायण सिंह (ए. आई. आर. 1981 गुवाहाटी 41) वाले मामले में, मत व्यक्त किया गया है । अतएव, न्यायालय का बिना आशय भूल, जिससे किसी पक्षकार को प्रतिकूलता कारित हो सकती है, में सुधार किया जाना चाहिए । एक अन्य मामले, एल. जानकीरामा अय्यर बनाम पी. एम. नीलकंठ अय्यर (ए. आई. आर. 1962 एस. सी. 633) में यह निष्कर्ष निकाला गया था कि डिक्री में भूलवश 'अन्तःकालीन लाभ' के स्थान पर 'शुद्ध लाभ' लिख गया था । यह भूल, निर्णय के पूर्ववर्ती भाग को देखने से स्पष्ट होता है । भूल, अनजाने में होना अभिनिर्धारित किया गया । भिक्खी लाल **बनाम** त्रिवेणी (ए. आई. आर 1965 एस. सी. 1935) वाले मामले में, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि डिक्री जो निर्णय की पुष्टि करता था, सुधार होने योग्य नहीं है । एक अन्य मामले, मास्टर कन्सट्रक्शन कम्पनी (प्रा.) लिमिटेड बनाम उड़ीसा राज्य (ए. आई. आर. 1966 एस. सी. 1047) में, यह मत व्यक्त किया गया है कि गणितीय भूल, गणना की भूल है, लिपिकीय भूल, लिखावट या टंकण की भूल है जबिक आकस्मिक भूल या लोप से उद्भूत या उत्पन्न होने वाली त्रुटि न्यायालय की ओर से असावधानी बरतने के कारण त्रुटि है, जो संशोधित होने योग्य है । इस मुद्दे पर विस्तार पूर्वक चर्चा करने पर

^{1 (2001) 4} एस. सी. सी. 181.

दृष्टांत के रूप में, यह उपदर्शित होता है कि यदि जहां आदेश में कुछ अन्तर्विष्ट हो सकता है जो डिक्री में उल्लिखित नहीं होता है तो वहां बिना आशय लोप या भूल हो सकता है । ऐसे लोपों के लिए न्यायालय दायी होते हैं जो कहते कुछ हैं या कुछ कहने में लोप करते हैं जबिक उनका आशय ऐसा कहना या लोप करना नहीं होता है । ऐसे भूल के संशोधन के लिए गुणागुणों पर नए तर्क या पुनः तर्क अपेक्षित नहीं होते हैं । द्वारका दास बनाम मध्य प्रदेश राज्य (1999) 3 एस. सी. सी. 500 वाले मामले में, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि आदेश या डिक्री में संशोधन, भूल या लोप में होना चाहिए, मामले के गुणागुणों पर विचार किए बिना जो आकस्मिक हो न कि आशयित हो । यह भी मत व्यक्त किया कि उपबंधों का अवलंब मूल डिक्री के निबंधनों में उपांतरण, परिवर्तन या जोड़ने के लिए नहीं लिया जा सकता ताकि मामले में निर्णय के पश्चात् प्रभावी न्यायिक आदेश का प्रभाव बना रहे । विचारण न्यायालय ने वादकालीन ब्याज मंजुर नहीं किया था यद्यपि वादपत्र में ऐसी प्रार्थना की गई थी किन्तु सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 152 के अधीन फाइल आवेदन पर निर्णय और डिक्री में संशोधन करते हुए, वादकालीन ब्याज अधिनिर्णीत किया था, इस आधार पर कि वादकालीन ब्याज का अधिनिर्णय नहीं करना आकस्मिक भूल थी । यह अभिनिर्धारित किया कि उच्च न्यायालय आदेश अपास्त करने में सही था । न्यायालयों द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 152 के अधीन उपबंधों का उदारवादी प्रयोग अपने क्षेत्र के परे का अवमूल्यन माना गया । उपर्युक्त मत का अवलंब लेते हुए, इस न्यायालय ने थिरुगन्नवली अम्मल बनाम पी. वेणुगोपाल पिल्लई (ए. आई. आर. 1940 मद्रास 29) और महाराज पुत्ता लाल बनाम श्रीपाल सिंह (ए. आई. आर. 1937 अवध 191) वाले मामलों में मद्रास उच्च न्यायालय वाले निर्णय को अनुमोदित किया गया था । इसी प्रकार का मत, इस न्यायालय द्वारा बिहार राज्य बनाम नीलमणी साहू (1996) 11 एस. सी. सी. 528 वाले मामले में भी अपनाया गया है, जिसमें गणितीय भूल के कारण मामले में पुनर्विचार करते हुए, नए सिरे से यह निष्कर्ष निकाला कि मामले में कई पेड़ों और उनके मूल्यांकन सही हैं, जिन पर पहले ही अंतिम तौर पर विनिश्चय कर लिया गया था । इसी प्रकार, बाई शकरी बेन बनाम विशेष भूमि अर्जन अधिकारी (1996) 4 एस. सी.

सी. 533 वाले मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि धारा 23(1-ए) के अधीन अतिरिक्त रकम के अधिनिर्णय में लोप, धारा 28 के अधीन ब्याज बढ़ोतरी, तोषण इत्यादि के आदेश में लिपिकीय या गणितीय त्रुटि नहीं माना जा सकता है । उपर्युक्त उपदर्शित रकम के अधिनिर्णय में डिक्री के संशोधन के लिए आवेदन को विधि में दूषित अभिनिर्धारित किया गया ।

इसी प्रकार की रिपोर्ट करते हुए माननीय न्यायाधीशों ने यह अभिनिर्धारित किया कि साधारणतया अन्तर्निहित शक्तियां सभी न्यायालयों और प्राधिकारियों को उपलब्ध होती हैं, इस तथ्य के होते हुए भी कि क्या सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 152 के अधीन अन्तर्निहित उपबंध किसी विशिष्ट प्रक्रिया में कठोरतः लागू हो सकते हैं या नहीं । एक मामले में जहां यह स्पष्ट है कि कुछ जिसे न्यायालय करना चाहता है किन्तु दुर्भाग्यवश लिपिकीय या गणितीय त्रुटि के कारण कोई भूल हो जाती है तो ऐसी भूल में सुधार करने के लिए न्यायालय मात्र न्याय उद्देश्य में ही समर्थ होता है । किन्त्, न्यायालय का ऐसी शक्ति का प्रयोग करने के पूर्व विधिक तौर पर समाधान होना चाहिए और इस विधिमान्य निष्कर्ष पर पहुंचना चाहिए कि आदेश या डिक्री में कुछ अन्तर्विष्ट या कुछ लोप, जो अन्यथा आशयित था, जिसे न्यायालय ने डिक्री पारित करते समय अपने विवेक में रखे हुए था कि आदेश या डिक्री विशिष्ट तरीके से पारित होना चाहिए किन्तू, ऐसा आशय लिपिकीय, गणितीय त्रुटि या आकस्मिक भूल के कारण डिक्री या आदेश में समाहित नहीं हो सका । तथ्यों और परिस्थितियों से ही इस तथ्य के बारे में पता लगाया जा सकता है कि न्यायालय का क्या आशय था किन्तु बिना आशय के ही ऐसा कुछ आदेश या निर्णय में उल्लिखित हो गया जिसे न्यायालय द्वारा करने का आशय नहीं है ।

माननीय न्यायाधीशों ने यह भी दलील दी कि लिपिकीय, गणितीय त्रुटि या आकस्मिक भूल में सुधार करने की शक्ति न्यायालय को मामले में सभी प्रकार से दूसरी बार विचार करने के लिए सशक्त नहीं करती है और यह निष्कर्ष निकाला कि बेहतर आदेश या डिक्री हो सकती है या पारित की जानी चाहिए । इसमें मामले के गुणागुणों पर पुनः विचार नहीं करना चाहिए, यह निष्कर्ष निकालने के लिए कि यह बेहतर होता और चीजों को ठीक करने में ऐसा आदेश पारित किया गया होता जैसाकि संशोधन करने के पश्चात् आदेश पारित करने की ईप्सा की गई है । द्वितीय विचार यह है कि न्यायालय यह निष्कर्ष निकाल सकता है कि कतिपय निबंधनों में आदेश पारित करने में भूल कारित हो सकती है किन्तु ऐसे प्रत्येक भूल में, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 152 के अधीन यथाअन्तर्विष्ट न्यायालय की अन्तर्निहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए संशोधन की अनुज्ञा नहीं दी जा सकती है । यह आरंभतः आशयित सीमा तक सीमित किया गया है किन्तु ऐसे आशय के विरुद्ध कुछ छोड़ने और जोड़ने की अनुज्ञा दे दी गई है ।"

13. माननीय उच्चतम न्यायालय ने लक्ष्मी राम भूइयां बनाम हरि प्रसाद भूइयां और अन्य¹ वाले मामले में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:-

"14. इस पहेली को कैसे हल कर सकते हैं ? हमारी राय में, सफल पक्षकार के पास कोई अन्य विकल्प नहीं है किन्तु, वह सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 152 का अवलंब ले सकता है जो किसी आकस्मिक भूल या लोप के कारण निर्णयों, डिक्रियों या आदेशों में उदभुत लिपिकीय या गणितीय भूल को न्यायालय द्वारा स्वयं अपनी स्वप्रेरणा से या पक्षकारों में से किसी पक्षकार के आवेदन करने पर किसी भी प्रक्रम पर संशोधन करने का उपबंध करता है । उच्च न्यायालय के निर्णय के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि इसकी राय में, वादी, वाद में सफल होने के हकदार पाए गए थे। निर्णय में न्यायालय के आशय में प्रकटतः आकस्मिक भूल या लोप पाया गया था, जिसमें वादी को वाद में सफल होने के लिए संशोधन कराने का हकदार पाया गया था । धारा 152, न्यायालय को अपने निर्णय में परिवर्तन करने के लिए समर्थ बनाता है जिससे कि वह इसे अपने अभिप्रायः और आशय में प्रभावी बना सके । अपने आदेशों में संशोधन करने की न्यायालय की शक्ति, न्यायालय के आशय और अभिप्रायः की अभिव्यक्ति प्रकट करती है उस समय जब आदेश किया जाता है जिसे लार्ड बावेन द्वारा स्वीरे, री, मेलार बनाम स्वीरे (1885)

_

¹ (2003) 1 एस. सी. सी. 197.

30, चेम्बर डी 239 में कायम रखा गया, इस परिसीमा के अध्यधीन कि संशोधन बिना अन्याय के किया जा सकता है या उन निबंधनों में, जिनसे कि अन्याय न हो । लार्ड लिंडले ने यह मत व्यक्त किया कि यदि न्यायालय का आदेश, यथाआशयित आदेश की अभिव्यक्ति नहीं करता है तो इसे वापस लिया जा सकता है तब —

'आदेश पारित करने और आदेश करने में ऐसा कोई जादू नहीं है कि स्वयं अपने अभिलेखों को सही करने के लिए न्यायालय की अधिकारिता से वंचित कर दिया जाए और यदि आदेश, जैसा पारित किया गया है और दिया गया है वह न्यायालय के वास्तविक आदेश की अभिव्यक्ति नहीं करता है तो मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि मुझे यह कहते हुए आघात लगता है कि व्यथित पक्षकार अभिलेखों को सही कराने के लिए यहां नहीं आ सकता है किन्तु अपील के माध्यम से हाउस आफ लार्ड्स में अवश्य ही जाना चाहिए।""

14. माननीय उच्चतम न्यायालय ने नियामत अली मौला बनाम सोनारगाव हाउसिंग को-आपरेटिव सोसाइटी लिमिटेड और अन्य¹ वाले मामले में, उस मामले पर विचार किया जिसमें डिक्रीधारक ने डिक्री में सम्मिलित वाद संपत्ति के सविस्तार वर्णन की ईप्सा की थी । सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 152 के अधीन फाइल वादी के आवेदन को मंजूर कर लिया गया था, जो न्यायालय के समक्ष चुनौती की विषय वस्तु थी । तथ्यात्मक परिप्रेक्ष्य में, न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 152, न्यायालय को किसी आकस्मिक भूल या लोप के कारण अपने स्वयं के निर्णय, डिक्री या आदेश में त्रुटि में सुधार करने के लिए सशक्त करती है । उक्त उपबंध के पीछे सिद्धांत यह है कि न्यायालय के किसी कार्य से किसी की हानि नहीं होती है ।

15. माननीय उच्चतम न्यायालय ने एस. सतनाम सिंह और अन्य बनाम सुरेन्द्र कौर और एक अन्य² वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि साधारणतः पक्षकार को न्यायालय के कार्य से हानि नहीं होनी चाहिए । इस प्रकृति के मामले में, संशोधन की शक्ति, जैसाकि इसमें पूर्व

¹ (2007) 13 एस. सी. सी. 421.

² (2009) 2 एस. सी. सी. 562.

उल्लिखित है, न केवल न्यायालय की शक्ति पर निर्भर करता है अपितु, यह इस सिद्धांत पर भी निर्भर करता है कि न्यायालय को ऐसे किसी भी भूल में सुधार करने के लिए हमेशा ही तैयार और रजामंद होना चाहिए, जो उसके द्वारा कारित हुई है।

- 16. इस प्रकार, न्यायालय को अपने निर्णय और डिक्री में संशोधन करने की शक्ति उन आधारों पर होती है जो निर्दिष्ट होते हैं और कानूनी प्रकृति में विनिर्दिष्ट हैं। न्यायालय, दोनों साम्या और न्याय के हित में, ऐसी शक्ति का प्रयोग करने के लिए आबद्ध होता है। तथापि, ऐसी शक्ति का प्रयोग, विधि में सुस्थिर मापदंडों के भीतर विधायी आशय में ही करना चाहिए।
- 17. सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 न्यायालय की अन्तर्निहित शक्ति को मान्यता देता है । यह न केवल निर्णय या डिक्री के संशोधन तक सीमित करता है जैसा कि सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 152 के अधीन यथापरिकल्पित है, अपितु, साधारण अन्तर्निहित शक्ति भी प्रदत्त करता है । न्यायालय को यह भी देखने का कर्तव्य होता है कि अभिलेख सत्य हैं और सही कार्यकलाप की स्थिति प्रस्तुत की गई है । तथापि, इस बारे में, कोई संदेह नहीं किया जा सकता है कि, जो भी हो, न्यायालय उक्त अधिकारिता का प्रयोग इस प्रकार नहीं कर सकता है जैसे कि वह अपने निर्णय का पुनर्विलोकन करता है । यह अपनी अधिकारिता का प्रयोग तब भी नहीं कर सकता है जब डिक्री या आदेश में कोई भूल या आक्रिमक भूल नहीं हुई हो । तथापि, इस उपबंध का प्रयोग लम्बित मामलों में नहीं करना चाहिए । इसलिए, न्यायालय डिक्री में दोनों ही अर्थात् सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 152 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए, तथा धारा 151 के अधीन भी शक्तियों का प्रयोग करते हुए, सुधार कर सकता है ।
- 18. वादपत्र के परिशीलन से यह प्रकट होता है कि मोहल काद्याल, मौजा लूज, तहसील और जिला कांगड़ा में स्थित 4 खसरा संख्या अर्थात् खसरा सं. 663, 664, 667 और 668 वाद की विषय-वस्तु है । लिखित कथन में प्रतिवादियों को 'वाद भूमि के कब्जे में स्वामियों' के रूप में अभिलिखित किया गया है, जिसका प्रत्युत्तर में खंडन नहीं किया गया है।
 - 19 पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर विचारण न्यायालय ने

निम्नलिखित विवाद्यक विरचित किए:-

- "1. क्या वादी, प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से वाद भूमि के स्वामी हो गए हैं, जैसा कि अभिकथित है ?
- 2. क्या वादी, व्यादेश का अनुतोष पाने के हकदार हैं, जैसी कि प्रार्थना की गई है ?
 - 3. क्या वाद, वर्तमान प्ररूप में कायम रखे जाने योग्य नहीं है ?
- 4. क्या वाद, आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन के कारण दूषित है ?
 - 5. क्या वाद, परिसीमा अवधि द्वारा वर्जित है ?
- 6. क्या वादी, वर्तमान वाद फाइल करने के लिए सुने जाने के हकदार हैं ?
- 7. क्या वाद, न्यायालय शुल्क और अधिकारिता के प्रयोजनों के लिए समुचित तौर पर मूल्यांकित है ?
 - 8. क्या वादी, अपने कार्य और आचरण द्वारा विबंधित है ?
- 9. क्या वाद, भूमि प्रतिवादियों के कब्जे में है, जैसा कि अभिकथित है ?

अनुतोष ।"

- 20. निर्णायक तौर पर, विचारण न्यायालय ने प्रतिवादियों को वाद भूमि के कब्जे में नहीं पाया और प्रतिवादियों के प्रतिकूल वाद भूमि पर वादियों का कब्जा पाया जो राजस्व प्रविष्टियों पर आधारित हैं, जिनमें वर्ष 1975 से वादियों के हित-पूर्वाधिकारी का कब्जा प्रलक्षित होने के प्रतिकूल पाया, अतएव उनके पक्ष में विवाद्यक सं. 1 और 9 का उत्तर दिया । महत्वपूर्ण तौर पर ऐसे निष्कर्ष अंतिमता प्राप्त कर लेते हैं और आक्षेपित नहीं होने पर निचले अपील न्यायालय द्वारा डिक्री की पुष्टि कर दी जाती है जो अविवादित तौर पर अंतिमता प्राप्त कर लेते हैं ।
- 21. अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्रियों, जैसा कि विचारण न्यायालय द्वारा चर्चा किया गया है, से मात्र यही निष्कर्ष निकलता है कि पक्षकारों के बीच लम्बित विषय-वस्तु, जो निचले न्यायालय द्वारा निर्णय किए जाने थे वे खसरा सं. 663, 664, 667 और 668 में समाविष्ट सम्पूर्ण वाद भूमि थी।

यहां तक कि साक्ष्य मौखिक/दस्तावेजी, स्पष्ट तौर पर ऐसे ही तथ्य का सुझाव देते हैं । इस पिएप्रेक्ष्य में ही निचले न्यायालय ने वादी के आवेदन को खारिज करने में भागतः त्रुटि कारित की है जो त्रुटिपूर्ण तौर पर टंकण भूल/लिपिकीय त्रुटि सही करने के लिए फाइल की गई थी जिसके द्वारा निर्णय या डिक्री के प्रवर्तित भाग में खसरा सं. 667 और 668 अभिलिखित नहीं किया गया था । न्यायालय ने पूर्ववर्ती निर्दिष्ट आधारों पर आवेदन खारिज करने में त्रुटि की है जो इसमें पूर्ववर्ती चर्चा को ध्यान में रखते हुए, विधिक तौर पर कायम रखे जाने योग्य नहीं है । विशेष कानूनी उपबंधों को ध्यान में रखते हुए, वादियों द्वारा पुनर्विलोकन की ईप्सा करने का कोई प्रश्न उद्भूत नहीं होता है ।

22. पूर्वोक्त सभी कारणों से, पुनरीक्षण आवेदन मंजूर किया जाता है । विद्वान् जिला न्यायाधीश, कांगड़ा धर्मशाला द्वारा 2003 की सिविल प्रकीर्ण आवेदन सं. 303, शीर्षक मदन लाल और अन्य बनाम निक्को राम और अन्य वाले मामले में, पारित तारीख 12 जनवरी, 2004 के आक्षेपित आदेश को आवेदकों की प्रार्थना नामंजूर करने की सीमा तक अभिखंडित और अपास्त किया जाता है । वादियों का आवेदन मंजूर किया जाता है । उप-न्यायाधीश (I), धर्मशाला द्वारा 1991 की सिविल वाद सं. 154, शीर्षक मदन लाल और अन्य बनाम निक्को राम और अन्य वाले मामले में पारित तारीख 31 जुलाई, 1997 के निर्णय और डिक्री में संशोधन करते हुए, खसरा सं. 667 और 668 के साथ ही खसरा सं. 663 और 664 को सिम्मिलत किया जाए।

23. उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए, वर्तमान आवेदन का निपटारा किया जाता है, साथ ही अन्य कोई आवेदन/आवेदनों, यदि कोई लम्बित हो, का भी निपटारा किया जाता है ।

पुनरीक्षण आवेदन मंजूर किया गया ।

क.

पुष्पा देवी

बनाम

ओम प्रकाश

तारीख 1 सितम्बर, 2015

न्यायमूर्ति राजीव शर्मा

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) — धारा 13 — पत्नी द्वारा पित के साथ ही उसके कुटुम्ब सदस्यों को दांडिक मामले में फंसाने की धमकी देना, सास की प्रायः पिटाई करना तथा बिना किसी युक्तियुक्त कारण के पित का गृह छोड़ देना — क्रूरता — अभित्यजन — विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित होना — यदि अभिलेख पर यह साबित कर दिया जाता है कि पत्नी, पित के साथ ही उसके कुटुम्ब सदस्यों को दांडिक मामले में फंसाने की धमकी देती है, सास की प्रायः पिटाई करती है और बिना किसी युक्तियुक्त कारण के पित का गृह छोड़ देती है तो यदि इन परिस्थितियों में विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित की जाती है तो वह युक्तियुक्त और विधिमान्य होगी क्योंकि इसके लिए अभिलेख पर पर्याप्त कारण थे।

वर्तमान मामले में, प्रत्यर्थी ने हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13 के अधीन अपीलार्थी के विरुद्ध विवाह-विच्छेद की डिक्री के माध्यम से पक्षकारों के बीच विवाह के विघटन के लिए एक अर्जी संस्थित की थी । पक्षकारों के बीच विवाह, हिन्दू रीति-रिवाजों और प्रथाओं के अनुसार, तारीख 10 फरवरी, 2000 को हुआ था । अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी और अपनी सास के साथ दर्व्यवहार करना आरम्भ कर दिया था । वह प्रत्यर्थी की माता को पीटती थी । वह प्रत्यर्थी के पिता के विरुद्ध गाली-गलौज करती थी । मामले की रिपोर्ट ग्राम पंचायत, जोल सपर और पुलिस थाना, नादौन को भी की गई थी । प्रत्यर्थी के पिता ने भी प्रत्यर्थी के साथ अपीलार्थी के दुर्व्यवहार के बारे में शिकायत करते हुए, पुलिस अधीक्षक, हमीरपुर के समक्ष एक शिकायत भी दर्ज कराई थी । अपीलार्थी ने भी प्रत्यर्थी और उसके माता-पिता के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 498क/ 34 के अधीन एक परिवाद फाइल की थी । उसने, उसे (प्रत्यर्थी) को अक्तूबर, 2001 में त्यक्त कर दिया था । अपीलार्थी द्वारा अर्जी का विरोध किया गया । उत्तर में अन्तर्विष्ट प्रकथनों के अनुसार, उसने प्रत्यर्थी या उसके कुटुम्ब सदस्यों के साथ कोई दुर्व्यवहार नहीं किया है। वह प्रत्यर्थी के साथ रहने

को तैयार और रजामंद थी । प्रत्यर्थी द्वारा प्रत्युत्तर फाइल किया गया था । विद्वान् न्यायालय द्वारा तारीख 5 जनवरी, 2005 को विवाद्यक विरचित किए गए थे । अर्जी, तारीख 31 मई, 2008 को मंजूर कर ली गई थी । अतएव, यह अपील फाइल की गई है । न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभिलेख पर की समाग्रियों से यह निष्कर्ष निकलता है कि अपीलार्थी ने भारतीय दंड संहिता. 1860 की घारा 498क के अधीन प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्यों के विरुद्ध एक परिवाद फाइल किया था प्रत्यर्थी गिरफ्तार हुआ था । अपीलार्थी भी प्रत्यर्थी की माता को पीटती थी । तारीख 4 अगस्त, 2002 के रपट रोजनामचा की प्रति प्रदर्श पी. ए. है । प्रत्यर्थी महिला आयोग में भी जाने के लिए बाध्य हुआ था । अपीलार्थी ने यह स्वीकार किया कि न तो प्रत्यर्थी न ही उसके कुट्म्ब के सदस्य उसके माता-पिता से दहेज की कभी भी मांग नहीं की थी । उसे प्रत्यर्थी द्वारा पीटा नहीं गया था । अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी को यह धमकी दी थी कि वह कुछ जहरीला पदार्थ खाकर आत्महत्या कर लेगी । प्रत्यर्थी ने पूर्व में एक विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल की थी । मामले में समझौता हो गया था । तथापि, परिस्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ, अतएव, प्रत्यर्थी, विवाह-विच्छेद की डिक्री की ईप्सा करते हुए, अपीलार्थी के विरुद्ध नई अर्जी फाइल करने के लिए बाध्य हुआ । अपीलार्थी ने बिना किसी युक्तियुक्त कारण के प्रत्यर्थी का साथ छोड़ दिया । प्रत्यर्थी के साथ ही प्रत्यर्थी के माता-पिता के कथन में यह आया है कि अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी का साथ छोड़ दिया था । अपीलार्थी द्वारा प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्यों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 498क के अधीन परिवाद, उसके विरुद्ध प्रत्यर्थी द्वारा विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल करने के पश्चात ही फाइल की गई थी । इसमें उपर्युक्त वर्णित तथ्यों से सुनिश्चित तौर पर प्रत्यर्थी के विरुद्ध मानसिक और शारीरिक क्रूरता कारित होती है । अपीलार्थी बिना किसी युक्तियुक्त कारण के, जैसा कि इसमें उपर्युक्त उल्लिखित है, प्रत्यर्थी का त्यजन कर दिया था । विद्वान निचले न्यायालय ने अभिलेख पर के मौखिक के साथ ही दस्तावेजी साक्ष्यों का सही मृल्यांकन किया है । (पैरा 11 और 16)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2010] (2010) 1 एस. एस. सी. (विवाह-विच्छेद और वैवाहिक मामले) 451 :

मनीषा त्यागी बनाम दीपक कुमार ;

[2008] 3 उम. नि. प. 23 = (2007) 4 एस. सी. सी. 511 : समर घोष बनाम जया घोष ;

[2008] (2008) 10 एस. सी. सी. 497 : जगदीश सिंह बनाम माधुरी देवी ; 15

[1957] ए. आई. आर. 1957 एस. सी. 176 : विपिनचन्द्रा जयसिंहबाई शाह बनाम प्रभावती । 14

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2008 की एफ. ए. ओ. (एच. एम. ए.) सं. 371.

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13 के अधीन अपील । अपीलार्थी की ओर से श्री आनन्द शर्मा, अधिवक्ता प्रत्यर्थी की ओर से कोई नहीं

न्यायमूर्ति राजीव शर्मा — यह अपील, विद्वान् पीठासीन अधिकारी/अपर जिला न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, हमीरपुर, जिला हमीरपुर, हिमाचल प्रदेश द्वारा 2004 की एच. एम. ए. याचिका सं. 49/2005 की आर. बी. टी. सं. 37 में पारित तारीख 31 मई, 2008 के निर्णय के विरुद्ध संस्थित की गई है।

2. वर्तमान अपील का न्यायनिर्णयन करने के लिए आवश्यक मुख्य तथ्य यह हैं कि प्रत्यर्थी ने हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13 के अधीन अपीलार्थी के विरुद्ध विवाह-विच्छेद की डिक्री के माध्यम से पक्षकारों के बीच विवाह के विघटन के लिए एक अर्जी संस्थित की थी । पक्षकारों के बीच विवाह, हिन्दू रीति-रिवाजों और प्रथाओं के अनुसार, तारीख 10 फरवरी, 2000 को हुआ था । अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी और अपनी सास के साथ दुर्व्यवहार करना आरम्भ कर दिया था । वह प्रत्यर्थी की माता को पीटती थी । वह प्रत्यर्थी के पिता के विरुद्ध गाली-गलौज करती थी । मामले की रिपोर्ट ग्राम पंचायत, जोल सपर और पुलिस थाना, नादौन को भी की गई थी । प्रत्यर्थी के पिता ने भी प्रत्यर्थी के साथ अपीलार्थी के समक्ष एक शिकायत भी दर्ज कराई थी । अपीलार्थी ने भी प्रत्यर्थी और उसके माता-पिता के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 498क/34 के अधीन एक परिवाद फाइल की थी । उसने, उसे (प्रत्यर्थी) को अक्तूबर,

2001 में त्यक्त कर दिया था । अपीलार्थी द्वारा अर्जी का विरोध किया गया । उत्तर में अन्तर्विष्ट प्रकथनों के अनुसार, उसने प्रत्यर्थी या उसके कुटुम्ब सदस्यों के साथ कोई दुर्व्यवहार नहीं किया है । वह प्रत्यर्थी के साथ रहने को तैयार और रजामंद थी । प्रत्यर्थी द्वारा प्रत्युत्तर फाइल किया गया था ।

- 3. विद्वान् न्यायालय द्वारा तारीख 5 जनवरी, 2005 को विवाद्यक विरचित किए गए थे । अर्जी, तारीख 31 मई, 2008 को मंजूर कर ली गई थी । अतएव, यह अपील फाइल की गई है ।
- 4. श्री आनन्द शर्मा, अधिवक्ता ने यह जोखार तर्क दिया है कि उसकी मुवक्किल ने कभी भी प्रत्यर्थी के साथ शारीरिक या मानसिक क्रूरता कारित नहीं की है न ही उसकी मुवक्किल ने बिना युक्तियुक्त कारण के प्रत्यर्थी का त्यजन किया है।
- 5. मैंने, अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल को सुना और अभिलेख तथा निर्णय का ध्यानपूर्वक परिशीलन किया ।
- 6. प्रत्यर्थी, अभि. सा. 1 के रूप में उपस्थित हुआ । उसके अनुसार, अपीलार्थी, उसके माता-पिता से झगड़ा करती थी और उनको पीटती थी । उसने स्वयं अपनी इच्छा से वैवाहिक गृह छोड़ा था । मामले की रिपोर्ट पुलिस थाने में की गई थी । अपीलार्थी ने उसके और उसके कुटुम्ब सदस्यों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 498क के अधीन एक परिवाद फाइल किया था । उसे, पुलिस द्वारा गिरफ्तार किया गया था । अपनी प्रतिपरीक्षा में उसने यह स्वीकार किया कि पूर्व में भी उसने विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल की थी । इसे वापस ले लिया गया था तथापि, परिस्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ ।
- 7. अभि. सा. 2 रणजीत ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि अपीलार्थी प्रत्यर्थी और उसके माता-पिता के साथ झगड़ा और गाली-गलौज करती थी ।
- 8. अभि. सा. 3, प्रत्यर्थी का पिता है और उसने भी प्रत्यर्थी और अपने कुटुम्ब सदस्यों के साथ अपीलार्थी के दुर्व्यवहार के बारे में अभिसाक्ष्य दिया है । अपीलार्थी अपनी सास को पीटती थी । मामले की रिपोर्ट, चिह्न "ए" और चिह्न "बी" के माध्यम से पुलिस में की गई थी । एक शिकायत भी भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 498क के अधीन प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्यों के विरुद्ध पुलिस में दर्ज कराई गई थी । उसने अपीलार्थी को एक पृथक् आवास उपलब्ध कराया था किन्तु वह वहां भी नहीं रही ।

- 9. प्रत्यर्थी, प्रत्यर्थी साक्षी 1 के रूप में उपस्थित हुआ । उसके अनुसार, प्रत्यर्थी के माता-पिता उस पर समुचित रूप से विश्वास नहीं करते थे । उसे गौशाला में रहने के लिए दबाव डाला जाता था । उसने स्वयं द्वारा अपनी सास को पीटने से इनकार किया । तथापि, उसने यह स्वीकार किया कि भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 498क के अधीन एक मामला, प्रत्यर्थी और उसके माता-पिता के विरुद्ध रिजस्ट्रीकृत कराई गई थी । उसने यह सुस्पष्टतः, स्वीकार किया कि प्रत्यर्थी न तो उसे पीटता था न ही किसी भी समय उसके माता-पिता से दहेज की मांग की । उसने यह भी स्वीकार किया कि प्रत्यर्थी ने उसके विरुद्ध महिला आयोग के समक्ष एक शिकायत फाइल की थी ।
- 10. बियासन देवी, प्रत्यर्थी साक्षी 2, अपीलार्थी की माता है । उसके अनुसार, अपीलार्थी प्रत्यर्थी के साथ गर्भावस्था के समय पर अपने मायके आई थी । वह वापस प्रत्यर्थी के घर चली गई थी । अपनी प्रतिपरीक्षा में, उसने यह स्वीकार किया कि अपीलार्थी ने किसी दुर्व्यवहार के बारे में प्रत्यर्थी या उसके माता-पिता के संबंध में कभी भी कोई शिकायत नहीं की थी ।
- 11. अभिलेख पर की सामग्रियों से यह निष्कर्ष निकलता है कि अपीलार्थी ने भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 498क के अधीन प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्यों के विरुद्ध एक परिवाद फाइल किया था प्रत्यर्थी गिरफ्तार हुआ था । अपीलार्थी भी प्रत्यर्थी की माता को पीटती थी । तारीख 4 अगस्त, 2002 के रपट रोजनामचा की प्रति प्रदर्श पी. ए. है । प्रत्यर्थी महिला आयोग में भी जाने के लिए बाध्य हुआ था । अपीलार्थी ने यह स्वीकार किया कि न तो प्रत्यर्थी न ही उसके कुट्म्ब के सदस्य उसके माता-पिता से दहेज की कभी भी मांग नहीं की थी । उसे प्रत्यर्थी द्वारा पीटा नहीं गया था । अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी को यह धमकी दी थी कि वह कुछ जहरीला पदार्थ खाकर आत्महत्या कर लेगी । प्रत्यर्थी ने पूर्व में एक विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल की थी । मामले में समझौता हो गया था । तथापि, परिस्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ, अतएव, प्रत्यर्थी, विवाह-विच्छेद की डिक्री की ईप्सा करते हुए, अपीलार्थी के विरुद्ध नई अर्जी फाइल करने के लिए बाध्य हुआ । अपीलार्थी ने बिना किसी युक्तियुक्त कारण के प्रत्यर्थी का साथ छोड़ दिया । प्रत्यर्थी के साथ ही प्रत्यर्थी के माता-पिता के कथन में यह आया है कि अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी का साथ छोड़ दिया था । अपीलार्थी द्वारा प्रत्यर्थी और उसके कुटुम्ब सदस्यों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 498क के अधीन परिवाद, उसके विरुद्ध प्रत्यर्थी

द्वारा विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल करने के पश्चात् ही फाइल की गई थी । इसमें उपर्युक्त वर्णित तथ्यों से सुनिश्चित तौर पर प्रत्यर्थी के विरुद्ध मानसिक और शारीरिक क्रूरता कारित होती है । अपीलार्थी बिना किसी युक्तियुक्त कारण के, जैसा कि इसमें उपर्युक्त उल्लिखित है, प्रत्यर्थी का त्यजन कर दिया था ।

12. समर घोष बनाम जया घोष¹ वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों ने मानवीय व्यवहार के कुछ उद्धरण वर्णित किए हैं जो मानसिक क्रूरता के मामलों में विचार करने के लिए महत्वपूर्ण हो सकते हैं, जो निम्नलिखित हैं:—

"98. इस न्यायालय और अन्य न्यायालयों के निर्णयों का उचित मूल्यांकन और संवीक्षा करने पर हमारा यह निश्चित निष्कर्ष है कि मानसिक क्रूरता की संकल्पना की कोई व्यापक परिभाषा नहीं दी जा सकती जिसमें मानसिक क्रूरता के सभी प्रकार के मामलों को समाविष्ट किया जा सके । हमारे सुविचारित मत में किसी न्यायालय को मानसिक क्रूरता की व्यापक परिभाषा देने का प्रयास भी नहीं करना चाहिए ।

99. मानव चित्त अत्यंत ही जटिलपूर्ण है और मानवीय आचरण भी समान रूप से जटिल है । इसी भांति मानवीय पटुता की भी कोई सीमा नहीं है । इसलिए सम्पूर्ण मानवीय व्यवहार/आचरण को एक परिभाषा में समाविष्ट करना लगभग असंभव है । ऐसे मामले में जो बात क्रूरता है वह अन्य मामले में क्रूरता नहीं भी हो सकती । क्रूरता की संकल्पना व्यक्ति-दर-व्यक्ति, उनकी पृष्ठभूमि पर आधारित होते हुए भिन्न होती है और यह उनके सोचने समझने की शक्ति, शैक्षिक, पारिवारिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, वित्तीय स्थिति, सामाजिक प्रास्थिति, रीति-रिवाज, रूढ़ियों, धार्मिक विश्वास, मानवीय मूल्यों और उनके स्वयं की मूल्यांकन प्रणाली/पद्धति पर आधारित होते हुए भिन्न होती है ।

100. इसके अलावा मानिसक क्रूरता की संकल्पना एक समान नहीं रह सकती; यह समय के व्यतीत होने के साथ परिवर्तित होती है और आधुनिक प्रकाशन और इलैक्ट्रानिक मीडिया तथा मूल्यांकन पद्धित के माध्यम से आधुनिक सभ्यता के प्रभाव इत्यादि के अनुसार

=

¹ [2008] 3 उम. नि. प. 23 = (2007) 4 एस. सी. सी. 511.

भी परिवर्तनशील होती है । वर्तमान में जो बात मानसिक क्रूरता गठित करती है वे समय के व्यतीत होने के पश्चात् मानसिक क्रूरता नहीं भी हो सकती हैं । वैवाहिक विषयों में मानसिक क्रूरता का अवधारण करने के लिए कोई निश्चित फार्मूला या निश्चित कसौटी कभी भी नहीं हो सकती । मामले का न्यायनिर्णयन करने के लिए प्रज्ञायुक्त और उचित रास्ता यह होगा कि उपर्युक्त वर्णित पहलुओं को विचार में लेते हुए विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर मामले का मूल्यांकन किया जाए ।

- 101. मार्गदर्शन के लिए कभी भी कोई एकरूपीय कसौटी अधिकथित नहीं की जा सकती है। तब भी हम मानवीय आचरण के कुछ उदाहरणों का उल्लेख करना उपयुक्त समझते हैं जो मानवीय क्रूरता के मामले पर चर्चा करते समय सुसंगत हो सकते हैं। निम्न पैराओं में इंगित किए गए उदाहरण केवल दृष्टांतस्वरूप हैं और न कि नि:शेषकारी
 - (i) पक्षकारों के सम्पूर्ण वैवाहिक जीवन पर विचार करने पर अत्यंत मानसिक पीड़ा, दुख और वेदना, जिसके कारण पक्षकारों का एक दूसरे के साथ रहना संभव नहीं हो पाएगा । यह मानसिक क्रूरता की व्यापक परिधि के भीतर आएगा ।
 - (ii) पक्षकारों के सम्पूर्ण वैवाहिक जीवन का व्यापक रूप से मूल्यांकन करने पर यदि यह प्रचुर रूप से स्पष्ट हो जाता है कि स्थिति ऐसी है कि दुखी किए गए पक्षकार से अन्य पक्षकार के ऐसे आचरण को सहने के लिए और उसके साथ सतत रूप से जीवनयापन करने के लिए नहीं कहा जा सकता है।
 - (iii) मात्र ठंडापन या प्यार की कमी से क्रूरता गठित नहीं हो सकती । भाषा में प्रायः रूखापन/कठोरता, विरत भाव दर्शित करना, टीका-टिप्पणी करना, एक ऐसी कोटि के हो सकते हैं जिनके कारण अन्य पक्षकार (पति/पत्नी) के लिए वैवाहिक जीवन पूर्णरूप से असहनीय बन जाए ।
 - (iv) मानसिक क्रूरता चित्त की एक स्थिति है । गहन वेदना, असंतोष, अन्य पति/पत्नी के आचरण से दूसरे पक्षकार को नैराश्य जो लंबी अवधि तक हो, की भावना मानसिक क्रूरता गठित करती है ।

- (v) गाली-गलौज और अपमानकारी व्यवहार का अनवरत रूप से जारी रहना जिससे अन्य पक्षकार को यंत्रणा/असंतोष या जीवन दुःखदपूर्ण हो जाए, यह भी मानसिक क्रूरता गठित करता है।
- (vi) पित/पत्नी का अनवरत अनुचित आचरण और व्यवहार जो वस्तुतः अन्य पक्षकार के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करता हो । पिरवाद किए गए व्यवहार और उसके पिरणामस्वरूप पहुंचा खतरा या आशंका अत्यंत ही घोर और प्रबल होनी चाहिए ।
- (vii) अनवरत भयाक्रांत आचरण, नितांत अनदेखी करना या वैवाहिक दयालुता के सामान्य स्तर से पूर्णतया विचलन करना जिसके कारण दूसरे पक्षकार के मानसिक स्वास्थ्य को क्षति पहुंचती हो या उससे त्रुटि करने वाले पक्षकार को अत्यधिक आत्मिक सुख मिलता हो, यह मानसिक क्रूरता गठित करते हैं।
- (viii) आचरण ऐसा होना चाहिए जो ईर्ष्या, स्वार्थता आधिपत्यता से अत्यंत अधिक हो अन्यथा दुख, असंतोष और भावनात्मक रूप से चोट पहुंचाना मानसिक क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद प्रदान किए जाने के लिए आधार नहीं हो सकते।
- (ix) मात्र छोटी-मोटी कहा-सुनी, झगड़े वैवाहिक जीवन के सामान्य झगड़े जो दिन-प्रतिदिन के जीवन में घटित होते हैं, मानसिक क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद किए जाने के लिए पर्याप्त नहीं होंगे।
- (x) सम्पूर्ण वैवाहिक जीनव का पुनर्विलोकन किया जाना चाहिए और अनेक वर्षों के दौरान के कुछ एकल उदाहरण क्रूरता गठित नहीं कर सकेंगे । दुर्व्यवहार ऋजुतापूर्वक एक लंबी अविध तक जारी रहना चाहिए, जिसके दौरान उनके (पिति/पत्नी) संबंध इस सीमा तक खराब हो गए हों कि एक पित/पत्नी के कृत्यों और आचरण के कारण व्यथित पक्षकार उसके साथ और अधिक रहना अत्यंत ही कठिन पाता हो, यह मानसिक क्रूरता गठित कर सकेगा ।
 - (xi) यदि पति बिना किसी चिकित्सीय कारण के और

अपनी पत्नी की सम्मित या उसकी जानकारी के बिना अपना नसबंदी का आपरेशन कराता है और यदि पत्नी बिना किसी चिकित्सीय कारण के या अपनी पित की सम्मित या जानकारी के बिना गर्भपात या नसबंदी कराती है तब पित/पत्नी का यह कृत्य मानिसक क्रूरता गठित करेगा।

- (xii) पति/पत्नी का एकपक्षीय रूप से बिना किसी शारीरिक अक्षमता या विधिमान्य कारण के एक पर्याप्त अवधि तक दूसरे पक्षकार के साथ संभोग करने से इनकार करने का एकपक्षीय विनिश्चय भी मानसिक क्रूरता गठित करेगा।
- (xiii) पति या पत्नी का विवाह के पश्चात् यह एकपक्षीय विनिश्चय करना कि वह विवाहोपरान्त कोई बच्चा पैदा नहीं करेगा यह भी मानसिक क्रूरता गठित करेगा ।
- (xiv) जहां एक लंबी सतत अवधि तक पित/पत्नी अलग रह रहे हैं वहां यह ऋजुतापूर्वक निष्कर्ष निकाला जा सकेगा कि उनके बीच वैवाहिक संबंध सुधार के परे हैं । विवाह नाममात्र का रह जाता है यद्यपि यह विधिक बंधन के अधीन रहता है । ऐसे मामले में विधि द्वारा ऐसे बंधन को तोड़ने से इनकार करने से विवाह का कोई प्रयोजन पूरा नहीं होता । इसके प्रतिकूल यह पक्षकारों की भावनाओं के प्रति अत्यंत ही अनादर दर्शित करता है । ऐसी समरूप स्थितियों में यह मानसिक क्रूरता गठित करेगा।"
- 13. **मनीषा त्यागी** बनाम **दीपक कुमार** वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों ने "क्रूरता" को निम्नलिखित निबंधनों में स्पष्टीकृत किया है:—

"24. अब यह मानक अपेक्षित नहीं रह गया है । अब यह दर्शित करना पर्याप्त होता है कि पित/पत्नी में से किसी एक का आचरण इतना असामान्य है और स्वीकृत मानकों से निम्न है कि अन्य पित/पत्नी, दूसरे के साथ युक्तियुक्त तरीके से रहने की प्रत्याशा नहीं कर सकते हैं । अब आचरण इतना नृशंस रूप से घृणित होना अपेक्षित नहीं है जिससे युक्तियुक्त रूप से यह आशंका कारित होती हो कि अन्य पित/पत्नी के साथ निरन्तर सहवास करना कष्टदायक

¹ (2010) 1 एस. एस. सी. (विवाह-विच्छेद और वैवाहिक मामले) 451.

होगा । इसलिए, क्रूरता सिद्ध करने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि शारीरिक हिंसा कारित की जानी चाहिए । तथापि, निरन्तर दुर्व्यवहार से वैवाहिक सहवास की समाप्ति, पति/पत्नी में से एक की उपेक्षा, मतभेद से क्रूरता का निष्कर्ष निकाला जा सकता है । तथापि, इस मामले में भी, दोनों विचारण न्यायालय और अपील न्यायालय ने पूर्वोक्त मानकों को स्वीकार किया था कि पत्नी का आचरण इस प्रकृति का नहीं है जिससे कि यह क्रूरता की कोटि में आए जो कि पति को विवाह-विच्छेद की डिक्री प्राप्त करने के लिए समर्थ बना सके।

14. विपिनचन्द्रा जयसिंहवाई शाह बनाम प्रभावती वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों ने यह अभिनिर्धारित किया है कि अभित्यजन को साबित करने के लिए दो आवश्यक शर्तें होनी चाहिएं, (1) पृथक्करण का तथ्य और (2) अस्थायी तौर पर सहवास करने के आशय का अंत (अभित्यजन का आशय) । माननीय न्यायाधीशों ने यह अभिनिर्धारित किया कि अभित्यजन का निष्कर्ष, प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से निकाला जाना चाहिए । माननीय न्यायाधीशों ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:—

"अभित्यजन क्या है ? 'रेडन आन डाइवोर्स' जिसमें इसके पैरा 128 (छठा संस्करण) पर इस विषय पर मानक कार्य किया गया है जिसमें इन निबंधनों के अध्यधीन निर्णयज विधि का संक्षिप्त रूप से वर्णन किया गया है –

'अभित्यजन, पित/पत्नी में से एक का अन्य से पृथक्करण, जिसमें अभित्यजन करने वाले पित/पत्नी की ओर से बिना किसी युक्तियुक्त कारण के और अन्य पित/पत्नी की सहमित के बिना स्थायी तौर पर सहवास नहीं करने का आशय सिम्मिलित है, किन्तु, पित/पत्नी में से एक के द्वारा अभित्यजन करने वाले पित/पत्नी के विरुद्ध आवश्यक रूप से शारीरिक कृत्य सिम्मिलित नहीं है।'

हाल्सबरी के लाज आफ इंग्लैंड (तृतीय संस्करण) खंड 12, पैरा 453 और 454, पृष्ठ 241 से 243 में विधिक प्रास्थिति को उत्तम रूप से निम्नलिखित शब्दों में वर्णित किया गया है —

-

¹ ए. आई. आर. 1957 एस. सी. 176.

'सारतः, अभित्यजन का अभिप्राय पति/पत्नी में से किसी एक के द्वारा अन्य की सहमति के बिना और बिना युक्तियुक्त कारण के दूसरे का स्थायी तौर पर त्यक्त करने का आशय है । यह विवाह की बाध्यताओं का पूर्णतः परित्याग है । परिस्थितियों की बड़े पैमाने पर भिन्नता और जीवन में अन्तर्निहित तरीकों को ध्यान में रखते हुए, न्यायालय, अभित्यजन को परिभाषित करने के लिए निराशाजनक प्रयास किया है, सभी मामलों में, कोई साधारण सिद्धांत लाग् होने योग्य नहीं होते हैं । अभित्यजन, एक स्थान से वापस होना नहीं है अपित्, विचारों की दशा से, जिसके लिए विधि वैवाहिक दशा की सामान्य बाध्यताओं की मान्यता और निर्वहन को प्रवर्तित कराने की ईप्सा करता है विचारों की दशा प्रायिक तौर पर निबंधित की जा सकती है जिसके लिए गृह होता है । अभित्यजन, पक्षकारों द्वारा पूर्व सहवास के बिना या विवाह की पूर्णता हुए बिना हो सकता है। व्यक्ति जो वास्तविक तौर पर सहवास नहीं करता है, आवश्यक रूप से अभित्यजन होने वाला पक्षकार नहीं होता है । यह तथ्य कि पति ने पत्नी को यह घोषित किया है कि वह अभित्यक्त है. यह अभित्यजन के आरोप का उत्तर नहीं है।

अभित्यजन का अपराध आचरण का एक अनुक्रम है जो अपनी अवधि में स्वतंत्र रूप से मौजूद रहता है किन्तु, विवाह-विच्छेद के लिए एक आधार के रूप में इसे अर्जी प्रस्तुत करने के तत्काल पूर्व कम-से-कम तीन वर्षों की अवधि के लिए मौजूद रहना चाहिए जहां अपराध उत्तर का प्रति-आरोप प्रतीत होता है । अभित्यजन, विवाह-विच्छेद के आधार के रूप में उस अपराध में जारता और क्रूरता के कानूनी आधारों से भिन्न होता है जो अभित्यजन के वाद हेत्क के आधारों को पूर्ण नहीं करता है किन्तु यह अपूर्ण होता है जब तक कि वाद संस्थित नहीं कर दिया जाता है । अभित्यजन एक निरन्तर अपराध है । इस प्रकार, निरन्तरता की गुणवत्ता आवश्यक अवयवों में से एक है जो जानबुझकर पृथक्करण से भिन्न करता है । यदि पति-पत्नी में से कोई भी अस्थायी मनोदशा में दूसरे का त्यजन करता है, उदाहरण के लिए क्रोध या घृणा के कारण, सहवास रोकने के अस्थायी आशय के बिना तो यह अभित्यजन की कोटि में नहीं आएगा । अभित्यजन के अपराध के लिए, जहां तक यह

अभित्यजन करने वाले पति या पत्नी का संबंध है, दो आवश्यक शर्तें अवश्य होनी चाहिएं, अर्थात (1) पृथक्करण का तथ्य और (2) अस्थायी तौर पर सहवास करने के आशय का अंत (अभित्यजन करने का आशय) । इसी प्रकार, दो अवयव आवश्यक हैं, जहां तक कि अभित्यजन होने वाले पति या पत्नी का संबंध है, (1) सहमति का अभाव और (2) पूर्वोक्त आवश्यक आशय से वैवाहिक गृह छोड़ते हुए पति या पत्नी की ओर से युक्तियुक्त कारण देते हुए आचरण का अभाव । विवाह-विच्छेद की अर्जी के लिए क्रमशः दोनों पति या पत्नी पर उन दोनों अवयवों को साबित करने का भार होता है । यहां इंग्लिश विधि और बाम्बे विधान-मंडल द्वारा अधिनियमित विधि के बीच भिन्न इंगित किया जा सकता है । जबकि इंग्लिश विधि के अधीन उन दोनों आवश्यक शर्तों का विवाह-विच्छेद का वाद संस्थित करने के तत्काल तीनों वर्षों के दौरान निरन्तर बने रहना आवश्यक होता है जबकि अधिनियम के अधीन बिना यह विनिर्दिष्ट किए कि चार वर्षों की अवधि विवाह-विच्छेद के लिए कार्यवाहियां आरम्भ होने के तत्काल पूर्व होनी चाहिए । क्या अंतिम खंड का लोप कोई व्यवहारिक परिणाम दे सकता है, पर मुझे विचार करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि यह वर्तमान मामले के विनिश्चय में लागू नहीं होता है । अभित्यजन का निष्कर्ष प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से निकाला जा सकता है । कतिपय तथ्यों से निष्कर्ष निकाला जा सकता है जो अन्य मामले में इसी प्रकार के निष्कर्ष निकालने के लिए समर्थ नहीं होता है अर्थात यह कह सकते हैं कि तथ्यों को उस दृष्टि से देखना चाहिए जैसा कि प्रयोजन हो जो कि उन कार्यों या आचरण और आशय की अभिव्यक्ति द्वारा प्रकट होता हो, जो पृथक्करण के वास्तविक कृत्यों के दोनों पूर्ववर्ती या पश्चातवर्ती हो सकते हैं । यदि वस्तुतः पृथक्करण हुआ है तो हमेशा ही यह आवश्यक प्रश्न होता है कि क्या उक्त कृत्य अभित्यजन करने के आशय में भागीदार हो सकता है । अभित्यजन का अपराध तब आरम्भ होता है, जब पृथक्करण का तथ्य और अभित्यजन करने का आशय सहवर्ती होते हैं । किन्तू, यह आवश्यक नहीं है कि वे एक ही समय पर आरम्भ होने चाहिएं । वस्तुतः, पृथक्करण आवश्यक आशय के बिना आरम्भ हो सकता है अथवा यह हो सकता है कि पृथक्करण और अभित्यजन करने

का आशय एक ही समय पर एक साथ आरम्भ हो, उदाहरण के लिए जब पुथक्करण होने वाले पति या पत्नी का स्थायी तौर पर सहवास समाप्त करने का अभिव्यक्त या विवक्षित आशय से वैवाहिक गृह त्यक्त करते हैं । इंग्लिश विधि में, तीन वर्षों की अवधि विहित की गई है और बाम्बे अधिनियम में चार वर्षों की अवधि विहित की गई है जो निरन्तर उस अवधि के दौरान होनी चाहिए जब दो अवयव अस्तित्व में हों । अतएव, यदि अभित्यजन होने वाले पति या पत्नी अपराध से मुख मोड़ने के अवसर का लाभ लेते हैं जैसा कि विधि द्वारा उपबंधित हैं और अभित्यक्त पति या पत्नी कानुनी अवधि के बीतने के पूर्व या उस अवधि के व्यतीत होने के पश्चात भी, जब तक कि विवाह-विच्छेद के लिए कार्यवाहियां आरम्भ नहीं की गईं हैं, तो वैवाहिक जीवन के सभी कर्तव्यों का निर्वहन करते हुए, वैवाहिक गृह में वापस आने के लिए सद्भाविक प्रस्तावना करते हुए, विनिश्चय लिया जाता है तो अभित्यजन का अंत हो जाता है और यदि अभित्यक्त पति या पत्नी अयुक्तियुक्त तौर पर ऐसी प्रस्तावना से इनकार करते हैं तो बाद में अभित्यजन हो सकता है न कि उसके पूर्व । अतएव, यह आवश्यक है कि सम्पूर्ण अवधि के दौरान अभित्यजन किया गया हो, अभित्यक्त पति या पत्नी को विवाह की पृष्टि करनी चाहिए और ऐसी शर्तों पर, जो युक्तियुक्त हों, वैवाहिक जीवन पुनः स्थापित करने के लिए तैयार और रजामन्द होना चाहिए । यह भी सुस्थिर है कि विवाह-विच्छेद की कार्यवाहियों में वादी को अभित्यजन और इसी प्रकार के अन्य वैवाहिक अपराध को सभी युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करना चाहिए । अतएव, यद्यपि संपुष्टि अपेक्षित नहीं है क्योंकि यह सम्पूर्ण विधि है कि न्यायालयों को संपृष्टिकारक साक्ष्यों पर जोर देना चाहिए जब तक कि न्यायालय का इस एवज में समाधान नहीं हो जाए । इस संबंध में, मुख्य न्यायाधीश लार्ड गार्ड ने लासन बनाम लासन (1955-1 इलाहाबाद ई. आर. 341, पृष्ठ 342) में निम्नलिखित मत व्यक्त किया है –

'ये मामले, ऐसे मामले नहीं हैं जिनमें विधि के अनुसार संपुष्टि अपेक्षित हैं । इनमें सावधानी की दृष्टि अपेक्षित होती है।'

इन प्रारम्भिक मताभिव्यक्तियों के साथ, हम अब पक्षकारों

की ओर से प्रस्तुत साक्ष्यों की परीक्षा करेंगे, यह निष्कर्ष निकालने के लिए कि क्या अभित्यजन, इस मामले में साबित हो गया है और यदि ऐसा है तो क्या पत्नी की ओर से वैवाहिक कर्तव्यों का निर्वहन करने के साथ वैवाहिक गृह में वापस आने के लिए पत्नी द्वारा सद्भाविक प्रस्थापना की गई है और यदि ऐसा हो तो क्या पति द्वारा उसे वापस लेने के लिए अयुक्तियुक्त तौर पर इनकार किया गया है।""

- 15. जगदीश सिंह बनाम माध्री देवी वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों ने यह अभिनिर्धारित किया है कि अपील न्यायालय को विचारण न्यायालय के निष्कर्षों को उलटने के पूर्व निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए :-
 - "(i) विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए कारणों में अपना विवेक लागू किया गया है,
 - (ii) साक्षियों को देखने और सुनने में कोई लाभ नहीं उठाया है, और
 - (iii) विचारण न्यायालय से असहमत होने के लिए, इसके अभिलेख तर्कपूर्ण और विश्वसनीय हैं।"
- 16. विद्वान निचले न्यायालय ने अभिलेख पर के मौखिक के साथ ही दस्तावेजी साक्ष्यों का सही मूल्यांकन किया है।
- 17. इसमें उपर्युक्त की गई चर्चा और विश्लेषण को ध्यान में रखते हुए, इस अपील में कोई गुणागुण नहीं है और इसे खारिज किया जाता है। लम्बित आवेदन/आवेदनों, यदि कोई हैं, को भी निपटाया जाता है। खर्चे का कोई आदेश नहीं किया जाता है।

अपील खारिज की गई ।

क.

¹ (2008) 10 एस. सी. सी. 497.

संसद् के अधिनियम

योजना और वास्तुकला विद्यालय अधिनियम, 2014 (2014 का अधिनियम संख्यांक 37)

[18 दिसंबर, **2014**]

वास्तुकला अध्ययनों में, जिनमें मानव उपनिवेशों की योजना भी है, शिक्षा और अनुसंधान को प्रोन्नत करने के लिए योजना और वास्तुकला विद्यालयों को स्थापित करने और उन्हें राष्ट्रीय महत्व की संस्थाओं के रूप में घोषित करने के लिए अधिनियम

भारत गणराज्य के पैंसठवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :

अध्याय 1

प्रारंभिक

- 1. संक्षिप्त नाम और प्रारंभ (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम योजना और वास्तुकला विद्यालय अधिनियम, 2014 है ।
- (2) यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा, जो केन्द्रीय सरकार राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियत करे और इस अधिनियम के भिन्न-भिन्न उपबंधों के लिए भिन्न-भिन्न तारीखें नियत की जा सकेंगी और किसी ऐसे उपबंध में इस अधिनियम के प्रारंभ के प्रति किसी निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह उस उपबंध के प्रारंभ होने के प्रति निर्देश है।
- 2. कतिपय विद्यालयों की राष्ट्रीय महत्व की संस्थाओं के रूप में घोषणा अनुसूची में वर्णित विद्यालयों के उद्देश्य इस प्रकार के हैं जो उन्हें राष्ट्रीय महत्व की संस्थाएं बनाते हैं, अतः यह घोषित किया जाता है कि ऐसा प्रत्येक विद्यालय राष्ट्रीय महत्व की संस्था है।
- 3. परिभाषाएं इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो.—
 - (क) "बोर्ड" से, किसी विद्यालय के संबंध में, उसका शासक बोर्ड अभिप्रेत है ;
 - (ख) "अध्यक्ष" से बोर्ड का अध्यक्ष अभिप्रेत है ;

- (ग) "तत्समान विद्यालय" से, अनुसूची के स्तंभ (3) में वर्णित किसी विद्यालय के संबंध में, अनुसूची के स्तंभ (5) में उक्त विद्यालय के सामने यथा विनिर्दिष्ट विद्यालय अभिप्रेत है;
- (घ) "परिषद्" से धारा 33 की उपधारा (1) के अधीन स्थापित परिषद् अभिप्रेत है ;
- (ङ) "निदेशक" से किसी विद्यालय के संबंध में, उसका निदेशक अभिप्रेत है :
- (च) "विद्यमान विद्यालय" से अनुसूची के स्तंभ (3) के अधीन वर्णित विद्यालय अभिप्रेत है ;
- (छ) "सदस्य" से बोर्ड का कोई सदस्य अभिप्रेत है और उसके अन्तर्गत अध्यक्ष भी है ;
- (ज) "अधिसूचना" से राजपत्र में प्रकाशित कोई अधिसूचना अभिप्रेत है और "अधिसूचित करना" पद का तदनुसार उसके व्याकरणिक रूपभेदों और सजातीय पदों सहित अर्थ लगाया जाएगा ;
- (झ) "विहित" से इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है :
- (ञ) "कुल सचिव" से, किसी विद्यालय के संबंध में, उसका कुल-सचिव अभिप्रेत है ;
- (ट) "अनुसूची" से इस अधिनियम के साथ उपाबद्ध अनुसूची अभिप्रेत है:
- (ठ) "विद्यालय" से अनुसूची के स्तंभ (5) में वर्णित विद्यालयों में से कोई भी विद्यालय और इस अधिनियम के अधीन स्थापित ऐसे अन्य विद्यालय अभिप्रेत हैं:
- (ड) "सिनेट" से, किसी विद्यालय के संबंध में, उसकी सिनेट अभिप्रेत है :
- (ढ) "सोसाइटी" से सोसाइटी रिजस्ट्रीकरण अधिनियम, 1860 (1860 का 21) के अधीन या संबंधित राज्य सरकारों के अधीन रिजस्ट्रीकृत और अनुसूची के स्तंभ (3) में वर्णित सोसाइटियों में से कोई सोसाइटी अभिप्रेत है;

(ण) "परिनियम" और "अध्यादेश" से, किसी विद्यालय के संबंध में, इस अधिनियम के अधीन बनाए गए उस विद्यालय के परिनियम और अध्यादेश अभिप्रेत हैं।

अध्याय 2

विद्यालय

- 4. विद्यालयों की स्थापना और निगमन इस अधिनियम के प्रारंभ की तारीख से ही, अनुसूची के स्तंभ (3) में विनिर्दिष्ट विद्यालय निगमित निकाय होंगे, जिनका शाश्वत उत्तराधिकार होगा और एक सामान्य मुद्रा होगी और उन्हें इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए जंगम तथा स्थावर दोनों प्रकार की संपत्ति का अर्जन करने, उसे धारण करने तथा उसका व्ययन करने की और संविदा करने की शक्ति होगी तथा वे अनुसूची के स्तंभ (5) में वर्णित अपने-अपने नामों से वाद लाएंगे या उन पर वाद लाया जाएगा।
- 5. विद्यालय के उद्देश्य प्रत्येक विद्यालय के निम्नलिखित उद्देश्य होंगे, अर्थात् :—
 - (i) योजना और वास्तुकला विद्यालय की स्थापना और विकास का समर्थन करना ;
 - (ii) वास्तुकला, योजना और सहबद्ध क्षेत्रों में सार्वभौमिक नेतृत्व प्रदान करना ।
- 6. विद्यालयों के निगमन का प्रभाव इस अधिनियम के प्रारंभ से ही,—
 - (क) किसी संविदा या अन्य लिखत में किसी विद्यमान विद्यालय के प्रति किसी निर्देश के बारे में यह समझा जाएगा कि वह तत्समान विद्यालय के प्रति निर्देश है ;
 - (ख) प्रत्येक विद्यमान विद्यालय की या उससे संबद्ध सभी जंगम और स्थावर संपत्तियां अनुसूची के स्तंभ (5) के अधीन वर्णित तत्समान विद्यालय में निहित हो जाएंगी;
 - (ग) प्रत्येक विद्यमान विद्यालय के सभी अधिकार, ऋण तथा अन्य दायित्व तत्समान विद्यालय को अंतरित हो जाएंगी और उसके अधिकार और दायित्व हो जाएंगे :

(घ) प्रत्येक विद्यमान द्वारा नियोजित प्रत्येक व्यक्ति अपना पद या सेवा तत्समय विद्यालय में उसी सेवाधृति सहित, उसी पारिश्रमिक पर और उन्हीं निबंधनों और शर्तों पर तथा पेंशन, छुट्टी, उपदान, भविष्य निधि और अन्य मामलों के संबंध में उन्हीं अधिकारों और विशेषाधिकारों पर धारण करेगा जैसे कि वह उस दशा धारण करता यदि यह अधिनियम अधिनियमित नहीं किया गया होता और तब तक ऐसा पद धारण करता रहेगा जब तक कि उसका नियोजन समाप्त नहीं कर दिया जाता है या जब तक ऐसी सेवाधृति, पारिश्रमिक तथा निबंधनों और शर्तों को परिनियमों द्वारा सम्यक् रूप से परिवर्तित नहीं कर दिया जाता है:

परन्तु यदि इस प्रकार किया गया परिवर्तन ऐसे कर्मचारी को स्वीकार्य नहीं है तो उसके नियोजन को विद्यालय द्वारा कर्मचारी के साथ की गई संविदा के निबंधनों के अनुसार या यदि उसमें इस निमित्त कोई उपबंध नहीं किया हो तो विद्यालय द्वारा स्थायी कर्मचारियों की दशा में तीन मास के पारिश्रमिक के बराबर और अन्य कर्मचारियों की दशा में एक मास के पारिश्रमिक के बराबर उसे प्रतिकर देकर समाप्त किया जा सकेगा:

परन्तु यह और कि तत्समय प्रवृत्त किसी विधि में या किसी लिखत या अन्य दस्तावेज में किसी विद्यमान विद्यालय के निदेशक, कुल-सचिव और अन्य अधिकारियों के प्रति, किन्हीं भी शब्द रूपों द्वारा, किए गए किसी निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह तत्समान विद्यालय के निदेशक, कुल-सचिव और अन्य अधिकारियों के प्रति निर्देश है:

- (ङ) इस अधिनियम के प्रारंभ के पूर्व, प्रत्येक विद्यमान विद्यालय में कोई शिक्षण या अनुसंधान पाठ्यक्रम का अध्ययन करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को ऐसे प्रारंभ पर तत्समान विद्यालय में, उस विद्यालय से, जिससे ऐसा व्यक्ति स्थानांतिरत हुआ है, अध्ययन के उसी स्तर पर स्थानांतिरत और रिजस्ट्रीकृत किया गया समझा जाएगा;
- (च) इस अधिनियम के प्रारंभ के ठीक पूर्व किसी विद्यमान विद्यालय द्वारा या उसके विरुद्ध संस्थित या संस्थित किए जा सकने वाले सभी वाद और अन्य विधिक कार्यवाहियां तत्समान विद्यालय द्वारा या उसके विरुद्ध जारी रहेंगी या संस्थित की जाएंगी।

- 7. विद्यालय की शक्तियां और कृत्य (1) इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, प्रत्येक विद्यालय उन शक्तियों का प्रयोग और कर्तव्यों का पालन करेगा, जो नीचे विनिर्दिष्ट की गई हैं, अर्थात् :-
 - (क) वास्तुकला, योजना, डिजाइन और संबद्ध क्रियाकलापों में ऐसी रीति में, जो विद्यालय उचित समझे, जिसमें किसी अन्य विद्यालय, शिक्षा संस्था, अनुसंधान संगठन या निगमित निकाय के साथ सहयोग या सहयोजन भी है, अनुसंधान और नए खोज कार्यों का आयोजन और जिम्मा लेना :
 - (ख) परीक्षाएं आयोजित करना और डिग्रियां, डिप्लोमे, प्रमाणपत्र और अन्य डिग्रियां प्रदान करना :
 - (ग) अध्येतावृत्तियां, छात्रवृत्तियां स्थापित करना और पुरस्कार, मानव डिग्रियां या अन्य शैक्षणिक उपाधियां या अभिधान प्रदान करना :
 - (घ) फीस और अन्य प्रभार नियत करना, उनकी मांग करना और उन्हें प्राप्त करना :
 - (ड) छात्रों के निवास के लिए हालों और छात्रावासों की स्थापना करना, उनका अनुरक्षण और प्रबंध करना ;
 - (च) विद्यालय के छात्रों के निवास का पर्यवेक्षण और नियंत्रण करना तथा उनके अनुशासन को विनियमित करना तथा उनके स्वास्थ्य, सामान्य कल्याण और सांस्कृतिक तथा सामूहिक जीवन के संवर्धन की व्यवस्था करना;
 - (छ) केन्द्रीय सरकार के पूर्वानुमोदन से शैक्षणिक और अन्य पदों को अधिसूचित करना और उन पदों पर, निदेशक के पद को छोड़कर, नियुक्ति करना ;
 - (ज) किसी अन्य विद्यालय या शिक्षा संस्था में कार्यरत या विद्यालय के अनुबद्ध, अतिथि या अभ्यागत शिक्षकों के रूप में किसी उद्योग में महत्वपूर्ण अनुसंधान में लगे व्यक्तियों की ऐसे निबंधनों पर और ऐसी अविध के लिए, जो विद्यालय द्वारा विनिश्चित की जाए, नियुक्ति करना ;
 - (झ) परिनियम और अध्यादेश बनाना तथा उन्हें परिवर्तित,

उपांतरित या विखंडित करना ;

- (ञ) ऐसी अवसंरचना की स्थापना और अनुरक्षण करना जो आवश्यक हो ;
- (ट) विद्यालय के उद्देश्यों को अग्रसर करने में विद्यालय से संबद्ध या उसमें निहित किसी संपत्ति के विषय में, ऐसी रीति में, जो विद्यालय उचित समझे, संव्यवहार करना ;
- (ठ) विद्यालय की निधि का प्रबंध करना तथा सरकार से दान, अनुदान, संदान या उपकृतियां प्राप्त करना तथा, यथास्थिति, वसीयतकर्ताओं, दाताओं या अंतरकों से जंगम या स्थावर संपत्तियों की वसीयतें, संदान और अंतरण प्राप्त करना ;
- (ड) विश्व के किसी भाग में की ऐसी शैक्षणिक या अन्य संस्थाओं के साथ, जिनके पूर्णतः या भागतः वही उद्देश्य हैं जो उस विद्यालय के हैं, शिक्षकों, छात्रों और विद्वानों की अदला-बदली करके और साधारणतया ऐसी रीति में, जो उनके समान उद्देश्यों में सहायक हो, ऐसे निबंधनों पर, जो सिनेट द्वारा समय-समय पर विनिर्दिष्ट किए जाएं, सहयोग करना:
- (ढ) विद्यालय के समान उद्देश्यों की अभिवृद्धि के लिए उससे संबंधित क्षेत्रों या शाखाओं से परामर्श लेना ; और
- (ण) ऐसी सभी बातें करना जो विद्यालय के सभी या किन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिए आवश्यक, आनुषंगिक या सहायक हों।
- (2) उपधारा (1) में किसी बात के होते हुए भी, विद्यालय केन्द्रीय सरकार के पूर्वानुमोदन के बिना किसी भी स्थावर संपत्ति का किसी भी रीति में व्ययन नहीं करेगा।
- 8. विद्यालय का सभी मूलवंशों, पंथों और वर्गों के लिए खुला होना (1) प्रत्येक विद्यालय स्त्री या पुरुष सभी व्यक्तियों के लिए, चाहे वे किसी भी मूलवंश, पंथ, जाति या वर्ग, धर्म, निर्योग्यता, अधिवास, नस्ल, सामाजिक या आर्थिक पृष्टभूमि के हों, खुला रहेगा ।
- (2) किसी भी विद्यालय द्वारा किसी संपत्ति की ऐसी कोई वसीयत, संदान या अंतरण स्वीकार नहीं किया जाएगा, जिसमें परिषद् की राय में इस धारा के भाव और उद्देश्य के विपरीत शर्तें या बाध्यताएं अन्तर्वलित हैं।

- 9. विद्यालय में अध्यापन प्रत्येक विद्यालय में सभी अध्यापन कार्य इस निमित्त बनाए गए परिनियमों और अध्यादेशों के अनुसार विद्यालय द्वारा या उसके नाम से किए जाएंगे ।
- 10. विद्यालय का एक अलाभार्थ सुभिन्न विधिक इकाई होना प्रत्येक विद्यालय एक अलाभार्थ विधिक इकाई होगा और ऐसे विद्यालय के राजस्व के किसी भी अधिशेष भाग का, यदि कोई हो, अधिनियम के अधीन उसकी संक्रियाओं के संबंध में सभी व्ययों को चुकाने के पश्चात् उस विद्यालय की अभिवृद्धि और विकास या उनमें अनुसंधान करने से भिन्न किसी प्रयोजन के लिए विनिधान नहीं किया जाएगा।
- 11. कुलाध्यक्ष (1) भारत का राष्ट्रपति प्रत्येक विद्यालय का कुलाध्यक्ष होगा ।
- (2) कुलाध्यक्ष किसी विद्यालय के कार्य और प्रगति का पुनर्विलोकन करने के लिए और उसके कार्यकलापों की जांच करने के लिए और उन पर रिपोर्ट देने के लिए, एक या अधिक व्यक्तियों को ऐसी रीति से नियुक्त कर सकेगा, जैसे कुलाध्यक्ष निदेश दे।
- (3) ऐसी किसी रिपोर्ट की प्राप्ति पर, कुलाध्यक्ष ऐसी कार्रवाई और ऐसे निदेश जारी कर सकेगा जो वह रिपोर्ट में वर्णित किन्हीं विषयों की बाबत आवश्यक समझे और विद्यालय ऐसे निदेशों का युक्तियुक्त समय के भीतर पालन करने के लिए आबद्ध होगा।

अध्याय 3

विद्यालय के प्राधिकारी

- **12. विद्यालय के प्राधिकारी** किसी विद्यालय के निम्नलिखित प्राधिकारी होंगे, अर्थातु :-
 - (क) शासक बोर्ड ;
 - (ख) सिनेट ; और
 - (ग) ऐसे अन्य प्राधिकारी, जिन्हें परिनियमों द्वारा विद्यालय के प्राधिकारी घोषित किया जाए ।
- 13. शासक बोर्ड (1) प्रत्येक विद्यालय का शासक बोर्ड उस विद्यालय का प्रधान कार्यपालक निकाय होगा ।

- (2) प्रत्येक विद्यालय का शासक बोर्ड निम्नलिखित सदस्यों से मिलकर बनेगा, अर्थात् :-
 - (क) अध्यक्ष, जिसकी नियुक्ति कुलाध्यक्ष द्वारा केन्द्रीय सरकार द्वारा सिफारिश किए गए तीन नामों के एक पैनल में से की जाएगी, जो कि एक विख्यात वास्तुविद् या योजनाकार होगा ;
 - (ख) संबंधित राज्य सरकार या संघ राज्यक्षेत्र का, जिसमें विद्यालय स्थित है, तकनीकी शिक्षा या उच्चतर शिक्षा का प्रधान सचिव या सचिव ;
 - (ग) नगर योजनाकार संस्थान, भारत से एक प्रतिनिधि, जिसे नगर योजनाकार संस्थान, भारत के अध्यक्ष द्वारा नामनिर्दिष्ट किया जाएगा ;
 - (घ) वास्तुकला परिषद् से एक प्रतिनिधि, जिसे वास्तुकला परिषद् के अध्यक्ष द्वारा नामनिर्दिष्ट किया जाएगा ;
 - (ङ) अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् से एक प्रतिनिधि, जिसे अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् के अध्यक्ष द्वारा नामनिर्दिष्ट किया जाएगा ;
 - (च) विश्वविद्यालय अनुदान आयोग का एक प्रतिनिधि ;
 - (छ) वास्तुकला या भू-दृश्य वास्तुकला या नगरीय डिजाइन के व्यवसायों से एक विशेषज्ञ तथा नगरीय और प्रादेशिक योजना से एक विशेषज्ञ, जिसे योजना और वास्तुकला विद्यालय परिषद् द्वारा नामनिर्दिष्ट किया जाएगा;
 - (ज) सिनेट से दो प्रतिनिधि, योजना विभाग और वास्तुकला विभाग, दोनों से चक्रानुक्रम द्वारा, ज्येष्ठता क्रम में, दो वर्ष की अवधि के लिए एक-एक प्रतिनिधि;
 - (झ) दो व्यक्ति, जो भारत सरकार के संयुक्त सचिव की पंक्ति से नीचे के न हों, जिन्हें केन्द्रीय सरकार द्वारा तकनीकी शिक्षा और वित्त से संबद्ध व्यक्तियों या उनके नामनिर्देशितियों में से नामनिर्दिष्ट किया जाएगा, पदेन :
 - (ञ) एक व्यक्ति, जो भारत सरकार के संयुक्त सचिव की पंक्ति

से नीचे का न हो, जिसे शहरी विकास मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा नामनिर्दिष्ट किया जाएगा ;

- (ट) विद्यालय का निदेशक, सदस्य, पदेन ;
- (ठ) विद्यालय का कुल-सचिव बोर्ड के सचिव के रूप में कार्य करेगा ।
- 14. बोर्ड के सदस्यों की पदावधि, उनके बीच रिक्तियां और उनको संदेय भत्ते इस धारा में जैसा अन्यथा उपबंधित हैं, उसके सिवाय,
 - (क) बोर्ड के अध्यक्ष या किन्हीं अन्य सदस्यों की पदावधि, उसके नामनिर्देशन की तारीख से, पांच वर्ष की होगी ;
 - (ख) किसी पदेन सदस्य की पदाविध तब तक बनी रहेगी जब तक वह उस पद को, जिसके आधार पर वह ऐसा सदस्य है, धारण किए रहता है:
 - (ग) धारा 13 के खंड (ज) के अधीन नामनिर्दिष्ट किसी सदस्य की पदावधि उसके नामनिर्देशन की तारीख से दो वर्ष या उसके पद धारण करने तक, इनमें से जो भी पूर्वतर हो, की होगी ;
 - (घ) किसी सदस्य की आकस्मिक रिक्ति धारा 13 के उपबंधों के अनुसार भरी जाएगी ;
 - (ङ) किसी आकस्मिक रिक्ति को भरने के लिए नामनिर्दिष्ट किसी सदस्य की पदावधि उस सदस्य के, जिसके स्थान पर उसे नामनिर्दिष्ट किया गया है, शेष कार्यकाल तक के लिए बनी रहेगी; और
 - (च) बोर्ड के सदस्य बोर्ड की या विद्यालय द्वारा बुलाई गई बैठकों में भाग लेने के लिए विद्यालय से ऐसे भत्तों के, यदि कोई हों, हकदार होंगे, जो परिनियमों द्वारा विनिर्दिष्ट किए जाएं, किन्तु धारा 13 की उपधारा (2) के खंड (ज), खंड (ट) और खंड (ठ) में निर्दिष्ट सदस्यों से भिन्न कोई सदस्य इस खंड के कारण किसी वेतन का हकदार नहीं होगा।
- **15. बोर्ड की शक्तियां और कृत्य** (1) इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, प्रत्येक विद्यालय का बोर्ड, विद्यालय के

कार्यकलापों के साधारण अधीक्षण, निदेशन और नियंत्रण के लिए उत्तरदायी होगा और उसे विद्यालय की वे सभी शक्तियां प्राप्त होंगी जिनके लिए इस अधिनियम, परिनियमों और अध्यादेशों द्वारा अन्यथा उपबंध नहीं किया गया है और उसे सिनेट के कार्यों का पुनर्विलोकन करने की शक्ति होगी।

- (2) प्रत्येक विद्यालय के बोर्ड को, उपधारा (1) के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, निम्नलिखित शक्तियां प्राप्त होंगी, अर्थात् :—
 - (क) विद्यालय के प्रशासन और कार्यकरण से संबंधित नीति विषयक प्रश्नों का विनिश्चय करना ;
 - (ख) विभागों, संकायों अथवा अध्ययन विद्यालयों की स्थापना करना तथा विद्यालय में अध्ययन कार्यक्रम और पाठ्यक्रम आरंभ करना ;
 - (ग) ऐसे विद्यालय के प्रशासन, प्रबंधन और संक्रियाओं को शासित करने संबंधी परिनियम बनाना :
 - (घ) विद्यालय के शैक्षणिक और गैर-शैक्षणिक अनुभाग में व्यक्तियों को नियुक्त करना ;
 - (ङ) अध्यादेशों पर विचार करना और उन्हें उपांतरित या रद्द करना ;
 - (च) विद्यालय की वार्षिक, रिपोर्ट, संपरीक्षित लेखाओं और अगले वित्तीय वर्ष के बजट प्राक्कलनों पर विचार करना तथा ऐसे संकल्प पारित करना जो वह उचित समझे और उन्हें अपनी विकास योजनाओं के विवरण के साथ परिषद् को प्रस्तुत करना ;
 - (छ) ऐसे विद्यालय में अध्यापन और अन्य पदों पर नियुक्ति के लिए, परिनियमों द्वारा, अर्हताओं, मापदंडों और प्रक्रियाओं का उपबंध करना ;
 - (ज) ऐसी अन्य शक्तियों का प्रयोग करना और ऐसे अन्य कर्तव्यों का पालन करना जो उसे इस अधिनियम या परिनियमों द्वारा प्रदत्त की जाएं या उस पर अधिरोपित किए जाएं।
- (3) बोर्ड को उतनी समितियां नियुक्त करने की शक्ति होगी, जितनी वह इस अधिनियम के अधीन अपनी शक्तियों के प्रयोग और अपने कर्तव्यों

के पालन के लिए आवश्यक समझे ।

- (4) बोर्ड, निदेशक के कार्यपालन का, विद्यालय के उद्देश्यों की पूर्ति के संदर्भ में उसके नेतृत्व के प्रति विनिर्दिष्ट निर्देश करते हुए, वार्षिक पुनर्विलोकन कराएगा ।
- (5) बोर्ड, शक्तियों के प्रयोग और कृत्यों के निर्वहन में सिनेट और विद्यालय के, यथास्थिति, विभागों या संकायों को शैक्षणिक मामलों में स्वायतत्ता प्रदान करने का यथासंभव प्रयास करेगा।
- (6) जहां निदेशक या अध्यक्ष की राय में स्थिति इतनी आपातिक है कि विद्यालय के हित में तुरन्त विनिश्चय किए जाने की आवश्यकता है, वहां अध्यक्ष, निदेशक की सिफारिश पर, अपनी राय में उन आधारों को अभिलेखबद्ध करके, ऐसे आदेश जारी कर सकेगा जो आवश्यक हों :

परन्तु ऐसे आदेशों को बोर्ड की अगली बैठक में उसके अनुसमर्थन के लिए प्रस्तुत किया जाएगा ।

- **16. सिनेट** (1) प्रत्येक विद्यालय की सिनेट निम्नलिखित व्यक्तियों से मिलकर बनेगी, अर्थात् :—
 - (क) विद्यालय का निदेशक, सिनेट का अध्यक्ष पदेन ;
 - (ख) ख्याति प्राप्त शिक्षाविदों या विख्यात वृत्तिकों में से पांच ऐसे व्यक्ति, जो विद्यालय की सेवा में न हों, जिन्हें शासक बोर्ड के अध्यक्ष द्वारा नामनिर्दिष्ट किया जाएगा ;
 - (ग) नगर योजनाकार संस्थान, भारत का एक नामनिर्देशिती ;
 - (घ) वास्तुकला परिषद् का एक नामनिर्देशिती ;
 - (ङ) अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् का एक नामनिर्देशिती ;
 - (च) शैक्षणिक अनुसंधान, छात्र क्रियाकलाप, संकाय कल्याण विद्यालय की योजना और विकास का भारसाधक संकायाध्यक्ष ;
 - (छ) सभी विभागाध्यक्ष ;
 - (ज) विभागाध्यक्षों से भिन्न सभी आचार्य ;

(झ) विद्यालय के सह-आचार्यों और सहायक आचार्यों का प्रतिनिधित्व करने वाले अध्यापन कर्मचारिवृन्द के, चक्रानुक्रम से, दो वर्ष की अवधि के लिए, चार सदस्य :

परन्तु विद्यालय का कोई कर्मचारी खंड (ख), खंड (ग), खंड (घ) और खंड (ड) में निर्दिष्ट सदस्यता के लिए पात्र नहीं होगा ।

- (2) सिनेट के पदेन सदस्यों से भिन्न सदस्यों की पदाविध दो वर्ष की होगी ।
- 17. सिनेट के कृत्य (1) इस अधिनियम, परिनियमों और अध्यादेशों के उपबंधों के अधीन रहते हुए, विद्यालय की सिनेट विद्यालय की प्रधान शिक्षण निकाय होगी और विद्यालय में शिक्षण, शिक्षा और परीक्षा के स्तर बनाए रखने के लिए उत्तरदायी होगी और उसे ऐसी अन्य शक्तियां प्राप्त होंगी और वह ऐसे अन्य कर्तव्यों का पालन करेगी जो परिनियमों द्वारा उसे प्रदत्त की जाएं या उस पर अधिरोपित किए जाएं।
- (2) उपधारा (1) के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, सिनेट को निम्नलिखित शक्तियां प्राप्त होंगी, अर्थात् :-
 - (क) विद्यालय द्वारा चलाए जा रहे अध्ययन पाठयक्रमों या कार्यक्रमों के लिए मानदंड और प्रक्रिया विनिर्दिष्ट करना :
 - (ख) बोर्ड को अध्यापन और अन्य शैक्षणिक पदों का सृजन करने की सिफारिश करना, ऐसे पदों की संख्या और उपलब्धियों का अवधारण करना और शिक्षकों तथा अन्य शैक्षणिक पदों के कर्तव्यों और सेवा शर्तों को परिभाषित करना:
 - (ग) बोर्ड को नए अध्ययन कार्यक्रम और पाठयक्रम प्रारंभ करने की सिफारिश करना :
 - (घ) अध्ययन कार्यक्रमों और पाठयक्रमों की शैक्षणिक अन्तर्वस्तु बोर्ड को विनिर्दिष्ट करना और उसमें उपांतरण करना ;
 - (ङ) शैक्षणिक कैलेंडर विनिर्दिष्ट करना और डिग्रियां, डिप्लोमे और अन्य शैक्षणिक उपाधियां या अभिधान दिए जाने का अनुमोदन करना:

- (च) ऐसी अन्य शक्तियों का प्रयोग और ऐसे अन्य कृत्यों का निर्वहन करना जो परिनियमों द्वारा या बोर्ड द्वारा उसे सौंपे जाएं।
- **18. बोर्ड का अध्यक्ष –** (1) अध्यक्ष साधारणतया, बोर्ड की बैठक की और विद्यालय के दीक्षांत समारोहों की अध्यक्षता करेगा ।
- (2) अध्यक्ष का यह सुनिश्चित करने का कर्तव्य होगा कि बोर्ड द्वारा किए गए विनिश्चयों को कार्यान्वित किया जाए ।
- (3) अध्यक्ष ऐसी अन्य शक्तियों का प्रयोग और ऐसे अन्य कर्तव्यों का पालन करेगा जो इस अधिनियम या परिनियमों द्वारा उसे सौंपे जाएं।
- 19. निदेशक (1) विद्यालय का निदेशक केन्द्रीय सरकार द्वारा, कुलाध्यक्ष के पूर्वानुमोदन से, सेवा के ऐसे निबंधनों और शर्तों पर नियुक्त किया जाएगा जो परिनियमों द्वारा उपबंधित की जाएं।
- (2) निदेशक, विद्यालय का प्रधान शैक्षणिक और कार्यपालक अधिकारी होगा और बोर्ड तथा सिनेट के विनिश्चयों के क्रियान्वयन तथा विद्यालय के दिन-प्रतिदिन के प्रशासन के लिए उत्तरदायी होगा।
- (3) निदेशक ऐसी अन्य शक्तियों का प्रयोग और ऐसे अन्य कर्तव्यों का पालन करेगा जो इस अधिनियम या परिनियमों द्वारा उसे सौंपे जाएं अथवा बोर्ड या सिनेट अथवा अध्यादेशों द्वारा उसे प्रत्यायोजित किए जाएं।
- (4) निदेशक बोर्ड को वार्षिक रिपोर्टें तथा संपरीक्षित लेखा प्रस्तुत करेगा ।
- 20. कुल-सचिव (1) प्रत्येक विद्यालय का कुल-सचिव ऐसे निबंधनों तथा शर्तों पर नियुक्त किया जाएगा जो परिनियमों द्वारा अधिकथित की जाएं और वह विद्यालय के अभिलेखों, उसकी सामान्य मुद्रा, निधियों और विद्यालय की ऐसी अन्य संपत्ति का अभिरक्षक होगा, जो बोर्ड उसके भारसाधन में सुपुर्द करे।
- (2) कुल-सचिव बोर्ड, सिनेट और ऐसी समितियों के, जो परिनियमों द्वारा विहित की जाएं, सचिव के रूप में कार्य करेगा ।
- (3) कुल-सचिव अपने कृत्यों के उचित निर्वहन के लिए निदेशक के प्रति उत्तरदायी होगा ।

- (4) कुल-सचिव ऐसी अन्य शक्तियों का प्रयोग और ऐसे अन्य कर्तव्यों का पालन करेगा जो इस अधिनियम या परिनियमों द्वारा या निदेशक द्वारा उसे सौंपे जाएं।
- 21. अन्य प्राधिकारी और अधिकारी ऊपर वर्णित प्राधिकारियों और अधिकारियों से भिन्न प्राधिकारियों और अधिकारियों की शक्तियों और कर्त्तव्यों का अवधारण परिनियमों द्वारा किया जाएगा ।
- 22. विद्यालय के कार्यपालन का पुनर्विलोकन (1) प्रत्येक विद्यालय, इस अधिनियम के अधीन विद्यालय की स्थापना और उसके निगमन से सात वर्ष के भीतर और तत्पश्चात् प्रत्येक पांचवें वर्ष की समाप्ति पर, केन्द्रीय सरकार के पूर्वानुमोदन से, उक्त अविध में विद्यालय के उद्देश्यों की पूर्ति में उसके कार्यपालन का मूल्यांकन और पुनर्विलोकन करने के लिए एक समिति का गठन करेगा।
- (2) उपधारा (1) के अधीन गठित समिति में शैक्षणिक या उद्योग जगत के माने हुए ख्याति प्राप्त सदस्य होंगे जिन्हें ज्ञान के ऐसे क्षेत्रों से लिया जाएगा जिनकी उस विद्यालय में अध्यापन, विद्यार्जन और अनुसंधान से सुसंगति है।
- (3) समिति, विद्यालय के कार्यपालन का निर्धारण करेगी और बोर्ड को परिनियमों में अधिकथित उपबंधों के अनुसार सिफारिशें करेगी ।
- 23. केन्द्रीय सरकार द्वारा अनुदान विद्यालयों को इस अधिनियम के अधीन अपने कृत्यों का दक्षतापूर्ण निर्वहन करने में समर्थ बनाने के प्रयोजन के लिए, केन्द्रीय सरकार, संसद् द्वारा इस निमित्त विधि द्वारा किए गए सम्यक् विनियोजन के पश्चात् प्रत्येक विद्यालय को प्रत्येक वित्तीय वर्ष में ऐसी धनराशि का ऐसी रीति से, संदाय करेगी, जो वह उचित समझे ।

अध्याय 4

लेखा और संपरीक्षा

- **24. विद्यालय की निधि** (1) प्रत्येक विद्यालय एक निधि रखेगा, जिसमें निम्नलिखित जमा किए जाएंगे,
 - (क) केन्द्रीय सरकार द्वारा दिए गए सभी धन ;
 - (ख) विद्यालय द्वारा प्राप्त सभी फीसें तथा अन्य प्रभार ;

- (ग) विद्यालय द्वारा अनुदान, दान, संदान, उपकृति, वसीयत अथवा अंतरणों के रूप में प्राप्त सभी धन ;
- (घ) विद्यालय द्वारा किए गए अनुसंधान से उद्भूत बौद्धिक संपदा के उपयोग से या उसके द्वारा सलाहकारी या परामर्शकारी सेवाओं का उपबंध करने से प्राप्त सभी धन ; और
- (ङ) विद्यालय द्वारा किसी अन्य रीति या किसी अन्य स्रोत से प्राप्त सभी धन ।
- (2) प्रत्येक विद्यालय की निधि में जमा किए गए सभी धन, ऐसे बैंकों में जमा या ऐसी रीति से विनिहित किए जाएंगे, जो विद्यालय वित्त समिति और शासी निकाय के अनुमोदन से विनिश्चित करे।
- (3) किसी विद्यालय की निधि का उपयोग विद्यालय के व्ययों को, जिनके अन्तर्गत इस अधिनियम के अधीन उसकी शक्तियों के प्रयोग में और कृत्यों के निर्वहन में किए गए व्यय भी हैं, चुकाने के लिए किया जाएगा।
- 25. लेखा और संपरीक्षा (1) प्रत्येक विद्यालय उचित लेखा और अन्य सुसंगत अभिलेख रखेगा और लेखाओं का एक वार्षिक विवरण, जिसके अन्तर्गत तुलनपत्र भी है, ऐसे प्ररूप और लेखांकन मानक में तैयार करेगा जैसा केन्द्रीय सरकार द्वारा, भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक से परामर्श करके, अधिसूचना द्वारा, विनिर्दिष्ट किया जाए।
- (2) जहां विद्यालय के आय-व्यय का विवरण और तुलनपत्र लेखांकन मानकों के अनुरूप नहीं है, वहां विद्यालय अपने आय-व्यय के विवरण और तुलनपत्र में निम्नलिखित का प्रकटन करेगा, अर्थात् :-
 - (क) लेखांकन मानकों से विचलन ;
 - (ख) ऐसे विचलन के कारण ; और
 - (ग) ऐसे विचलन से उद्भूत वित्तीय प्रभाव, यदि कोई हो ।
- (3) प्रत्येक विद्यालय के लेखाओं की संपरीक्षा भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक द्वारा की जाएगी और ऐसी संपरीक्षा के संबंध में संपरीक्षा दल द्वारा उपगत कोई व्यय विद्यालय द्वारा भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक को संदेय होगा।

- (4) भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक और विद्यालय के लेखाओं की संपरीक्षा के संबंध में उसके द्वारा नियुक्त किसी व्यक्ति के उस संपरीक्षा के संबंध में वे ही अधिकार, विशेषाधिकार और प्राधिकार होंगे जो भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक के सरकारी लेखाओं की संपरीक्षा के संबंध में होते हैं और उसे विशिष्ट रूप से बहियां, लेखे, संबंधित वाउचर तथा अन्य दस्तावेज और कागजपत्र पेश किए जाने की मांग करने और विद्यालय के कार्यालयों का निरीक्षण करने का अधिकार होगा।
- (5) भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक द्वारा या इस निमित्त उसके द्वारा नियुक्त किसी अन्य व्यक्ति द्वारा प्रत्येक विद्यालय के यथाप्रमाणित लेखे, उनकी संपरीक्षा रिपोर्ट के साथ, प्रतिवर्ष केन्द्रीय सरकार को अग्रेषित किए जाएंगे और वह सरकार उन्हें ऐसी प्रक्रिया के अनुसार, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा अधिकथित की जाए, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवाएगी।
- 26. पेंशन और भविष्य निधि (1) प्रत्येक विद्यालय अपने कर्मचारियों के फायदे के लिए ऐसी रीति में और ऐसी शर्तों के अधीन रहते हुए, जो परिनियमों द्वारा विहित की जाएं, ऐसी भविष्य निधि और पेंशन निधि स्थापित कर सकेगा या ऐसी बीमा स्कीम का उपबंध कर सकेगा, जो वह ठीक समझे ।
- (2) जहां कोई ऐसी भविष्य निधि या पेंशन निधि इस प्रकार स्थापित की गई है, वहां केन्द्रीय सरकार यह घोषित कर सकेगी कि भविष्य निधि अधिनियम, 1925 (1925 का 19) के उपबंध ऐसी निधि को इस प्रकार लागू होंगे मानो वह कोई सरकारी भविष्य निधि हो ।
- **27.** नियुक्तियां प्रत्येक विद्यालय के कर्मचारिवृन्द की सभी नियुक्तियां, निदेशक की नियुक्ति के सिवाय परिनियमों में अधिकथित प्रक्रिया के अनुसार निम्नलिखित द्वारा की जाएंगी,—
 - (क) बोर्ड द्वारा, यदि नियुक्ति शैक्षणिक कर्मचारिवृन्द के संबंध में सहायक आचार्य के पद पर की जाती है या यदि नियुक्ति गैर-शैक्षणिक कर्मचारिवृन्द के संबंध में ऐसे प्रत्येक काडर में की जाती है, जिसका अधिकतम वेतनमान समूह 'क' अधिकारियों के विद्यमान ग्रेड वेतनमान से अधिक है ;
 - (ख) किसी अन्य दशा में, निदेशक द्वारा ।

- 28. परिनियम इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए परिनियमों में निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध किया जा सकेगा, अर्थात् :—
 - (क) सम्मानिक डिग्रियां प्रदान किया जाना ;
 - (ख) शिक्षण विभागों और अनुसंधान केन्द्रों का बनाया जाना ;
 - (ग) विद्यालय में अध्ययन पाठ्यक्रमों के लिए और विद्यालय की डिग्री और डिप्लोमा परीक्षाओं में प्रवेश के लिए प्रभारित की जाने वाली फीस:
 - (घ) अध्येतावृत्तियों, छात्रवृत्तियों, छात्र सहायता वृत्तियों, पदकों और पुरस्कारों का संस्थित किया जाना ;
 - (ङ) विद्यालय के अधिकारियों की पदावधि और नियुक्ति की पद्धति :
 - (च) विद्यालय के शिक्षकों की अर्हताएं ;
 - (छ) विद्यालय के शिक्षकों और अन्य कर्मचारिवृन्द का वर्गीकरण, नियुक्ति की पद्धति और सेवा के निबंधनों और शर्तों का अवधारण ;
 - (ज) विद्यालय के अधिकारियों, शिक्षकों और अन्य कर्मचारिवृन्द के फायदे के लिए पेंशन, बीमा और भविष्य निधियों की स्थापना :
 - (झ) विद्यालय के प्राधिकारियों का गठन, शक्तियां और कर्तव्य ;
 - (ञ) हालों और छात्रावासों की स्थापना और उनका अनुरक्षण ;
 - (ट) विद्यालय के छात्रों के निवास की शर्तें और हालों तथा छात्रावासों में निवास के लिए फीस और अन्य प्रभारों का उद्ग्रहण ;
 - (ठ) बोर्ड के अध्यक्ष और सदस्यों को संदत्त किए जाने वाले भत्ते ;
 - (ड) बोर्ड के आदेशों और विनिश्चयों का अधिप्रमाणन ; और
 - (ढ) बोर्ड, सिनेट या किसी सिमति की बैठकें, ऐसी बैठकों में गणपूर्ति और उनके कार्य संचालन में अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया।
- 29. परिनियम किस प्रकार बनाए जाएंगे (1) प्रत्येक विद्यालय के प्रथम परिनियम केन्द्रीय सरकार द्वारा कुलाध्यक्ष के अनुमोदन से विरचित

किए जाएंगे और उनकी एक प्रति यथाशीघ्र संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखी जाएगी ।

- (2) बोर्ड, समय-समय पर नए या अतिरिक्त परिनियम बना सकेगा या इस धारा में उपबंधित रीति में परिनियमों को संशोधित या निरसित कर सकेगा ।
- (3) प्रत्येक नए परिनियम या परिनियमों में परिवर्धन या परिनियमों के किसी संशोधन या निरसन के लिए कुलाध्यक्ष का पूर्व अनुमोदन अपेक्षित होगा, जो उसके लिए अनुमित दे सकेगा या अनुमित रोक सकेगा या उसे बोर्ड को विचारार्थ भेज सकेगा।
- (4) नए परिनियम या किसी विद्यमान परिनियम का संशोधन या निरसन करने वाला कोई परिनियम तब तक विधिमान्य नहीं होगा जब तक कुलाध्यक्ष द्वारा उसे अनुमित नहीं दे दी जाती है:

परन्तु केन्द्रीय सरकार कुलाध्यक्ष के पूर्वानुमोदन से विद्यालय के लिए परिनियम बना सकेगी या उनमें संशोधन कर सकेगी, यदि ऐसा किया जाना एकरूपता के लिए अपेक्षित हो और उसकी एक प्रति यथाशीघ्र संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखी जाएगी।

- **30. अध्यादेश** इस अधिनियम और परिनियमों के उपबंधों के अधीन रहते हुए, प्रत्येक विद्यालय के अध्यादेशों में निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध किया जा सकेगा, अर्थात :—
 - (क) विद्यालय में छात्रों का प्रवेश ;
 - (ख) विद्यालय की सभी डिग्रियों और डिप्लोमाओं के लिए अधिकथित किए जाने वाले अध्ययन पाठ्यक्रम ;
 - (ग) वे शर्तें जिनके अधीन छात्रों को डिग्री या डिप्लोमा पाठ्यक्रमों में और विद्यालय की परीक्षाओं में प्रवेश दिया जाएगा और वे डिग्री और डिप्लोमा के लिए पात्र होंगे;
 - (घ) अध्येतावृत्तियों, छात्रवृत्तियों, छात्र सहायता वृत्तियां, पदक और पुरस्कार प्रदान किए जाने की शर्तें ;
 - (ङ) परीक्षा निकायों, परीक्षकों और अनुसीमकों की नियुक्ति की शर्तें और ढंग तथा उनके कर्तव्य :

- (च) परीक्षाओं का संचालन ;
- (छ) विद्यालय के छात्रों में अनुशासन बनाए रखना ; और
- (ज) कोई अन्य विषय, जिसके लिए इस अधिनियम या परिनियमों द्वारा, अध्यादेशों में उपबंध किया जाना है या किया जाए ।
- 31. अध्यादेश किस प्रकार बनाए जाएंगे (1) इस धारा में जैसा अन्यथा उपबंधित है उसके सिवाय अध्यादेश सिनेट द्वारा बनाए जाएंगे।
- (2) सिनेट द्वारा बनाए गए सभी अध्यादेश ऐसी तारीख से प्रभावी होंगे, जो वह निदिष्ट करे, किन्तु इस प्रकार बनाया गया प्रत्येक अध्यादेश, यथाशीघ्र बोर्ड को प्रस्तुत किया जाएगा और बोर्ड द्वारा उस पर उसकी आगामी बैठक में विचार किया जाएगा।
- (3) बोर्ड को ऐसे किसी अध्यादेश को संकल्प द्वारा उपांतरित या रद्द करने की शक्ति होगी और ऐसे संकल्प की तारीख से ऐसा अध्यादेश, यथास्थिति, तदनुसार उपांतरित या रद्द हो जाएगा।
- 32. माध्यस्थम् अधिकरण (1) विद्यालय और उसके किन्हीं कर्मचारियों के बीच किसी संविदा से उद्भूत होने वाला कोई विवाद संबद्ध कर्मचारी के अनुरोध पर या विद्यालय की प्रेरणा पर ऐसे किसी माध्यस्थम् अधिकरण को, जिसमें विद्यालय द्वारा नियुक्त एक सदस्य, कर्मचारी द्वारा नामनिर्दिष्ट एक सदस्य तथा कुलाध्यक्ष द्वारा नियुक्त एक अधिनिर्णायक हो, निर्दिष्ट किया जाएगा ।
- (2) अधिकरण का विनिश्चय अंतिम होगा और उसे किसी न्यायालय में प्रश्नगत नहीं किया जाएगा ।
- (3) ऐसे किसी मामले की बाबत, जिसे उपधारा (1) द्वारा माध्यस्थम् अधिकरण को निर्दिष्ट किया जाना अपेक्षित है, किसी न्यायालय में कोई वाद या कार्यवाही नहीं होगी ।
- (4) माध्यस्थम् अधिकरण को अपनी स्वयं की प्रक्रिया विनियमित करने की शक्ति होगी :

परंतु अधिकरण ऐसी प्रक्रिया बनाते समय नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों को ध्यान में रखेगा ।

(5) माध्यस्थम् से संबंधित तत्समय प्रवृत्त किसी विधि में अन्तर्विष्ट कोई बात इस धारा के अधीन माध्यस्थमों को लागू नहीं होगी ।

अध्याय 5

परिषद्

- 33. विद्यालयों के लिए परिषद् की स्थापना (1) ऐसी तारीख से, जो केन्द्रीय सरकार, अधिसूचना द्वारा, इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे, अनुसूची के स्तंभ (3) में विनिर्दिष्ट सभी विद्यालयों के लिए परिषद् नामक एक केन्द्रीय निकाय की स्थापना की जाएगी ।
 - (2) परिषद् निम्नलिखित सदस्यों से मिलकर बनेगी, अर्थात् :--
 - (क) तकनीकी शिक्षा का प्रशासनिक नियंत्रण रखने वाले केन्द्रीय सरकार के मंत्रालय या विभाग का भारसाधक मंत्री, पदेन, अध्यक्ष :
 - (ख) भारत की संसद् के दो सदस्य (लोक सभा अध्यक्ष द्वारा नामनिर्दिष्ट किया जाने वाला एक सदस्य और राज्य सभा के सभापति द्वारा नामनिर्दिष्ट किए जाने वाला एक सदस्य), पदेन ;
 - (ग) तकनीकी शिक्षा का प्रशासनिक नियंत्रण रखने वाले केन्द्रीय सरकार के मंत्रालय या विभाग का भारसाधक सचिव, भारत सरकार, पदेन, उपाध्यक्ष ;
 - (घ) प्रत्येक बोर्ड का अध्यक्ष, पदेन ;
 - (ड) प्रत्येक विद्यालय का निदेशक, पदेन ;
 - (च) अध्यक्ष, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, पदेन ;
 - (छ) प्रधान, वास्तुकला परिषद्, नई दिल्ली, पदेन ;
 - (ज) प्रधान, नगर योजनाकार संस्थान, भारत, पदेन ;
 - (झ) अध्यक्ष, भारतीय वास्तुविद् संस्थान, पदेन ;
 - (ञ) प्रधान, भारतीय सर्वेक्षक संस्था, पदेन ;
 - (ट) शहरी विकास और रक्षा से संबद्ध केन्द्रीय सरकार के मंत्रालयों या विभागों का प्रतिनिधित्व करने के लिए भारत सरकार के दो सचिव, पदेन:
 - (ठ) अध्यक्ष, अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद्, पदेन ;
 - (ड) कुलाध्यक्ष द्वारा नामनिर्दिष्ट किए जाने वाले तीन व्यक्ति, जिनमें से कम से कम एक महिला होगी और एक नगरीय और

प्रादेशिक योजना से होगा जिनके पास वास्तुकला या भू-दृश्य वास्तुकला या नगरीय डिजाइन की बाबत विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव हो, पदेन ;

- (ढ) राज्य सरकार के, जहां विद्यालय अवस्थित हैं, तकनीकी शिक्षा से संबद्ध उस सरकार के मंत्रालयों या विभागों में से दो सचिव, पदेन:
- (ण) केन्द्रीय सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय के संबद्घ विभाग का वित्तीय सलाहकार, पदेन : और
- (त) तकनीकी शिक्षा का प्रशासनिक नियंत्रण रखने वाले केन्द्रीय सरकार के मंत्रालय या विभाग में का एक अधिकारी, जो भारत सरकार के संयुक्त सचिव की पंक्ति से नीचे का न हो, पदेन, सदस्य-सचिव।
- (3) परिषद् का एक सचिवालय होगा, जिसमें परिनियमों द्वारा नियुक्त किए जाने वाले पदधारी होंगे ।
- (4) परिषद्, अपने कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों के निर्वहन में परिषद् की सहायता करने के लिए योजना और वास्तुकला विद्यालय परिषद् की एक स्थायी समिति का गठन कर सकेगी।
- 34. परिषद् के सदस्यों की पदावधि, उनके बीच रिक्तियां और उनको संदेय भत्ते (1) इस धारा में जैसा अन्यथा उपबंधित है उसके सिवाय, परिषद् के किसी पदेन सदस्य से भिन्न सदस्य की पदावधि, अधिसूचना की तारीख से तीन वर्ष की होगी।
- (2) किसी पदेन सदस्य की पदाविध तब तक बनी रहेगी जब तक वह उस पद को, जिसके आधार पर वह ऐसा सदस्य है, धारण किए रहता है।
- (3) धारा 33 की उपधारा (2) के खंड (ख) के अधीन नामनिर्दिष्ट किसी सदस्य की पदावधि, जैसे ही वह उस सदन का, जिसने उसे निर्वाचित किया है, सदस्य नहीं रहता है, समाप्त हो जाएगी ।
- (4) किसी आकस्मिक रिक्ति को भरने के लिए परिषद् के किसी नामनिर्दिष्ट या निर्वाचित सदस्य की पदावधि उस सदस्य के, जिसके स्थान पर उसे नियुक्त किया गया है, शेष कार्यकाल तक के लिए बनी रहेगी।
 - (5) इस धारा में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, परिषद् का

कोई पदावरोही सदस्य, जब तक कि केन्द्रीय सरकार द्वारा अन्यथा निदेश न दिया जाए, तब तक पद धारण करता रहेगा जब तक कि कोई अन्य व्यक्ति उसके स्थान पर सदस्य के रूप में नियुक्त नहीं कर दिया जाता है।

- (6) परिषद् के सदस्य, परिषद् या उसकी समितियों की बैठकों में भाग लेने के लिए ऐसे यात्रा और अन्य भत्तों के हकदार होंगे जो विहित किए जाएं।
- **35. परिषद् के कृत्य** (1) परिषद् का यह साधारण कर्तव्य होगा कि वह सभी विद्यालयों के क्रियाकलापों का समन्वय करें।
- (2) उपधारा (1) के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, परिषद् निम्नलिखित का पालन करेगी, अर्थात् :-
 - (क) पाठ्यक्रमों की अवधि, विद्यालयों द्वारा प्रदान की जाने वाली डिग्रियों और अन्य शैक्षणिक उपाधियों, प्रवेश के मानकों और अन्य शैक्षणिक विषयों से संबंधित नीतिगत विषयों पर सलाह देना ;
 - (ख) केन्द्रीय सरकार को नए योजना और वास्तुकला विद्यालयों की स्थापना किए जाने संबंधी प्रस्तावों की सिफारिश करना :
 - (ग) विद्यालयों के सामान्य हित के ऐसे विषयों पर, जो किसी विद्यालय द्वारा उसे निर्दिष्ट किए जाएं, विचार-विमर्श करना ;
 - (घ) कर्मचारियों के काडर, उनकी भर्ती की पद्धतियों और सेवा-शर्तों के, छात्रवृत्तियां और निःशुल्क वृत्तियां संस्थित करने के, फीस के उद्ग्रहण तथा सामान्य हित के अन्य विषयों के संबंध में नीति अधिकथित करना :
 - (ङ) प्रत्येक विद्यालय की विकास योजनाओं की परीक्षा करना और उनमें से उनका अनुमोदन करना जो आवश्यक समझी जाएं और ऐसी अनुमोदित योजनाओं की वित्तीय विवक्षाओं को भी मोटे तौर पर उपदर्शित करना ;
 - (च) इस अधिनियम के अधीन कुलाध्यक्ष द्वारा पालन किए जाने वाले किसी कृत्य की बाबत उसे सलाह, यदि ऐसी अपेक्षा की जाए, देना ; और
 - (छ) ऐसे अन्य कृत्यों का पालन करना जो केन्द्रीय सरकार द्वारा उसे निर्दिष्ट किए जाएं ;

परन्तु इस धारा की कोई बात, किसी विद्यालय के बोर्ड या सिनेट या अन्य प्राधिकारियों में निहित शक्तियों और कृत्यों को अल्पीकृत नहीं करेगी ।

- **36. परिषद् का अध्यक्ष –** (1) परिषद् का अध्यक्ष, सामान्यतया, परिषद् के अधिवेशनों की अध्यक्षता करेगा : परन्तु उसकी अनुपस्थिति में, परिषद् का उपाध्यक्ष, परिषद् के अधिवेशनों की अध्यक्षता करेगा ।
- (2) परिषद् के अध्यक्ष का यह कर्तव्य होगा कि वह यह सुनिश्चित करे कि परिषद् द्वारा किए गए विनिश्चयों को कार्यान्वित किया जाए ।
- (3) अध्यक्ष ऐसी शक्तियों का प्रयोग और ऐसे अन्य कर्तव्यों का पालन करेगा, जो इस अधिनियम द्वारा उसे सौंपे जाएं।
- (4) परिषद् का प्रत्येक वर्ष में एक बार अधिवेशन होगा और अपने अधिवेशनों में वह ऐसी प्रक्रिया का अनुसरण करेगी, जो विहित की जाए।
- 37. इस अध्याय के विषयों की बाबत नियम बनाने की शक्ति (1) केन्द्रीय सरकार, इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए, पूर्व प्रकाशन के पश्चात् अधिसूचना द्वारा, नियम बना सकेगी ।
- (2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियमों में निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों की बाबत उपबंध किया जा सकेगा, अर्थात्:—
 - (क) धारा 26 की उपधारा (1) के अधीन भविष्य निधि और पेंशन निधि या बीमा स्कीम का उपबंध करने की रीति और शर्तें ;
 - (ख) धारा 34 की उपधारा (6) के अधीन परिषद् या उसकी सिमतियों के अधिवेशनों में भाग लेने हेतु सदस्यों के लिए यात्रा और अन्य भत्ते ;
 - (ग) धारा 36 की उपधारा (4) के अधीन परिषद् के अधिवेशनों में अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया ।
- (3) इस अधिनियम के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा बनाया गया प्रत्येक नियम, बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो, कुल तीस दिन की अविध के लिए रखा जाएगा । यह अविध एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी । यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस नियम में कोई परिवर्तन करने के

लिए सहमत हो जाएं तो तत्पश्चात् वह ऐसे परिवर्तित रूप में ही प्रभावी होगा । यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएं कि वह नियम नहीं बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात् वह निष्प्रभाव हो जाएगा । किन्तु नियम के ऐसे परिवर्तित या निष्प्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकृल प्रभाव नहीं पड़ेगा ।

अध्याय 6

प्रकीर्ण

- 38. रिक्तियों आदि से कार्रवाइयों और कार्यवाहियों का अविधिमान्य न होना इस अधिनियम या परिनियमों के अधीन स्थापित परिषद् अथवा किसी विद्यालय या बोर्ड या सिनेट या किसी अन्य निकाय की कोई कार्रवाई केवल इस कारण अविधिमान्य नहीं होगी कि,—
 - (क) उसमें कोई रिक्ति है या उसके गठन में कोई त्रुटि है ; या
 - (ख) उसके सदस्य के रूप में कार्य करने वाले किसी व्यक्ति के निर्वाचन, नामनिर्देशन या नियुक्ति में कोई त्रुटि है; या
 - (ग) उसकी प्रक्रिया में ऐसी कोई अनियमितता है जो मामले के गुणागुण पर कोई प्रभाव नहीं डालती है।
- 39. केन्द्रीय सरकार को उपलब्ध कराई जाने वाली विवरणियां और सूचना प्रत्येक विद्यालय, केन्द्रीय सरकार को, अपनी नीतियों या क्रियाकलापों की बाबत ऐसी विवरणियां या अन्य सूचना देगा, जिसकी केन्द्रीय सरकार, संसद् में रिपोर्ट करने या नीति बनाने के प्रयोजन के लिए समय-समय पर अपेक्षा करे।
- **40.** किठनाइयों को दूर करने की शक्ति (1) यदि इस अधिनियम के उपबंधों को प्रभावी करने में कोई किठनाई उत्पन्न होती है तो केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में प्रकाशित आदेश द्वारा, ऐसे उपबंध कर सकेगी जो इस अधिनियम के उपबंधों से असंगत न हों और जो उसे उस किठनाई को दूर करने के लिए आवश्यक या समीचीन प्रतीत हों:

परंतु ऐसा कोई आदेश, उस तारीख से, जिसको इस अधिनियम को राष्ट्रपति की अनुमति प्राप्त होती है, दो वर्ष की अवधि की समाप्ति के पश्चात् नहीं किया जाएगा ।

- (2) इस धारा के अधीन किया गया प्रत्येक आदेश, किए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखा जाएगा ।
- 41. विद्यालय का, सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के अधीन लोक प्राधिकरण होना प्रत्येक विद्यालय को, सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 (2005 का 22) के उपबंध उसी प्रकार लागू होंगे मानो कि वह सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 की धारा 2 के खंड (ज) में परिभाषित कोई लोक प्राधिकरण हो ।
- **42. संक्रमणकालीन उपबंध** इस अधिनियम में किसी बात के होते हुए भी,
 - (क) इस अधिनियम के प्रारंभ के ठीक पूर्व प्रत्येक विद्यालय का शासक बोर्ड उसी रूप में तब तक ऐसे कार्य करता रहेगा जब तक कि इस अधिनियम के अधीन उस विद्यालय के लिए एक नए बोर्ड का गठन नहीं कर दिया जाता है, किन्तु इस अधिनियम के अधीन नए बोर्ड के गठन पर, ऐसे गठन के पूर्व पद धारण करने वाले बोर्ड के सदस्य पद धारण करने से प्रविरत हो जाएंगे :
 - (ख) इस अधिनियम के प्रारंभ के पूर्व प्रत्येक विद्यालय के संबंध में गठित प्रत्येक विद्या परिषद् को तब तक इस अधिनियम के अधीन गठित सिनेट समझा जाएगा जब तक कि इस अधिनियम के अधीन उस विद्यालय के लिए सिनेट का गठन नहीं कर दिया जाता है, किन्तु इस अधिनियम के अधीन नए सिनेट के गठन पर ऐसे गठन के पूर्व पद धारण करने वाले विद्या परिषद् के सदस्य पद धारण करने से प्रविरत हो जाएंगे :
 - (ग) इस अधिनियम के प्रारंभ के ठीक पूर्व प्रत्येक विद्यालय का शासक बोर्ड, वित्त समिति, विद्या परिषद्, कार्यकारी परिषद्, भवन और संकर्म समिति और ऐसी अन्य समितियां उस रूप में तब तक ऐसे कार्य करती रहेंगी जब तक इस अधिनियम के अधीन विद्यालय के लिए नए बोर्ड का गठन नहीं कर दिया जाता है, किन्तु इस अधिनियम के अधीन नए बोर्ड के गठन पर ऐसे गठन के पूर्व पद धारण करने वाले शासक बोर्ड, वित्त समिति, विद्या परिषद्, भवन और संकर्म समिति और ऐसी अन्य समितियों के सदस्य पद धारण करने से प्रविरत हो जाएंगे;

(घ) ऐसे किसी छात्र को, जिसने शैक्षणिक वर्ष 2008-2009 में या उसके पश्चात् में या उसके पश्चात् विद्यमान विद्यालय की कक्षाओं में प्रवेश लिया है या शैक्षणिक वर्ष 2011-2012 में या उसके पश्चात् पाठ्यक्रम पूरा किया है, धारा 7 की उपधारा (1) के खंड (ग) के प्रयोजन के लिए केवल तभी भोपाल और विजयवाड़ा स्थिति विद्यमान विद्यालयों के पाठ्यक्रमानुसार अध्ययन करने वाला समझा जाएगा यदि ऐसे छात्र को पहले से उसी पाठ्यक्रम के लिए डिग्री या डिप्लोमा प्रदान नहीं किया गया है।

अनुसूची [धारा 3 (ट) और धारा 4 देखिए]

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)
क्रम सं.	राज्य का नाम	विद्यमान विद्यालय का नाम	अवस्थिति	इस अधिनियम के अधीन सम्मिलित विद्यालय का नाम
1.	दिल्ली	योजना और वास्तुकला विद्यालय, जो सोसाइटी रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1860 (1860 का 21) के अधीन एक रजिस्ट्रीकृत सोसाइटी है ।	नई दिल्ली	योजना और वास्तुकला विद्यालय, नई दिल्ली
2.	मध्य प्रदेश	योजना और वास्तुकला विद्यालय, जो सोसाइटी रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1860 (1860 का 21) के अधीन एक रजिस्ट्रीकृत सोसाइटी है ।	भोपाल	योजना और वास्तुकला विद्यालय, भोपाल
3.	आंध्र प्रदेश	योजना और वास्तुकला विद्यालय, जो सोसाइटी रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1860 (1860 का 21) के अधीन एक रजिस्ट्रीकृत सोसाइटी है ।	विजयवाड़ा	योजना और वास्तुकला विद्यालय, विजयवाड़ा